

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182302

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—707—25-4-81—10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83
A 27 T

Accession No. G.H. 190

Author अग्निहोत्री, श्रीचन्द्र .

Title त्याग का मूल्य .

This book should be returned on or before the date last marked below

सरस्वती-सिरीज़ नं० ४५

त्याग का मूल्य

श्रीचन्द्र अग्निहोत्री



प्रकाशक

इंडियन प्रेस लिमिटेड

प्रयाग

G. H. 190

सरस्वती-सिरीज

स्थायी परामशदाता—डा० भगवानदास, पण्डित अमरनाथ झा
परमानंद, डा० प्राणनाथ विद्यालङ्कार, श्री सत्यदेव विद्यालङ्कार, १० डा
प्रसाद मिश्र, संत निहालसिंह, पं० लक्ष्मणनारायण गढ़, बाबू संपूर्ण
श्री बाबूराव विष्णुपराडकर, पण्डित केदारनाथ भट्ट, चौहान राजेन्द्र
श्री पदुमलाल पुत्रालाल बख्शी, श्री जैनेन्द्र कुमार, बाबू वृन्दावनलाल
मेठ गोविन्ददास, पण्डित क्षेत्रेश चटर्जी, डा० ईश्वरोप्रसाद, डा० रमा
त्रिपाठी, डा० परमात्माशरण, डा० बंनोप्रसाद, डा० रामप्रसाद त्रि
पण्डित रामनारायण मिश्र, श्री संतराम, पण्डित रामचन्द्र शर्मा, श्री ३
प्रसाद मौलवी फ़ाजिल, श्रीरायकृष्णदास, बाबू गोपालराम गहमरी, श्री २
नाथ “अशक”, डा० ताराचंद, श्री चन्द्र स विद्यालङ्कार, डा० गारख
डा० सत्यप्रकाश, श्री अनुकुलचन्द्र मुकजी, रायसाहब पण्डित श्री
चतुर्वेदी, रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, पण्डित सुमित्रानन्दन
पूर्यकान्त त्रिपाठी ‘निराला’, पं० नन्ददलारे बाजपेयी, पं० हजारी
पण्डित मोहनलाल महतो, श्रीमता महादेवा वमो, पण्डित अये
ध्याय ‘हरिऔध’, डा० पीताम्बरदास बडवाल, डा० ६
बाबू रामचन्द्र टंडन, पण्डित केशवप्रसाद मिश्र, बाबू कानि
कपूर, इत्यादि, इत्यादि ।

आधुनिक उपन्यास

त्याग का मूल्य

एक समस्यामूलक रोचक
सामाजिक उपन्यास ।

श्रीचन्द्र अमिहोत्री

त्याग का मूल्य

Checked 1969 (१)

लखनऊ के गणेशगंज मुहल्ले में एक दोतल्ला मकान में केशव अपने पढ़ने के कमरे में बैठा पढ़ने में लगा था। इसी समय एक सुन्दरी युवती दरवाजा खोलकर उसके पास में आकर खड़ी हो गई।

केशव ने एक क्षण के लिए पढ़ने में लगे मन को हटाकर कहा: “क्या है भाभी?”

युवती ने मीठी हँसी हँसते हुए कहा, “एक बात पूछनी थी। अगर गद्दी-सही बतलाओ, तो पूछूं।”

“क्या बात?”

“पहले बताओ सच कहोगे?”

केशव दर्शनशास्त्र के एक गम्भीर विषय का अध्ययन कर रहा था, जब देखा कि भाभी रामकली उससे भी गम्भीर विषय लिये खड़ी हैं, तो उनसे छुटकारे का कोई उपाय न देखकर धीरे-धीरे किताब बन्द कर कहा, “यदि कुछ न कहूँ, तो और बात, लेकिन यदि कहूँगा, तो झूठ न बोलूँगा। इसलिए बताओ तुम्हारा प्रश्न क्या है।”

रामकली के अधरों पर हँसी की एक रेखा खिच गई।

“मालती क्या तुम्हें पसन्द है?”

बात सुनकर केशव हँस पड़ा। कहा, “इसी के लिए इतनी लम्बी भूमिका? यह तो बहुत साधारण बात है। और इसका सही उत्तर क्यों न दूँगा?”

“पसन्द है?”

‘है’ कहकर केशव भाभी के मुँह की ओर देखने लगा।

रामकली की हृदयकली खिल उठी। “तब प्रसू से विवाह करने में तुम्हें आपत्ति नहीं?”

केशव ने हँसते हुए कहा, “इस बार कठिन प्रश्न किया है भाभी ! संसार में जितनी अच्छी लड़कियाँ हैं, वे सब देखने में मुझे पस आती हैं। लेकिन इसी लिए यदि हर एक से विवाह करने में मु आपत्ति न हो, तब तो यह बड़ी भयानक बात है।”

रामकली ने हँसते हुए कहा, “लेकिन मैंने तो भाई कोई भयानक बात पूछी नहीं। मैं तो एक ही बात पूछती हूँ। और एक से ही विवाह करने का अनुरोध करती हूँ।”

केशव ने माथे पर हाथ फेरते-फेरते कहा, “बड़ी मुश्किल ! तुम्हारा इस दफे का प्रश्न तो और भी कठिन है। इसका कोई उत्तर ही मेरे दिमाग में नहीं आता।”

रामकली ने कहा, “तो तुम कहना चाहते हो कि तुमको आपत्ति नहीं है !”

मीठी हँसी हँसते हुए केशव ने कहा, “माफ करो भाभी, अगर मेरी बात का यही अर्थ हो, तो कहना होगा कि भापा पर मेरा थोड़ा भी अधिकार नहीं, क्योंकि, तुम जो समझती हो, मैं हमेशा ठीक उसका उलटा समझने की कोशिश करता हूँ।”

केशव की बात सुनकर रामकली का मुख मलिन हो गया। कहा, “मालती बे मा-बाप की, मिर पर आ पड़ी है, इसी लिए क्या तुम राजी नहीं हो ?”

रामकली की बात सुनकर केशव के मुख पर आश्चर्य और विराग का भाव दीख पड़ा। कहा, “यह बात अगर तुमने मजाक में कही है, तब भी अच्छा नहीं किया भाभी। क्या मेरे सम्बन्ध में सचमुच तुम्हारा यही ख्याल है ?”

रामकली ने अप्रतिभ होकर कहा, “तो तुम्हारी सम्मति क्यों नहीं है ?”

केशव ने कहा, “असम्मति क्यों, यह बात सुनकर तुम अँगरेजी शिक्षा के कुफल पर लेक्चर दे डालोगी।”

रामकली ने हँसते हुए कहा, “हूँ, पढ़ाई समाप्त किये बिना विवाह नहीं करोगे, यही कहना चाहते हो ?”

केशव ने कहा, “हँसी में टाल दिया न? यह बात क्या बिलकुल मुच्छ है?”

रामकली ने दृढ़ता से सास्ता पकड़ा। “क्यों तुम्हारे भैया ने भी तो पढ़ाई समाप्त करने के पहले ही विवाह किया था।”

केशव ने मरफकते हुए कहा, “बात सच है, लेकिन इस सम्बन्ध में एक बात कर्त्तव्य है। भैया ने पढ़ाई समाप्त करने के पहले विवाह किया था, यह बात जिस तरह सत्य है, वे पढ़ाई समाप्त नहीं कर सके, यह भी उसी तरह सत्य है। बोलो, सही है कि नहीं?”

रामकली ने थोड़ा अड़कर कहा, “क्यों, क्या मैं तुम्हारे भैया की पढ़ने की किताबें बन्द कर देती थी?”

केशव ने मीठी हँसी के साथ कहा, “किताब बन्द कर देने की जरूरत तो होती नहीं—किताब अपने आप ही बन्द हो जाती है। इसके बारे में दो मत हो नहीं सकते, भाभी। मनु के समय से कामिनी और केताब का विरोध चला आ रहा है। इसी से एक को समाप्त करके दूसरी को पकड़ना चाहिए। कामिनी के बाद किताब पकड़ने की बड़ी उमर भगवान् ने दी नहीं, इसलिए किताब को समाप्त करके कामिनी को ग्रहण करना बुद्धिमानी है। तुम ठीक समय पर इस प्रसार में नहीं आई हो। और कुछ दिन रुकने की जरूरत थी।”

रामकली ने हँसकर कहा, “हूँ, तो मालती को कुछ दिन और रुकने को कहते हो? एम० ए० पास करने को तो तुमको अब कुछ महीनों की देर है। तुम्हारे लिए मालती अगर सत्रह साल प्रतीक्षा कर सकती है, तो दो-चार महीने और सही।”

रामकली की बात सुनकर केशव ने हँस दिया। कहा, “देखो भाभी, कनौजियों की घर की बहू न होकर अगर तुम वकील, बैरिस्टर होती, तो दुनिया का बहुत भला होता। लेकिन व्यर्थ परिश्रम कर रही हो। यह तुम्हारा मामला टिकेगा नहीं। किसी भी तरह हमसे डिग्री नहीं मिलेगी।”

जिस तरह पृष-माघ की रवि-किरणों से इठलाते हुए बुरे-भरे खेत पर मेघ का एक टुकड़ा आ जाने से वह धूमिल हो जाता है, केशव

की बात सुनकर रामकली का खिला हुआ मुख मुरझा गया। कुछ देर चुप खड़ी रहने के बाद उसने अपने मन में धीमे स्वर में कहा, “क्या यह मेरा मामला इतना कमजोर है, कि किसी भी तरह टिक नहीं सकता !”

लेकिन केशव ने रामकली की स्वगत की बात उपेक्षा न कर जोर से कहा, “कमजोर न होने पर भी बहुत बार मामला नहीं टिकता।”

रिसभरी वाणी में रामकली ने कहा, “उसी को कहते हैं अन्याय !”

इस बार केशव हँस पड़ा। कहा, “अन्याय अवश्य, लेकिन अन्याय किया किसने है ? जो जबर्दस्ती विवाह कराना चाहता है उसने, य जो विवाह करने को राजी नहीं होता, उसने ? विवाह यदि मेरा अकेले का काम होता, तो तुम्हारी बात पर मैं दिन में तीन सौ विवाह कर डालता। लेकिन यह तो अपने मुख-दुःख, अपने भाग्य के साथ एक दूसरे को बाँधना होगा। और हमारे हिन्दुओं के यहाँ वह इस तरह का बन्धन भी कट जायगा, टूट जायगा, लेकिन खुलेगा नहीं !”

केशव की बात सुनकर रामकली कुछ देर तक चुप रही, फिर कहा, “लेकिन तुमको इस बन्धन में एक दिन बाँधना ही होगा, देवर ?

केशव की आँखों के कोनों में हँसी खेल रही थी। “क्या कह बाँधना ही होगा। जरूर मैं ऐसा मूर्ख नहीं जो गंगाजल लेकर कहूँ कि कभी नहीं बाँध सकता। लेकिन मन की आज जैसी हालत है, उसमें इतना जोर देकर कह सकता हूँ कि नहीं भी बाँध सकता।”

केशव के जो विचार थे, उनसे रामकली अपरिचित न थी। इसी लिए वह अपने इस संसार से विमुख देवर को विवाह के बन्धन में बाँधने के लिए चिन्तित थी। वैराग्य की प्रबल धारा में जो नाव झधर-उधर हो रही थी, उसे मजबूत लंगड़ डालकर एक जगह में रखने का विचार था। इसी लिए देवर की बात सुनकर और अभिमान के आघात को सहकर भी रामकली बिलकुल निराश नहीं हो गई यह सिर्फ़ मालती के विवाह का प्रबन्ध न था, इसी में संसार का कल्याण भी छिपा था, इसी विचार ने रामकली को अपने प्रयत्न

से विरक्त न होने दिया। कुछ अभिमान के स्वर में रोब दिखलाते हुए कहा, “लेकिन अगर कभी विवाह किया, तो याद रहे कि भाभी की बात नहीं रक्खी।”

केशव ने हँसकर कहा, “तब न हो, तो दण्ड-स्वरूप विवाह बन्द कर देना !”

केशव की बात सुनकर रामकली हँस पड़ी। कहा, “मामूली बात नहीं। शाप में वर पाना चाहते हो !” और जाते-जाते कहा, “अब यहाँ रहकर तुम्हारी पढ़ाई में और विघ्न न करूँगी। जाती हूँ। लेकिन यह मत समझना कि लड़ाई में पीठ दिखाकर चली गई।”

केशव ने हँसकर कहा, “न, ऐसा क्यों, सन्धि करके जाती हो।”

रामकली हँसती-हँसती कमरे से बाहर चली गई।

(२)

केशव के बड़े भाई अनन्त जिस समय एफ० ए० के पहले साल में पढ़ते थे, उसी साल उनके पिता की मृत्यु हो गई। माता बहुत पहले ही मर चुकी थी। बूढ़ी विधवा आजी इन बिना मा-बाप के दो लड़कों की अभिभावक थीं। बेटे का शोक भुलाने के लिए हो, या तीर्थयात्रा का रास्ता साफ़ करने के लिए, लेकिन आजी की यह लालसा प्रबल हो उठी थी कि घर में एक बहू आ जाय। वह चाहती थीं कि लड़की ऐसी सयानी हो, कि आकर उनका भार न बनकर भार को हलका कर ले।

आजी के मन में जब इस तरह की लालसा उठ रही थी, उन्हीं दिनों पश्चिम के किसी शहर का एक भलेमानस परिवार दवा कराने के लिए पास के मकान को भाड़े में लेकर टिका था। परिवार में दो कुँवारी लड़कियाँ थीं। एक का नाम रामकली, दूसरी का मालती। ये दोनों थीं बहनें, और बीमार की रिश्ते की भानजियाँ। हिन्दू-परिवार

में साधारण रूप से जिस अवस्था में विवाह होता है, रामकली वह अवस्था तीन-चार साल पहले ही पार कर गई थी। मालती की आयु थी ग्यारह साल। रोग से छुटकारा पाने के लिए जितना नहीं, उतना चिन्तित मामा थे इन दो भानजियों से छुटकारा पाने के लिए। इसी लिए वे ओषधि-चर्चा के बदले वर-चर्चा ही अधिक करते थे। लेकिन थोड़े ही दिनों में जान पड़ा कि मामा के लिए भानजियों और रोग दोनों ही से छुटकारा पाने की आशा बहुत कम है। रुपये का मुँह न निहारकर लड़कियों का मुँह निहारकर कोई विवाह करने को तैयार हो, ऐसा एक भी घर न मिला, और रुपया लगाकर भानजियों का विवाह करने की सामर्थ्य मामा में थोड़ी भी न थी। आखिर में प्रायः एक ही साथ डाक्टर और वर देखनेवाले दोनों ही ने एक तरह से जवाब दे दिया।

जिस समय हालत इतनी नाजुक थी, उसी समय अनन्त की आजी के साथ इस पीड़ित परिवार की पहचान हुई। वह था माघ का महीना, जाड़े के दिन। आजी छत के ऊपर धूप ले रही थी। अचानक उनकी नज़र पास के मकान की छत पर गई। देखा पन्द्रह-सोलह वर्ष की एक किशोरी छत पर बिछौना धूप में डाल रही है। जब तक बिछौने का धूप में फैलाना समाप्त न हुआ, आजी चुपचाप लड़की को देखती रहीं। समाप्त होने पर हाथ के इशारे उसको निकट बुलाया। बालिका के निकट आने पर आजी को ऐसा जान पड़ा, कि छत के दूसरी तरफ़ प्रकाश हो गया। हाथ में सोने का एक छल्ला नहीं, पहने है एक नीली धोती, और हाथों में काँच की दो-दो लाल चूड़ियाँ।

“तुम कितने दिन से इस मकान में आई हो?”

लड़की ने कहा, “करीब तीन महीने से।”

आजी ने आश्चर्य से कहा, “तीन महीने! अरे, एक दिन भी तो देखा नहीं। यहाँ तुम कौन-कौन हो?”

“मामा, माई, मेरी छोटी बहन और मैं।”

“तुम्हारी मा नहीं है?”

“नहीं, मा मर चुकी हैं।”

“पिता ?”

“पिता भी—” लड़की का गला भर आया। आजी को दुःख हुआ। कहा, “तुम्हारे और कोई भाई-बहन नहीं है ?”

“नहीं।”

“तुम्हारे मामा के बाल-बच्चे हैं ?”

“नहीं, एक भी नहीं।”

“तो तुम्हारी माई तुमको प्यार करती हैं ?”

थोड़ा हिचकिचाकर अड़ते हुए लड़की ने कहा, “करती हैं।”
ऐसी झूठ बात उसके मुँह से आसानी से न निकल रही थी।

‘करती है’ का अर्थ समझने में आजी को देर न लगी। दूसरी चर्चा चलाने की सोच ही रही थी, कि लड़की की माँग पर दृष्टि गई। आश्चर्य से पूछा, “तुम्हारा विवाह अब भी नहीं हुआ ?”

लड़की का मुँह लज्जा से लाल हो गया। उसके झुके हुए लाल मुँह में मौन उत्तर पाकर आजी ने कहा, “तुम्हारे विवाह के लिए तुम्हारे मामा लखनऊ आये हैं ?”

लड़की ने धीरे से कहा, “नहीं, मामा बीमार हैं। हम दवाई कराने आई हैं।”

आजी के मन में एक विचार बिजली की तरह चमक उठा, पूछा
“तुम ब्राह्मण हो या कायस्थ ?”

“ब्राह्मण।”

“कौन ब्राह्मण।”

“काम्यकुब्ज, सुकुल।”

“काम्यकुब्ज, सुकुल” आजी की आँखों में मानो नया प्रकाश चमकने लगा। उन्होंने मन ही मन कहा, ऐसा करना ही होगा जिससे यह लक्ष्मी हमारे घर आये।

आनन्द से उनका हृदय विभोर हो गया। कहा, “बिटिया, तुम हमारे घर आओगी ?”

यह प्रश्न लड़की को कुछ टेढ़ा-सा लगा, लेकिन उसने सँभलकर उत्तर दिया, “माई से पूछकर आऊँगी।”

आजी ने हँसकर कहा, “वह आने की बात नहीं कहती ! क्या तुम इस घर की बहू बनकर, लक्ष्मी बनकर आओगी ? इस मकान का घर-द्वार सब तुम्हारा होगा । मैं तुमको छाती से लगाकर रक्खूंगी ।”

ऐसी अनोखी बात सुनकर, इस प्रश्न से लड़की लज्जा से गड़ गई । इसका कोई उत्तर उससे न बन पड़ा । उसका मुँह लाल हो गया, और सिर नीचा किये चुप खड़ी रही ।

मौका मिलने पर आजी और क्या-क्या पागलपन करतीं, कहा नहीं जा सकता । नीचे से धीमी, लेकिन काफ़ी कर्कश और फ़ठोर वाणी सुनाई पड़ी, लेकिन कोई बात समझ न पड़ी । लड़की ने कहा, “माई बुलाती हैं ।”

आजी ने स्नेह-सहित कहा, “अच्छा, तब जाओ बेटी । तुम्हारा नाम क्या है ?”

लड़की ने कोमल स्वर में कहा, “रामकली ।”

“अच्छा जाओ”, कोमल स्वर में कहा, “तुमको मैं शीघ्र ही लाती हूँ ।”

रामकली के कानों तक ये शब्द पहुँचे । वह धीरे-धीरे नीचे चली गई ।

आधे घंटे के भीतर ही आजी पास के घर में गईं । एक छोटा दोतल्ला मकान, घुसते ही आँगन । आँगन के एक तरफ़ छोटा-सा हौज़ और पास में पानी की कल । हौज़ के पास से ऊपर जाने को सीढ़ी । भीतर घुसते ही आजी ने देखा कि रामकली धोती का करफेटा लगाये और कछोटा चढ़ाये आँगन के हौज़ के पास एक गठरी कपड़ों में साबुन लगा रही है । आजी समझ गई कि ये रोगी के कपड़े हैं । आजी को देखकर रामकली उठकर खड़ी हो गई ।

आजी ने कहा, “रामकली, तुम्हारी माई कहाँ हैं ?”

रामकली ने सीढ़ी दिखाकर कहा, “ऊपर हैं ।”

नीचे बातचीत का शब्द सुनकर एक स्त्री ने बरामदे से भाँक-कर पूछा, “कौन हो तुम ?”

आजी ने कहा, “पास के मकान में रहती हैं। तुम्हारे घर में बीमार हैं सुनकर देखने आई हैं।”

पास के मकान का रूप-रंग याद करके ऊपर से स्त्री ने आग्रहपूर्वक कहा, “आइए, ऊपर आइए।” आजी ने समझ लिया, यही हैं माई।

विस्तृत रूप में रोगी के ही सम्बन्ध में बातचीत चल रही थी। उसके बीच में रामकली के विवाह का प्रसंग चलाने में आजी को संकोच मालूम होता था। लेकिन सुयोग आप ही उपस्थित हो गया।

माई ने कहा, “रोग को लेकर तो यह विपत्त, उसके बाद दो गले बराबर लड़कियाँ, बड़ी तो बहुत सयानी हो गई है। लेकिन विवाह का कहीं ठीक नहीं बैठता। इसलिए रोग की बात तो रोगी के ध्यान में भी नहीं आती—विवाह की ही रट लगाते प्राण जाते हैं!”

आजी ने कहा, “एक को तो नीचे देखा, और एक कहाँ है।”

माई ने नाक सिकोड़कर कहा, “यहीं घर में बैठी है। मालती, इधर आ।”

मालती बाहर आकर माई के पास डरी-सी खड़ी हो गई।

माई ने झनझनाते हुए कहा, “लड़की क्या जैसे बन-मानुस! नमस्कार कर।”

लजाकर मालती ने नमस्कार किया। आजी ने पास में बुलाकर उसे छाती से लगाकर गोद में बैठा लिया और उसके सिर पर हाथ फेरा। स्नेह से उसकी देह पर हाथ फेरते-फेरते कहा, “अहा, जैसे साक्षात् लक्ष्मी! क्या करती थी बिटिया?”

मालती ने डरते हुए कहा, “मामा के सिर पर हाथ फेर रही थी।”

आजी ने कहा, “लक्ष्मी है।” इसके बाद मालती की माई की ओर देखकर कहा, “देखिए, बीमार का तो भगवान् मालिक। उसकी दया से बढ़कर और कोई दवा नहीं। लेकिन मनुष्य जितना कुछ कर सकता है, हम आपकी विपत्त बँटाने के तैयार हैं।” कहकर धीरे-धीरे रामकली का अनन्त के साथ विवाह करने की बात कही।

रामकली की माई ने देखा कि यह अच्छा सुयोग मिला है, लेकिन और भी कुछ सुविधा मिल जाय। इसलिए कहा, “है तो ठीक, लेकिन रोगी का खर्च, उसके बाद लड़की के विवाह का और खर्च, कैसे करें बतलाइए। बीमार के खर्च को छोड़कर और एक पैसा भी ज्यादा खर्च करने की समाई हमें नहीं है।”

आजी ने कहा, “खर्च करके ही यदि तुमको इस वक्त विवाह करना पड़े, तब तो मैंने तुम्हारा कौन-सा बड़ा उपकार किया। देखो, भगवान् की कृपा से हमारे अनन्त को किसी से एक पैसा भी लेने की जरूरत नहीं है। उसको भगवान् ने जो दिया है, वही बहुत है। मैं सिर्फ लड़की चाहती हूँ।”

भीतर ही भीतर प्रसन्न होकर माई ने गम्भीर भाव से कहा, “अच्छा, आप बैठिए, मालिक से यह बात कहूँ।”

प्रायः आधे घंटे तक सलाह करके माई ने आकर कहा, “आप दरवाजे के पास ज़रा आयेंगी। आइए। मालिक दो-एक बातें खुद आपसे कहेंगे।”

आजी के दरवाजे पर खड़े होने पर बिछौने से किसी तरह उठकर रोगी ने कहा, “आपने जो बात कही है, उस कृपा के लिए धन्यवाद। लेकिन इस सम्बन्ध में मुझे एक बात कहनी है। बीमारी ने जिस तरह मेरा पल्ला पकड़ा है, उससे जीते जी छुटकारा मिलेगा, इसकी आशा नहीं। मेरे न रहने पर मेरी स्त्री की क्या हालत होगी, यह चिन्ता मुझे मृत्यु से भी अधिक कष्ट देती है। इस पर भी यदि दो लड़कियाँ उसके गले पड़े, तब तो वह और मुसीबत में फँसेगी। इसके सिवा दोनों लड़कियाँ अपने-अपने घर की हो जातीं, यह देख लेता, तो मेरे हृदय को थोड़ी शान्ति मिलती। इसी से मैं इस कोशिश में हूँ कि एक साथ ही दोनों से निबट जाऊँ। एक जगह इसी तरह की बातचीत भी चल रही है। आपसे मैं कह तो नहीं सकता—लेकिन मालती का भार भी आप ही यदि दया करके उठा लें, तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं।”

आजी ने हर्ष-सहित कहा, “यह भार नहीं, बड़ी खुशी की बात

हैं। मालती को मैं अपनी छाती से लगाकर रक्खूंगी। उसका सारा भार मेरे ऊपर।”

उसी दिन पंडित बुलाये गये, और विवाह का मुहूर्त ठीक किया गया, और कुछ ही दिनों में रामकली और मालती पास के बड़े मकान में आगई। विवाह के बाद एक महीना और रोगशय्या पर काटकर मामा सदैव को सो गये। क्रिया-कर्म के बाद उनकी स्त्री रिश्ते के भाई के यहाँ चली गई। तीन महीने के बाद आजी काशीवास को चली गई। रामकली हुई घर की मालकिन। मालती भी विवाह के योग्य हुई थी, इसी से रामकली चिन्तित थी। लेकिन घर में ऐसे योग्य वर के रहते बाहर विवाह करने की उसकी राय न थी।

(३)

दो-तीन दिन हुए राजरानी आई है। राजरानी अनन्त की मौसेरी बहन, लखनऊ में उसकी ससुराल, मायका है उन्नाव जिले के एक गाँव में। बीच-बीच में वे अनन्त के घर आकर दो-चार दिन रहती हैं। पति रामचन्द्र बड़े घर के लड़के हैं, तीन साल हुए उन्होंने चीफ़ कोर्ट में प्रैक्टिस शुरू की है।

रसोईघर में रामकली शाम के लिए रसोई बना रही थी, और राजरानी तथा मालती उसकी सहायता में थी। नित नये व्यंजन बनाने का शौक तो उसको था ही, और पति तथा देवर को अच्छा-अच्छा खिलाने से मानसिक तृप्ति तो होती ही थी, लेकिन आज शाम को राजरानी के पति रामचन्द्र आयेंगे, इसलिए आज भोजन और भी रुचिकर बनाने की तैयारी थी।

जलाव को चलाते-चलाते रामकली ने कहा, “राजरानी, बेसन में गुलाबजल, जाफ़रान, इलायची, गरम मसाला देकर अच्छी तरह से फटो न भाई।” मालती की ओर निहारकर कहा, “मालती, तब तक तू उबले आलुओं को अच्छी तरह से पीस डाल।”

सहकारिणीगण अपने-अपने काम में लग गई। रामकली जलाव को चला-चलाकर जलाव का गाढ़ापन देखने लगी। धुआँ और आग की गर्मी से उसका गोरा मुख कुन्दन की भाँति चमचमाने लगा। उसे देखकर राजरानी ने कहा, “सच भाभी, एक मालती को छोड़कर कनौजियों के घर में और तुम्हारी तरह की सुन्दरी मैंने नहीं देखी।”

राजरानी की बात सुनकर मुस्कराकर रामकली ने कहा, “देखोगी कैसे, अपना मुँह तो खुद देख नहीं सकती।”

राजरानी ने हँसकर कहा, “अच्छी तरह देखती हूँ। आइने के सामने खड़े होते ही श्रीमुख के दर्शन होते हैं। यह कैसे कहा भाभी। कहाँ सोना और कहाँ पीतल।”

रामकली ने हँसकर कहा, “अच्छा ननदोई को आने दो इसका फ़ैसला वही करेंगे। देखें वे तुम्हारे मुँह को अच्छा कहते हैं, या मेरे मुँह को।”

राजरानी के कपोलों पर लज्जा की धुँधली आभा दीख पड़ी, लेकिन सँभलकर कहा, “अच्छा मान लो वहाँ हमारी हार ही हो, तो दादा के पास अपील कलेंगी। देखें वे किसका मुँह अच्छा बतलाते हैं।”

रामकली के ओठों पर हँसी भलकने लगी। कहा, “वकील की बह, अपील करना तो तुमने खूब सीखा है, लेकिन कहीं दादा ने तुम्हारे मुँह को पसन्द किया, तो क्या करोगी, बताओ तो ?”

राजरानी का मुँह लज्जा से लाल हो गया। रामकली की पीठ पर एक छोटी-सी लकड़ी चलाकर मारी, और कहा, “तुम बड़ी दुष्ट हो।” इसके बाद ही उसके दिमाग में एक नई बात आई; कहा, “और तुम्हारे ननदोई अगर तुम्हारा मुँह पसन्द कर बैठें, तो तुम क्या करोगी, बताओ ?” रामकली ने हँसकर कहा, “तो ननदोई को भरमुँह घी-शक्कर खिला दूँगी। लेकिन तुम्हारे दादा ने तुम्हारा मुँह पसन्द कर लिया, तो क्या खाने को दोगी, बोलो तो ?”

राजरानी ने बेसन का थाल ठेलकर तुनककर कहा, “तुम बड़ी बैसी हो। तुमसे हम बात नहीं करेंगी।”

रामकली ने हँसते-हँसते कहा, “तो भाई, हमारे ऊपर नाराज

होती हो क्यों ? तुम्हीं तो अपील करने की बात कहती हो । अपील की डिगरी हो जाने पर नाराज होने से कैसे काम चलेगा ?”

थाल को खींचकर हाँड़ी की तरह मुँह लटकाकर कहा, “तुमको जानती हूँ तुम—” लेकिन रामकली उलटकर जैसी कहेगी, उसके भय से राजरानी ने आगे बात न कही । वह चुप रह गई ।

ननद-भौजाई का यह रंग देखकर मालती मन ही मन प्रसन्न हो रही थी । राजरानी की हालत देखकर उसे हँसी आ गई; कहा, “राजरानी दीदी, भला चाहो, तो दीदी के मुँह ज्यादा न लगे । दीदी का मुँह खुलने पर तुमको आखिर सिर पर पैर रखकर भागना होगा, यह जानती हो ।”

मालती की बात सुनकर राजरानी का ध्यान मालती की तरफ़ गया । रामकली की तरफ़ देखकर कहा, “अच्छा भाभी, हमारे मुँह का फ़ैसला तो एक तरह से हो गया, मालती के मुँह का फ़ैसला किससे कराना होगा ?”

राजरानी के इस आकस्मिक प्रश्न से मालती घबरा गई । थोड़ी देर तक चुप रहकर कहा, “वाह रे वाह ! मैंने अच्छी बात कही, और उलटे मेरे पीछे पड़ें ।”

राजरानी ने भीहँ टेढ़ी करके चुपके हँसते-हँसते कहा, “पीछे लगना कैसा भाई ? हम अपनी बातों में भूली थी । तुम्हारी बात पर ध्यान न देना क्या यह भी कुछ भलमनसाहत है ? बोलो न भाभी, किसके पास जाना होगा ?”

रामकली ने ओठ दबाकर हँसते हुए राजरानी की तरफ़ थोड़ा मुँह ले जाकर मृदु स्वर में कहा, “देवर के पास ।”

स्विच दबा देने से जिस तरह बिजली पलक मारते जगमगाने लगती है, उसी तरह रामकली की इस एक बात से मालती का मुखमंडल क्षण में लाल हो गया । इस तरह की एक अद्भुत और बड़ी बात रामकली ने हँसी-हँसी में बिना संकोच किस तरह कही, यह सोचकर मालती को लज्जा से अधिक विस्मय हुआ । और यह ऐसी संकोच की बात कि उसके विरुद्ध कुछ कहने में और अधिक संकोच । मालती सिर झुकाये आलुओं के छिलके छुड़ाती रही ।

राजरानी ने हँसते हुए भौंहे टेढ़ी करके कहा, “समझती हूँ, तुम्हारे मन में यही बात है। लेकिन ऐसा न होगा भाभी। मालती को मैं ले जाऊँगी।”

मुस्कराते हुए रामकली ने कहा, “तुम ले जाओगी किस तरह?”

राजरानी ने कहा, “हमारे देवर के साथ मालती का विवाह हो जायगा।”

रामकली ने हँसकर कहा, “और हमारे देवर क्या टापते ही रहेंगे?”

राजरानी ने कहा, “केशव भैया कब विवाह करेंगे, इसका कुछ ठीक है। कुछ भी हो भाभी, मालती को हमारे हिन्दुओं के घर में और ज्यादा दिन कुँआरी रखना ठीक नहीं। हमारे देवर की एम० एस-सी० की परीक्षा के बाद ही उनकी शादी करनी है।”

चूल्हे के ऊपर से जलाव की कड़ाही उतारकर नीचे रखते हुए रामकली ने कहा, “क्या मालती को सत्रह साल तक बैठा रखा जाता? हमने ठीक कर लिया है कि देवर के साथ उसका विवाह होगा। उनकी पढाई समाप्त होने तक की देरी है। उसमें भी अब ज्यादा देरी नहीं है। तुम्हारे भैया नहीं चाहते कि मालती पराये घर जाय।

मालती की जान साँसत में थी। यह बेकार की बातचीत उसे अच्छी न लगती थी, वह लजा रही थी, उधर विरोध करके इस प्रसंग को बन्द कराने की चेष्टा करने में भी उसे संकोच होता था। लाचार होकर उसने इसके सिवा दूसरा रास्ता न देखा कि आलुओं को पीस-पीसकर माखन की तरह कर डाला।

राजरानी ने कहा, “हमारे पास रहने पर दूसरे के घर जाना नहीं होगा।”

रामकली ने कहा, “इतनी बड़ी लड़की के साथ कृष्ण का विवाह करने को राम राजी होंगे?”

‘इसमें किसी की असम्मति न होगी—उनकी भी नहीं, देवर बाबू की भी नहीं।’ मालती की ओर देखकर कहा, “ऐसा चाँद का टुकड़ा किसी को नापसन्द होगा?”

इस बार मालती की सहन-शक्ति सीमा पार कर गई। रिसियानी-सी लजीली हँसी के साथ कहा—“अच्छा राजरानी दीदी, दुनिया भर की जितनी अल-जलूल बातें हैं, उनके सिवा तुम लोगों को और कोई बात करने के लिए नहीं है क्या?”

राजरानी ने हँसकर कहा—“मालती, तुम नाराज हो गई। लेकिन विवाह की बात सुनकर हमको तो बहुत आनन्द मिलता था।” कहकर हैसमुख राजरानी जोर से हँस पड़ी। उसकी मीठी हँसी से सारा रसोईघर गूँज उठा।

रामकली ने बहुत ही आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—“अरे, यह कैसी बात! विवाह की बात से तुमको आनन्द मिलता था, राजरानी?”

“क्यों, होगा नहीं? तुमने भी तो एक दिन कहा था कि भैया के साथ जब तुम्हारा विवाह ठीक हो गया था, तो तुमको बहुत आनन्द प्राप्त हुआ था।”

थोड़ा इधर-उधर करके लज्जित भाव से रामकली ने कहा, “उसका कारण दूसरा था।”

“विवाह के पहले छत पर भैया की देखकर तुमने पसन्द किया था, इसी कारण से तो?”

इस बार रामकली के कपोलों पर लाली झलकने लगी। इस रसीली वाचाल ननद को दूसरे प्रसंग की ओर ले जाने के विचार से उसने तुरन्त कहा—“अच्छा राजरानी, विवाह के पहले तुमने ननदोई को देखा था?”

रामकली के प्रश्न पर राजरानी पहले हिचकिचाई, फिर हँसते हुए कहा—“सच बताऊँ?”

“बताओ न। इसमें हर्ज ही क्या है?”

लज्जित होकर मुस्कराते हुए राजरानी ने कहा, “देखा नहीं; लेकिन करीब-करीब देख लिया था। विवाह के दिन बारात ज्यों ही द्वार पर आई, तुम तो सब वर देखने द्वार पर चली गई, और मैं अकेली तुम्हारे कमरे के पासवाले कमरे में बैठी थी। बाहर देखा सभी चले

गये हैं, कोई नहीं। छाती न जाने कैसे धक-धक कर रही थी। वर देखने की न जाने कैसी इच्छा थी। अचानक मन में आई, और खिड़की के पास जाकर बाहर देखने लगी, लेकिन भीड़ इतनी थी कि साफ़-साफ़ कुछ भी दिखलाई न पड़ा। इतने में किसी के पैरों की आहट सुनकर जल्दी-जल्दी आकर तुम्हारे कमरे में बैठ गई।” कहकर राजरानी मुंह में कपड़ा देकर हँसने लगी।

रामकली ने जोर से हँसते हुए कहा, “अरे, ऐसी बात ? तुम तो अच्छी लड़की हो तब तो ?”

मालती भी हँसने लगी।

राजरानी ने कहा, “अच्छा भाभी सच बताओ, देखने की एक प्रबल इच्छा क्या नहीं होती ?”

रामकली ने कहा, “मैं कैसे बतलाऊँ कहो ? मैंने तो पहले ही देख रखा था।”

इसी समय केशव भीतर आया। कहा—“क्या भाभी, किस लिए कमेटी बैठी है ?” इसके बाद भोजन-सामग्री देखकर कहा, “ओ, आज यह सब क्या ? भोज-ओज है क्या !” राजरानी की ओर देखकर कहा, “— — — — —”

पास जाकर बाहर देखने लगी, लेकिन भीड़ इतनी थी कि साफ़-साफ़ कुछ भी दिखलाई न पड़ा। इतने में किसी के पैरों की आहट सुनकर जल्दी-जल्दी आकर तुम्हारे कमरे में बैठ गई।” कहकर राजरानी मुंह में

केशव ने कहा, “क्या, बताओ?”

रामकली ने हँसकर कहा, “स्पष्टवादी होने का तो तुमको बहुत गर्व है—अच्छा बताओ देखें, हम तीनों में किसका मुँह सबसे सुन्दर है?”

रामकली का यह अजीब और अनोखा प्रश्न सुनकर मालती आश्चर्य और संकोच से लाल हो गई,—राजरानी मुँह छिपाकर चुपचाप हँसने लगी, और केशव किकर्तव्य-विमूढ़ बना देखता रह गया।

मुस्कराते हुए रामकली ने कहा, “क्यों, चुप क्यों रह गये? हिम्मत नहीं है? तुम तो कहते हो मन में जो भाव हो, उसे बिना संकोच के प्रकट करना उचित है। अब बोलो न?”

हिचकिचाहट के साथ केशव ने कहा, “शास्त्र का आदेश है, जानती हो? सच बात कहो, किन्तु अप्रिय सत्य न कहो। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देने पर तुम तीन में से दो के लिए अप्रिय सत्य कहना पड़ेगा।”

रामकली ने कहा, “होने दो अप्रिय सत्य। हममें सुनने का साहस है, तुममें कहने का नहीं है।”

केशव ने हँसकर कहा, “तो हमसे नाराज न होना। हमारी समझ से तो मालती का मुख सबसे सुन्दर है।”

केशव की बात सुनकर रामकली जोर से हँस पड़ी। राजरानी भी किसी तरह हँसी को न दबा सकी, और मुँह में कपड़ा देकर हँसने लगी। दबी हँसी के वेग से उसका सारा शरीर काँप रहा था। और मालती लज्जा से लाल होकर ज़मीन में गड़ी जाती थी। इससे पहले जो बातें हुई हैं, उनके साथ मिलकर केशव की इस बात ने मालती को लज्जा और संकोच से दबा दिया।

तीनों के भावों को देखकर केशव कुछ देर तक विस्मयसहित मुस्कराता खड़ा रहा, इसके बाद कहा, “आज तो तुम इस तरह हँस रही हो, जैसे भूत लगा हो।” और धीरे-धीरे चला गया। मालती की अवस्था देखकर उसने समझ लिया कि रामकली के प्रश्न का उत्तर देकर उसने अपने आपको फन्दे में डाल दिया है, और मालती को भी लज्जित किया है।

(४)

सन्ध्या के बाद बैठक में बैठे रामचन्द्र और केशव तर्क-वितर्क कर रहे थे। रामचन्द्र कह रहे थे, “मैं इस बात को कभी स्वीकार नहीं कर सकता कि विवाह न करके संन्यासी हुए बिना संसार और मानव-जाति का उपकार नहीं किया जा सकता। जी संन्यासी ही जाता है, वह तो खुद ही संसारे पर एक बोझ हो जाता है। जिस तरह आत्महत्या करने से संसार एक प्राणी से बंचित हो जाता है, इसलिए उचित नहीं, उसी प्रकार संन्यासी होने से भी समाज एक प्राणी की खी देता है। इस प्रकार दोनों समान हैं।”

केशव ने कहा, “संन्यासी हुए बिना कोई उपकार नहीं हो सकता, यह बात मैं नहीं कहता, परन्तु यह बात तो तुमको माननी ही होगी कि संन्यासी होकर भी संसार का उपकार किया जा सकता है, और इसलिए आत्महत्या करनी और संन्यास लेना समान नहीं।

रामचन्द्र ने कहा, “कुछ भी कहो, केशव, लेकिन मैं तो यह कहूँगा कि संन्यास लेना भी स्वार्थपरता है, दायित्व से भागना है, इसलिए कायरता है। वैराग्य को जो अभय कहते हैं, मैं उन्हें कायर कहता हूँ। मैं तो आसक्ति को आनन्द कहता हूँ। कापुरुष अभय चाहते हैं, लेकिन पुरुष आनन्द।

केशव ने कहा, “हमारे संन्यास का मूल मंत्र ही है आसक्ति—आनन्द, वैराग्य नहीं। संसार के दुःख-वैश्य, कष्ट को देखकर जो कन्दराओं में तप करने के लिए छिपे, उनको तुम जो चाहो, कहो, लेकिन हमारा संन्यासी ऐसा नहीं है। वह अपने आध्यात्मिक मंगल के लिए जिस तरह निर्लिप्त, निस्पृह, पृथक्; संसार के अति धुर प्राणी की भी मंगल-कामना में वह उसी तरह संसार में ही नीड़ बनाये है। वह संयत है, किन्तु विमुख नहीं।

केशव की बात सुनकर रामचन्द्र मुस्कराने लगा। कहा, “विमुख नहीं यह कैसे कहा? समस्त मानव-जाति के अर्द्धांश से जो घृणा करे, डरे, मारी और भरी को समान समझे, वह विमुख नहीं तो क्या?”

जिस तरह बारूद के ढेर पर एक चिनगारी पड़ जाने से वह

मैंक से जल उठती है, उसी तरह रामचन्द्र की बात सुनकर केशव उत्तेजित हो गया। उसने ओर से कहा, “झूठ बात। नारी से भय भी नहीं करता, घृणा भी नहीं करता और अरि भी नहीं सम्भ्रता। जिस नारी में माता, भगिनी और कन्या के दर्शन होते हैं, उस नारी-जाति के प्रति किसी से अधिक मुझमें आघर और श्रद्धा है।

पहले ही की तरह भीठे-भीठे हँसते हुए रामचन्द्र ने कहा, “वह बात तो ठीक, लेकिन पत्नीरूप देखने में भय क्यों लगता है? पत्नी-मूर्ति देखे बिना कन्या के दर्शन कैसे होंगे? माता के रूप में जो पालन-धाली है, पत्नी के रूप में वही चालनेवाली कैसे?”

केशव ने कहा—“पालन-धाली हजिज नहीं, लेकिन सम्भासी के रास्ते में वह बहुत बड़ी बाधा है।”

इस तरह जब तक हो रहा था, रामकली ने घर में प्रवेश किया। केशव ने भाभी को देखकर पहले ही के समान उत्तेजित स्वर में कहा—“जिस जाति में भाभी के समान एक भी हो सकती है, उस नारी-जाति को घृणा करूँगा, ऐसा बड़ा पापी नहीं हूँ।”

अचानक देवर के मुख से यह श्रद्धा और स्नेह के वाक्य सुनकर रामकली शक्ति रह गई। लज्जित होकर कहा, “क्यों देवर, मैंने आखिर क्या अपराध किया?”

उत्तेजना में केशव कह ती गया था, लेकिन उसे भी लाज लग रही थी। मामले को हँसी में उड़ा देने के उद्देश्य से उसने कहा, “अपराध? अपराध तुम्हारे अनेक हैं। तुम्हारा पहला अपराध तुम अचार अच्छा बनाती हो। दूसरा अपराध, भूख न होने पर भी खाने को लाचार करती हो। तीसरा अपराध, खिला-खिलाकर शरीर मोटा कर देती हो, और फिर भी यह स्वीकार नहीं करती कि मोटा हुआ है।”

इसी समय अनन्त एक ऐसा समाचार लाकर घर में भुसे कि पल में बातचीत की धारा दूसरी ओर बहने लगी।

रामचरण तिवारी सेक्रेटेरियट में नौकरी करते थे—काम के लिए नाकाम होने की पेंशन लेकर वे तीन महीने से रायबरेली जिले के तिवारी-पुर में अपने घर पर हैं। लखनऊ में रहते समय एक कायस्थ युवक

उनकी लड़की को पढ़ाता था। बाद में मालूम हुआ कि युवक और युवती अन्ध प्रेम में पागल होकर गुरु-शिष्य के बन्धन को तोड़कर एक नये बन्धन में बँधने का उपक्रम कर चुके थे। लड़का अच्छा और पढ़ा-लिखा था, और सामाजिक रूढ़ि की बलिशाला में लड़की के मुख की बलि न देंगे, यह कहकर पंडित रामचरण उसी कायस्थ लड़के के साथ लड़की का विवाह हिन्दू-रीति के अनुसार करने को तैयार हो गये थे। लेकिन गाँव के लोग इससे बहुत ही उत्तेजित हो गये थे। रामचरण को जाति-बिरादरी से तो अलग कर ही दिया था, यह भी धमकी देते थे कि बारात को मारकर भगा देंगे—गाँव में ऐसा पाप हर्गिज न होने देंगे। लखनऊ आकर वे लड़की का विवाह कर दें, यह रास्ता भी बन्द था। गाँव से लालगंज स्टेशन छः कोस। इक्के और बैलगाड़ियाँ चलती थीं, लेकिन गाँव के जमींदार ने सभी इक्कावालों और गाड़ी-वालों को डाँट दिया था कि अगर रामचरण और उनकी लड़की को स्टेशन ले गये, तो गाँव से निकाल देंगे, इक्का और गाड़ी जला देंगे। लड़की के विवाह से अधिक रामचरण को अपनी दवा कराने के लिए लखनऊ आना भी जरूरी था, लेकिन मजबूरी और यहाँ तक कि गाँव के कठबंदों तक को मना कर दिया गया था कि कोई रामचरण को देखने न जाय।

केशव ने उत्तेजित होकर कहा, “पंडित रामचरण पुलिस में इत्तिला क्यों नहीं करते ?”

अनन्त ने कहा, “करे कौन ? रोगी होने के कारण तो असमय में पेन्शन ली है। अपना कहने के लिए तो बस वही लड़की है। भाई-बिरादरीवाले सब खा जाने को तैयार बैठे हैं।”

रामचन्द्र ने पूछा, “पंडित रामचरण क्या आपके रिश्तेदार हैं ?”

अनन्त ने कहा, “नहीं नाता कुछ भी नहीं, परन्तु पिता जी के अन्तरंग मित्र हैं।”

केशव ने कहा, “इतना ही सम्बन्ध काफ़ी है। इसी नाते हम इस सत्कार्य में उनकी सहायता करेंगे।”

अनन्त कुछ देर चुप रहा, फिर कहा, “यह सम्बन्ध व होने पर भी

सहायता की जाती, यदि मामला दूसरे ढंग का होता। इसमें एक बड़ी सामाजिक समस्या जुड़ी है। बिना कुछ सोचे जो हम पंडित रामचरण को सहायता देने की बात कह रहे हैं, उसका कारण है गाँववालों की जबर्दस्ती। यदि ऐसा न होता, तो उनके इस काम को हम अनुचित कहते।”

अनन्त की बात सुनकर केशव उत्तेजित हो गया। उसके बलिष्ठ शरीर का सबल एवं सद्य हृदय क्रोध और करुणा से जोर-जोर से बड़कने लगा।

उसने कहा, “लेकिन मैं ठीक उलटा सोच रहा हूँ। गाँव के लोग जिस काम में बाधा डाल रहे हैं, यदि वह अनुचित है, तो गाँववालों का जबर्दस्ती करना बेजा नहीं। क्योंकि और उपाय न होने पर जबर्दस्ती भी की जा सकती है। लेकिन यहाँ तो मामला ही उलटा है। एक आदमी यह बतलाना चाहता है कि वह आदमी है, और कुछ पशु उसके किये-कराये पर पानी फेरने को तुले बैठे हैं।”

रामचन्द्र ने कहा, “क्या तुम ब्राह्मण की लड़की के साथ कायस्थ के लड़के का विवाह पसन्द करते हो?”

भौं टेढ़ी करके केशव ने कहा, “करता नहीं, विशेषरूप से पसन्द करता हूँ। मनुष्य ने मनुष्य के बीच रूढ़ि की जो अनुचित और अस्वाभाविक दीवाल खड़ी की है, उसकी पहली ईंट को उखाड़े दे रहे हैं, इसके लिए मैं पंडित रामचरण में श्रद्धा रखता हूँ। क्या तुम सोचते हो कि ब्राह्मण की लड़की और कायस्थ के लड़के के बीच—मनुष्य का मनुष्य के साथ स्वाभाविक सम्बन्ध हो नहीं सकता—यह अनाभाविक नियम चिरकाल तक बना रहेगा?”

अनन्त ने गम्भीरतापूर्वक कहा, “चिरकाल तक न रहेगा, यह मान लेने पर भी इतने दिनों की दीवाल एक दिन में टूट नहीं सकती। क्या तुम सोचते हो कि समाज ने बहुत दिनों के अनुभव के बाद नियम-व्यवस्था की जो दीवाल बनाई है, उसके तोड़ देने ही से मनुष्य को सुख मिल जायगा। यदि किसी प्रकार की क्रान्ति हो, और ऐसी दीवाल टूट जाय, तो भी देखोगे कि दूसरे ही दिन मानव नियम-

स्वस्थता की दूसरी दीवालें बनायेगा। समाज में कुछ अनुशासन सदैव रहेगा, और कभी-कभी वह अनुशासन कठोर मालूम होगा। लेकिन चाकू से कभी-कभी हाथ कट जाता है, इसी लिए चाकू को हाथ से ही न छुएँगे, ऐसी बात तो नहीं है।”

रामकली अब तक चुप थी। पति और देवर के तर्क-वितर्क सुनने के बाद उसने कहा, “अच्छा कायस्थ के लड़के के साथ ब्राह्मण की लड़की का विवाह हो या न हो, लेकिन गाँववालों के कारण उन्हें और जो कष्ट हो रहा है, उसको तो दूर कराना चाहिए।”

केशव ने कहा, “इतना ही नहीं भाभी। यह भी करना चाहिए, जिससे उस कायस्थ के लड़के के साथ उस लड़की का विवाह हो सके। लड़की के पिता ने जब सब कुछ सोचकर विवाह करना तय किया है, तो राह चलते लोग उसमें रुकावट डालनेवाले होते कौन हैं?”

सोमनाथ ने हँसकर कहा, “राह चलते लोग नहीं, समाज के लोग रुकावट डाल रहे हैं। जब तक तुम समाज में हो, तब तक समाज का शासन मानना पड़ेगा।”

केशव ने कहा, “लेकिन यहाँ तो यह भी नहीं। वे पंडित रामचरण को समाज से बाहर नहीं जाने देते। वे किसी भी तरह पंडित रामचरण की व्यक्तिगत स्वाधीनता का अपहरण कर रहे हैं।”

रामचन्द्र ने अनन्त का पक्ष लिया। उसने कहा, “तुम तल्लती करते हो केशव। पंडित रामचरण समाज से बाहर जाकर विवाह नहीं करना चाहते। वे तो हिन्दू-धर्म के अनुसार ही विवाह करना चाहते हैं।”

रामचन्द्र की बात सुनकर केशव हँस पड़ा। इस वार्तालाप को सुनकर तब तक मालती और राजरानी भी आनंदी थीं।

केशव ने रामचन्द्र को उत्तर दिया, “तुम कहते क्या हो? क्या हिन्दू-धर्म के अनुसार विवाह करने ही का अर्थ हुआ तिलारीपुर के खन बाबाजियों के समाज में रहना। हिन्दू-धर्म क्या इतना संकीर्ण है? तुम जानते हो वैष्णव-समाज हिन्दू-धर्म के ही भीतर, भार्यसमाजी, नामकण्ठी और यहाँ तक कि ब्राह्म-समाजी भी हिन्दू-धर्म के ही भीतर हैं।

रायचन्द्र से कोई उत्तर न बन पड़ा, और उसका केशव से झूतना कुछ मतभेद भी न था। उसे चुप देखकर अनन्त ने कहा, “जहाँ कोई समाज होगा, चाहे वह हिन्दू-समाज हो या अन्य समाज उसके कुछ आचार-व्यवहार होंगे जरूर। अँगरेजों को तो बहुत सुधरे हुए ससभते हैं, लेकिन उनके यहाँ चचेरी बहन से विवाह कर सकते हैं, लेकिन साली से नहीं। अँगरेज इसका कोई कारण नहीं बतला पाते, किन्तु रीति प्रचलित अवश्य है।”

केशव ने कहा, “तो क्या आँख मूँदकर चलने को ही विशेषता कहते हैं। बिना विचार किये आँख मूँदकर चलना ही क्या समाज की नाक रखना है? चलना तो वह है, जिसमें अपनी बुद्धि से सोचकर चला जाय।”

अनन्त ने कहा, “चलने में हर एक क्रम अपनी इच्छा के अनुसार सोचकर रखने से राह नहीं तय होती। एक पीढ़ी राह बनाती है, दूसरी उस पर चलती है।”

केशव ने कहा, “लेकिन इस प्रकार बनाया मार्ग ही सर्वोत्कृष्ट होगा, यह तो कोई बात नहीं। तीन हजार वर्ष पहले जो नियम बना है, वह आज भी समाज के लिए उपयोगी होगा, इसमें बहुत सन्देह है।”

अनन्त ने कहा, “और तीन हजार वर्ष से जो नियम चला आ रहा है, वह आज ही अचानक अनुपयोगी हो गया, यह कैसे?”

केशव हँस पड़ा। कहा, “तब तो भैया बुद्धि से विचार करने का प्रबल खड़ा होता है। बिना विचार पुरानी लकीर का फकीर होना उचित नहीं। लेकिन इस समय तर्क-वितर्क के लिए समय नहीं। पहला काम है, तिवारीपुर के लोगों के हाथ से पंडित रामचरण की रक्षा करना। मैं कल ही तिवारीपुर जाऊँगा।

केशव की बात सुनकर रामकली बेचैन हो गई। वह अपने इस प्रबल और चतुर देवर को अच्छी तरह से जानती थी। वह जानती थी कि देह में शक्ति चाहे कम हो, लेकिन केशव अपने सामाजिक ऋण के असाध्य को भी साध्य करने की ठानेगा। सारे गाँव के विद्वद् अकेला

खड़ा होगा, और आफत सिर पर लेगा। इसी भय से उसे रोकने के विचार से रामकली उसे समझाने लगी। आखिर यह तय हुआ कि केशव के साथ कृष्णचन्द्र भी जाय।

रामकली को चिन्तित देखकर केशव ने कहा, “तुम्हें चिन्तित देखकर मुझे ऐसा जान पड़ता है भाभी, जैसे हम लाम पर जा रहे हों ! तिवारीपुर के कायरों को भीम मत समझो। हम खैनी फाँकनेवालों को एक फूँक में उड़ा देंगे।”

अनन्त को यह विवाह तो पसन्द न था, लेकिन पंडित रामचरण को कष्ट से निकालने के लिए वे भी राजी हो गये। हज़रतगंज में अनन्त का एक मकान था। इस समय उसमें किरायेदार न थे। यह तय हुआ कि पंडित रामचरण को उसी मकान में ठहराया जाय।

केशव कृष्णचन्द्र के पास उसे तैयार रहने के लिए कहने गया। सब ठीक-ठाक करके जब घर लौटा, तो रात के ग्यारह बज चुके थे।

(५)

दूसरे दिन प्रायः ग्यारह बजे केशव और कृष्ण लालगंज स्टेशन पहुँचे। केशव बना था पूरा साहूब बहादुर और कृष्णचन्द्र आगा। कृष्णचन्द्र का गोरा रंग, लम्बा, बलिष्ठ तथा सुगठित शरीर। देखने से ठीक आगा जान पड़ता था, और उनके साथ था एक नौकर जिसके हाथ में था बड़ा लट्ठ, सिर पर बड़ा-सा साफ़ा।

स्टेशन से निकलकर वापसी के दो इक्के किये, एक पर केशव और कृष्णचन्द्र बैठे, और एक पर केशव का नौकर कल्लू। केशव ने पूछा, “थाने पर चलकर सिपाही ले लेना चाहिए क्या ?”

कृष्णचन्द्र ने मुँछें मरोड़ते हुए कहा, “कहते क्या हो ? मसे को मारने के लिए तोप लानी होगी क्या ? थाना जाने पर यह कहते ही दारोगा हँस देगा। गाँववाले क्या करेंगे, क्या नहीं, इसका पता नहीं। गाँव के एक आदमी का भी नाम नहीं जानते, फिर भी थाने पर जाकर सिपाही माँगें !”

कृष्णचन्द्र की बात सुनकर केशव ने हँस दिया, कहा, “जाने दो।”

इक्के चल पड़े। कृष्णचन्द्र ने कहा, “करने तो चल रहे हैं उपकार, लेकिन वहाँ पहुँचने पर अगर देखें, कोई उपकार नहीं चाहता?”

केशव ने कहा, “तो हमारा काम तभी समाप्त हो जायगा। लेकिन यह तो आसान बात है। अच्छा, अगर गाँव में जाकर देखें कि गाँव-वालों के हाथ से पंडित रामचरण और उनकी पुत्री का उद्धार करना टेढ़ी खीर है?”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “तो वहीं से हमारा काम आरम्भ होता है। लेकिन यह सब हटाओ। क्षेत्रे कर्म विधीयते। वहाँ पहुँचने पर मालूम होगा कि क्या करना है,” कहकर इक्के के काठ पर ताल देकर गाने लगा, ‘ऐ मादरे हिन्द न हो गमगीं दिन अच्छे आनेवाले हैं।’

इस अवसर के साथ गान का मेल न मिला सकने पर केशव इधर-उधर के दृश्य देखने लगा। माघ का महीना, गेहूँ के खेत, बालें निकल आई हैं। कहीं कोई खेत में पानी दे रहा है, तो कहीं कोई पानी की नाली को साफ़ कर रहा है। एक ओर पशुओं का झुण्ड चर रहा है, और कुछ लड़के भैंसों पर चढ़कर मस्ती से बिरहा अलाप रहे हैं, तो कुछ गिलहर खेल रहे हैं। लखनऊ की खड़खड़, भड़भड़ से यहाँ के शान्त, सुन्दर दृश्य में केशव को नया आकर्षण मिला।

अचानक गाना और ताल देना बन्द करके कृष्णचन्द्र ने कहा, “केशव, जाने क्यों आज का दिन मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। जैसे कोई Adventure करने जा रहे हों।”

केशव ने कहा, “आश्चर्य की क्या बात! किसी भी दिन तो सवेरे जलपान करके बालिका-उद्धार के लिए नहीं जाते थे।”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “और यह काम कितना रोमांटिक होता, यदि तुम्हारे लिए उद्धार करने जाते। यह तो मानो नीरस परोपकार है।”

केशव ने हँसकर उत्तर दिया, “उससे भी अधिक रोमांटिक होता, यदि अपने लिए जाते।”

इसके बाद जब प्रसंगान्तर में गांधी जी की अहिंसा को लेकर बुद्ध, टॉलस्टॉय, मार्क्स और लेनिन के सिद्धान्तों पर तर्क हो रहा था, इक्के तिवारीपुर पहुँचे।

इक्केवाले ने पूछा, “किधर जाना होगा हुजूर?”

गाँव की तरफ़ देखकर केशव ने कहा, “यही तिवारीपुर है क्या?”

“जी हाँ।”

थोड़ी दूर पर एक आदमी खड़ा बड़े ध्यान से दोनों इक्कों तथा उन पर बैठे आदमियों को देख रहा था। केशव ने उससे पूछा, “पंडित रामचरण तिवारी का मकान किधर है?”

उसने हाथ के इशारे से कहा, “सीधे जाकर दाहिनी तरफ़ जाना होगा, इसके बाद—”

इसी समय सामने के घर से एक अधवयस आदमी जल्दी से बाहर आया और उस आदमी से कहा, “बैठ, बहुत उल्लूपन न कर” और फिर नम्रता से पूछा, “किसके यहाँ जाइएगा?”

केशव ने कहा, “पंडित रामचरण तिवारी के यहाँ।”

“क्या काम है, बतलाइएगा?”

केशव ने गम्भीर होकर कहा, ‘नहीं।’

और कुछ न पूछकर वह इक्कों के आगे-आगे रास्ता बिखलाने के लिए चला। थोड़ी दूर आने पर वह बाई तरफ़ एक गली में घुसा।

कृष्णचन्द्र ने केशव से कहा, “इस आदमी की नीयत अच्छी नहीं जान पड़ती। हमें दूसरी जगह लिये जाता है।”

केशव ने आवाज़ लगाई, “उस आदमी ने तो कहा था, दाहिनी तरफ़, बाई तरफ़ क्यों जा रहे हो?”

पथ-दर्शक ने रुककर कहा, “बह है पगला। आइए, मैं ढीक जगह पहुँचा दूँगा।”

कृष्णचन्द्र ने कड़ककर कहा, “रुको।” दोनों इक्के रुक गये। कृष्णचन्द्र इक्के से उतर पड़ा, साथ ही केशव भी उतर पड़ा।

कृष्णचन्द्र उस स्वेच्छा से आये पथ-दर्शक के सामने खड़ा हो गया, उसका हाथ पकड़कर कहा, “तुम घर जाओ। हमें जरूरत नहीं। खुद चले जायेंगे।”

वह आदमी कृष्णचन्द्र को काबुली पगड़ी, लम्बा कुर्ता, लम्बा डीज़-

झील देखकर कुछ डरा, और भुक्कर सलाम करते हुए कहा, “आगा साहेब, हम सच कहते हैं, भूठ नहीं कहते। तिवारी जी से मिला देंगे।”

कृष्णचन्द्र ने गरजकर कहा, “हम तुम्हें देखना नहीं चाहते। आँखों से ओभल हो।”

केशव सिर पर टोप लगाये आँखे लाल किये आगे आया, और अँगरेजी में कुछ बक गया। वह आदमी अँगरेजी का तो एक शब्द भी न समझ सका, लेकिन उसके होश उड़ गये।

कुछ गड़बड़ समझकर कल्लू भी लट्ठ मँभालता हुआ आगया। वह आदमी खासा-सा हो गया और डरते हुए कहा, “साहेब, तुम क्या कहते हो।”

“तुम अँगरेजी नहीं जानता?”

“नहीं।”

“क्या नाम है?”

वह केशव की तरफ डर से निहारने और इधर-उधर करने लगा।

“हजूर सदासिउ पाँड़े।” केशव ने पाकेटबुक निकालकर लिख लिया।

“टुमाणे बाप का नाम?”

“बाप मर गये हैं।”

कृष्णचन्द्र ने फिर गरजकर कहा, “बोलो, बोलो। जल्दी बताओ।”

“सरकार, ज्ञानेसुर पाँड़े।”

यह भी लिख लिया। इतने में थोड़ी दूर पर एक और व्यक्ति आता दिखलाई पड़ा। अवस्था पचास से अधिक, रंग गोरा, सिर में चँदुवा। उसे देखकर सदाशिव ने चीत्कार करके कहा, “तिवारी चाचा, जल्दी आओ। बड़ी मुसीबत में फँस गया!”

सुनकर तिवारी जी ठिठक गये, और पूछा, “हुआ क्या?”

सदाशिव ने कहा, “आगा साहेब, और साहेब पंडित रामचरण तिवारी के घर जाते थे। मैंने सोचा आपके घर पर बैठाकर तिवारी जी को खबर दूँगा, इसी से आपकी तरफ़ ला रहा था, यह मेरा नाम-गाम लिख रहे हैं।”

“तिवारी जी के यहाँ जायेंगे, तो मेरे घर लाने की क्या जरूरत ?” कहकर तिवारी जी पास के एक मकान में घुस गये।

“इनका क्या नाम है ?” केशव ने पूछा।”

“शंकरदयाल तिवारी, गाँव के ज़मींदार।”

केशव ने पाकेटबुक में नाम लिख लिया, और उँगली के इशारे से कहा, “अब अगर ठीक जगह पर न पहुँचाया, तो याद रहे तुम्हारा चालान करेंगे।”

“चलो साहेब” कहकर सदाशिव आगे-आगे चलने लगा। थोड़ी दूर जाकर कहा, “यही है मकान।”

एक छोटा ईंटों का मकान था। मरम्मत न होने के कारण कहीं-कहीं उखड़ा भी था। सामने थोड़ा सहन। सहन के एक तरफ़ एक छोटा-सा बगीचा, जिसमें कुछ अमरूद के पेड़ लगे थे।

केशव ने सदाशिव से कहा, “बुलाओ तिवारी जी को।”

सदाशिव आगे बढ़ा। देखा कि पंडित रामचरण की पुत्री बरोठे में बैठी बछिया को रोटी खिला रही है। सदाशिव ने कहा, “बिटिया, दो जने एक साहेब औ’ एक आगा आये हैं तुम्हारे बप्पा से मिलने।”

लड़की बाहर निकल आई। सदाशिव ने हाथ के इशारे से केशव और कृष्णचन्द्र को बुलाया। दोनों निकट पहुँचे। लड़की दूर से देखने पर भी सुन्दरी जान पड़ती थी। निकट जाने पर तो दोनों एक क्षण के लिए मंत्र-मुग्ध-से खड़े रह गये। बाद में केशव ने पूछा, “आप क्या तिवारी जी की पुत्री हैं ?”

लड़की ने कहा, “जी हाँ।”

उधर सदाशिव आँखें फाड़े कुछ भय और कुछ आश्चर्य से ताक रहा था। केशव ने उसकी ओर मुड़कर कहा, “तुम जा सकते हो।”

सदाशिव प्रसन्न हो गया। चलते-चलते हाथ जोड़कर कहा, “हजूर नाम काट दीजिए।”

“अच्छा” कह केशव ने पाकेटबुक से नाम काट दिया। लड़की से कहा, “हम तिवारी जी से मिलने आये हैं। हमें ग़ैर न समझिए।

में हैं पंडित विश्वनाथ वाजपेयी का पुत्र, और ये हैं मेरे मित्र तथा रिश्तेदार कृष्णचन्द्र मिश्र ।”

लड़की ने हँसकर कहा, “जी, आप कुछ परिचित-से लगते थे। आपका फ़ोटो है हमारे यहाँ।” कहकर लड़की अन्दर गई और लौटकर दोनों से अन्दर चलने को कहा।

कृष्णचन्द्र ने धीरे से कहा, “देखी, निवारीपुग्धाओं की वीरता। ज़मींदार साहेब तो ठुम दबाकर खिसक गये।”

केशव ने कहा, “और अब आगा साहब का आगा हटा दीजिए।”

कृष्णचन्द्र ने कुलह उतारकर हाथ में लेते हुए कहा, “अभी पाछा तो रह ही गया।”

(६)

दरवाजे से प्रवेश करके एक सीधे रास्ते को पारकर केशव और कृष्णचन्द्र घर के आँगन में आये। शान्त घर, आँगन के एक कोने में गंदे के कुछ पेड़, जिनसे फूल झड़कर अब भी ज़मीन पर पड़े थे। बीच में तुलसी-चौरा था, किन्तु तुलसी के पेड़ मुरझाये हुए थे। आँगन को पारकर केशव और कृष्णचन्द्र एक ऊँचे कमरे में गये।

कमरे के भीतर प्रवेश करके लड़की ने पुकारा, “बप्पा।”

“क्या बिटिया?” रामचरण ने लेटे-लेटे ही पूछा।

“ये आगये।”

“अच्छा।” रामचरण चारपाई से थोड़े उठ गये।

केशव और कृष्णचन्द्र ने चारपाई के पास जाकर पंडित रामचरण को झुककर प्रणाम किया और पास में खड़े हो गये। रामचरण जल्दी-जल्दी उठ बैठे, और दोनों को देखकर कहा, “पहचान नहीं सका।”

केशव ने मुस्कराते हुए कहा, “चाचा, मैं केशव हूँ। पंडित विश्वनाथ वाजपेयी—”

केशव को और अधिक कहना न पड़ा। मित्र के पुत्र को पहचानकर रामचरण को बहुत प्रसन्नता हुई। केशव से कृष्णचन्द्र का परिचय पाकर उसको भी स्नेह-पूर्वक बुलाया। इसके बाद लड़की की ओर

इशारा करके व्यग्रभाव में कहा, “दुलारी, जल्दी इनके भोजन की व्यवस्था करो बेटी !”

भोजन की व्यवस्था का अर्थ दोपहर के भोजन की व्यवस्था के बादें फिर इतना परिश्रम, इसे सोचकर केशव में व्यग्र होकर कहा, “हम लोग इस समय भोजन न करेंगे चाचा। भोजन करके आये हैं। अब शाम के वक्त भोजन होगा।”

रामचरण ने हँसकर कहा, “तुम सोचते हो, भोजन की व्यवस्था करने में दुलारी को कष्ट होगा ! थोड़ी देर में ही तुम समझ जाओगे कि भोजन बनाने में वह कितनी पक्की है।” इसके बाद लड़की की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टिविक्षेप करते हुए कहा, “मेरे इस रोग-जीर्ण शरीर को थिला-पिलाकर यह जिस तरह खड़ा किये है, ऐसा लगता है कि इस तरह इसकी मा भी न रख सकती !”

केशव और कृष्णचन्द्र के प्रशंसा की दृष्टि से देखने पर दुलारी का सुन्दर मुख उषा के पूर्व के आकाश की भाँति लाल हो उठा। मृत माता की बात सुनकर उसकी दोनों स्निग्ध आँखों में जल भर आया। तरुण धुक्-द्वय अपने सामने चित्र-शिल्पी के इस मनोरम चित्र की ओर कुछ देर तक एकटक देखते रह गये। इस कमनीय आवरण के भीतर सेवा-परायण स्नेह-शान्त नारी-हृदय का परिचय पाकर उनको अपना सारा परिश्रम सफल जान पड़ा। अत्याचार के हाथ से उद्धार करने के लिए अब तक सिर्फ कर्त्तव्य की प्रेरणा थी। सौन्दर्य की इस स्वर्ण प्रतिमा के लावण्य और माधुर्य ने उसमें आनन्द और उद्दीपन भी ला दिया।

पिता के प्रशंसायुक्त वाक्यों तथा आगन्तुकद्वय की मुग्ध दृष्टि से उद्धार पाने के लिए दुलारी जाने लगी। उसने कहा, “बप्पा, भोजन बनाने में भी तो कुछ समय लगेगा। मैं चल्नू तैयारी करूँ।”

केशव ने व्यस्त होकर दुलारी को लक्ष्य करके कहा, “व्यर्थ इस समय कष्ट न कीजिए; जब जरूरत होगी, हम खुद ही आपको बता देंगे।”

केशव की बात सुनकर रामचरण ने कहा, “तुम दुलारी को आप

हैं तो, इसमें दुलारी भले दुःखित न हो, लेकिन मैं हूँगा। दुलारी सिर्फ़ तुमसे पाँच-छः साल छोटी है, बल्कि बिम्बू के साथ हमारी ऐसी दोस्ती थी, उससे दुलारी का तुम पर बहन से कम हक नहीं। यह ठीक है कि इस बात को अच्छी तरह न तुम जानते हो, और दुलारी।” कहकर रामचरण हँसने लगे।

केशव ने मृदु हँसी के साथ कहा, “अब से मैं दुलारी को छोटी बहन ही समझूँगा।” इसके बाद दुलारी की ओर देखकर कहा, “मैं अब तुम्हारा भाई हुआ दुलारी, इसलिए अब संकोच की बात नहीं। जब मैं कहूँ, तब भोजन देना।”

केशव की बात सुनकर दुलारी का हृदय प्रीति और श्रद्धा से भर गया, और उसके अन्तर का यह भाव उसके ओठों पर मृदु हँसी के रूप में प्रकट हुआ। इस सद्य-स्थापित भ्रातृत्व के रस से उसका हृदय इतना सिक्त हो गया कि उसकी इच्छा हुई, केशव को इसी समय भैया कहके पुकारे—लेकिन नई पहचान के संकोच से यह भाव भीतर ही रह गया।

कृष्णचन्द्र की ओर देखकर रामचरण ने हँसते हुए कहा, “लड़कपन में पढ़ा है, जो चीज़ एक ही चीज़ के समान होती है, आपस में भी समान होती हैं। इस नियम के अनुसार तुम भी दुलारी के भाई।”

कृष्णचन्द्र ने हँसते हुए कहा, “यह नियम मैंने पहले ही मान लिया था।”

इसके बाद अनेक बातों के बीच जब दुलारी काम से बाहर चली गई, तो केशव ने अपने आने का कारण और उद्देश्य बतलाया। युवकद्वय की बातें सुनते-सुनते रामचरण का रोग से पीला मुँह चमकने लगा। पहले उन्होंने दोनों को स्नेहपूर्वक धन्यवाद और आशीर्वाद दिया, इसके बाद धीरे-धीरे दुलारी की विवाह-सम्बन्धी बात को कहा।

सर्वत्र जैसा होता है, यहाँ भी वैसा ही हुआ था—संवाद जिस रूप में लखनऊ पहुँचा था, उसमें से अतिरंजना को निकाल देने से घटना इस प्रकार थी, सिर्फ़ कन्या के मंगल और सुख की ओर दृष्टि रखकर रामचरण यह विवाह करने को राजी हुए थे, यह बात नहीं। वे

लड़के की ओर देखकर राजी हुए थे। जब उसने विह्वल होकर उनसे कहा कि यह विवाह न होने से उसका जीवन नष्ट हो जायगा और जब उसकी यह बात सही जान पड़ी, तो रामचरण ने सामाजिक रूढ़ियों की बलिशाला में एक जीवन की सुख-शान्ति की बलि देना ठीक न समझा। लड़के का नाम मोतीलाल सक्सेना, प्रोफ़ेसरी करता है, लड़का अच्छा है, आदमी जैसा आदमी है। रामचरण के प्रति ग्रामवासियों के अत्याचार की जो बात सुनी थी, वह पूरी न होने पर भी बहुत कुछ सच थी। धोबी, नाई, बन्द, नौकरों ने काम छोड़ दिया था। गाँव के डाक्टर ने ज़मींदार के कहने से दवा बन्द कर दी थी। सिर्फ़ पड़ोसिन सिलिया की मा सबके डराने-धमकाने पर भी दो वक्त इस विपन्न ब्राह्मण-परिवार की यथासाध्य सेवा कर जाती थी, नहीं तो दुलारी को बर्तन माँजने पड़ते, और पानी तक भरना पड़ता। पहले दिन जब सिलिया की मा स्वयं अपनी तरफ से काम करने आई थी, तो दुलारी ने कहा था, “नहीं चाची, हमें कुछ कष्ट न होगा। आखिर हमारे लिए तुमको भी विपत्ति में पड़ना होगा!” दुलारी की बात सुनकर सिलिया की मा ने आँखें फाड़कर कहा था, “क्या कहती हो बिटिया, क्या हमें दया-मया नहीं, और परलोक का भी डर नहीं। तुम बासन माँजोगी, पानी भरोगी और हम खड़ी देखेंगी। मैं किसी को नहीं डरती। मैं भी कुछ तिवारिन बाजपेयिन हूँ कि खड़े-खड़े यह सब देखूंगी!”

रामचरण के मुँह से सारी कहानी सुनकर केशव ने उसी दिन लखनऊ चलने को कहा, और यह भी बतलाया कि सवारी मिलने में किसी तरह की कठिनाई न हो, इसलिए हम दो इक्के लालगंज से ही केते आये हैं।

इतनी जल्दी लखनऊ जाने की बात रामचरण को पहले असम्भव जान पड़ी। लेकिन तर्क-वितर्क के बाद जब जान पड़ा कि दो दिन बाद लखनऊ जाने में हानि नहीं, क्योंकि और किसी कारण से न हो, तब भी रामचरण की दवा के लिए तत्काल लखनऊ जाना आवश्यक था, और लखनऊ में रहने की व्यवस्था केशव कर आया है।

तो रामचरण जाने को राजी हो गये । तय हुआ कि आज ही लखनऊ जाना सम्भव नहीं है, दूसरे दिन भोजन करके चलना होगा । और इनाम पाने के लोभ से इक्केवाले भी एक दिन रुकने को राजी हो गये । उन्होंने घोड़े खोल दिये और भोजन आदि की व्यवस्था करने लगे ।

(७)

शाम के बाद केशव और कृष्णचन्द्र रामचरण के साथ बात-चीत कर रहे थे । रसोईघर के एक ओर साफ करके दो पीढ़े डालकर, जल और सामने एक लालटेन रखकर दुलारी ने उन्हें भोजन के लिए बुलाया ।

पीढ़े पर बैठकर दुलारी की ओर देखते हुए केशव ने कहा, “इतना भोजन बनाया है दुलारी, तो लखनऊ जाकर जब हमें न्योता दोगी, तो क्या खिलाओगी ?”

लज्जापूर्वक मुस्कराते हुए दुलारी ने कहा, “अधिक तो कुछ किया नहीं ।”

“यह यदि अधिक नहीं है, तो तुम यह कहना चाहती हो कि हम पेटूँ हैं ।”

खाते-खाते केशव ने पूछा, “दुलारी—भोजन बनाना तुमको चाची ने सिखलाया था, या उनके बाद सीखा ?”

दुलारी ने शान्त स्वर में कहा, “उन्होंने सिखाया था ।”

“तभी तो इतना अच्छा बनाती हो !”

केशव की प्रशंसा से दुलारी लज्जित होकर चुप रह गई ।

कृष्णचन्द्र एकाग्र चित्त से भोजन में लगा । केशव की बात सुनकर हँसते हुए उसने दुलारी को लक्ष्य करके कहा, “भोजन कैसा बना है, इसके सम्बन्ध में मुझ कहने की जरूरत नहीं । मैं उसका प्रत्यक्ष प्रमाण देता हूँ । एक बार हमारे प्रोफेसर कहते थे कि छोटे बच्चों की पुस्तक उपयोगी है या नहीं, इसका सबसे पुष्ट प्रमाण यह है कि देखना चाहिए कि लड़के एक घंटे में ही किताब को चीड़-चाड़ के दुरुस्त कर

देते हैं या नहीं। उसी प्रकार यदि भोजन थोड़ी ही देर में समाप्त हो जाय, तो समझना होगा कि भोजन अच्छा बना है।”

केशव ने हँसकर कहा, “इसलिए कहने में और व्यवहार में दोनों ही तरह से यह प्रमाणित हो गया कि तुमने भोजन अच्छा बनाया है। व्यवहार में मैं भी प्रमाण दूँगा किन्तु कृष्णचन्द्र की भाँति जल्दी नहीं।”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “इतना ज्यादा भी नहीं।” कहकर एक पूड़ी मुँह में रख ली।

दुलारी ने जल्दी-जल्दी और कई पूड़ियाँ कृष्णचन्द्र की थाली में रख दी। कृष्णचन्द्र ने मुँह फैलाकर अस्पष्ट भाव से न जाने क्या कहा। कुछ समझा न जा सका। इसके बाद एक-एक कर पूड़ियों को मुँह की भेंट करने लगा।

केशव ने तिरछी निगाह से कृष्णचन्द्र की ओर देखकर कहा, “गाँव-देहातों की निन्दा तो बहुत करते थे, लेकिन देखता हूँ एक ही दिन हवा बदलने से भूख बढ़ गई!”

दुलारी ने लजाते हुए कहा, “नहीं, ज्यादा तो दिया नहीं।”

कृष्णचन्द्र का मुख अम्लान गम्भीर बना रहा। उसने दुलारी की ओर देखकर कहा, “आप उसकी बात से लज्जित न होइएगा। भगवान् की कृपा से अजीर्ण जब भेजा गया, तो वह मेरे पते पर नहीं पहुँचा, रास्ता भूल गया। मैं इसी तरह खाता हूँ—आप लखनऊ में मुझे खिलाइएगा, मैं इतने से कम न खाऊँगा।”

सिर्फ मुस्कराहट से इस बात का उत्तर देकर दुलारी मिठाई लेने हमारे कमरे में गई।

केशव ने कृष्णचन्द्र की खाली थाली की ओर देखकर कहा, “क्या यह किरत भी समाप्त कर दी!”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “हाँ भाई, सचमुच बहुत भूख लगी है। तुम जो कहते हो, वही न क्या? हवा बदल गई?”

केशव ने कहा, “या अच्छा तो नहीं लगा?”

“क्या? भोजन?”

“या बनानेवाली?”

केशव की बात सुनकर कृष्णचन्द्र ने मृदु स्वर में कहा, “यदि यह वान कहो, तो भोजन से मुझे बनानेवाली कहीं अधिक अच्छी लगती है। जैसा रूप, वैसी ही बुद्धि ! यह ठीक तिवारीपुर के पंक की पत्नी है !”

केशव ने हँसकर कहा, “सचमुच मनोहर नहीं तो तुम्हारे जैसे आदमी के मुँह से काव्य की भाषा !”

तश्तरियों में खीर और मिठाई लेकर जब दुलारी आई, तो वह देखती क्या है कि कृष्णचन्द्र की थाली बिलकुल खाली—ठीक जैसे माँज-धोकर रखी गई हो ! दोनों के सामने तश्तरियाँ रखकर दुलारी ने जल्दी-जल्दी लाकर कृष्णचन्द्र की थाली में कई पूड़ियाँ डाल दीं। इसके बाद तरकारी ले आई।

कृष्णचन्द्र ने हाथ बढ़ाकर रोकते हुए कहा, “आपको एक बात बतलाने की जरूरत है। मेरा एक बुरा अभ्यास है। मैं बहुत जल्दी-जल्दी खाता हूँ। और थाली में कुछ छोड़ता नहीं। लेकिन इमी लिए यदि आप बार-बार देती जायँ, तो या तो आपकी पूड़ियाँ चुक जायँगी, या मेरा धीरज ! इन पूड़ियों को यदि तरकारी से खाऊँ, तो खीर के साथ आप और पूड़ियाँ देगी ? तो और जरूरत नहीं। इनको किसी तरह समाप्त करूँगा।”

कृष्णचन्द्र की बात पर केशव हँस पड़ा। कहा, “खीर खाने के समय पूड़ी देना ही होगा, यह नियम तुमको कहाँ से मालूम हुआ ?”

कृष्णचन्द्र ने मुस्कराते हुए केशव की ओर देखकर कहा, “मेरी रुचि ने बताया ?”

भोजन के बाद रामचरण के साथ आधा घंटे तक बात-चीत के बाद दुलारी केशव और कृष्णचन्द्र को सोने के लिए बुलाने आई।

रामचरण के पास के ही कमरे में दोनों के सोने की व्यवस्था हुई थी। दो चारपाइयाँ पास-पास बिछी थी, और उन पर दो स्वच्छ बिछौने थे। चादर, तकिया, कहीं भी मेल नहीं। पास ही एक गोल टेबुल पर कट ग्लास के शमादान में बत्ती जल रही थी। उससे मन्द-मन्द प्रकाश फैल रहा था। टेबुल के ऊपर एक काँच का

और एक क्लई का गिलास। नीचे एक मिट्टी के घड़े में पीने को पानी।

कमरे में प्रवेश करने पर इस प्रकार की सुव्यवस्था देखकर और इस सहज तथा सुन्दर व्यवस्था में दो कमनीय हाथों की निष्ठा अनुभव करके कृष्णचन्द्र और केशव का हृदय प्रसन्न हो गया। सारे दिन के बिना अभ्यास के परिश्रम से थके शरीरों को इस शान्त विश्राम की कल्पना से ही तृप्ति मिली।

कमरे के बाहर से दुलारी ने पूछा, “और कुछ चाहिए क्या?”

केशव ने स्नेहपूर्वक कहा, “चाहते हैं—तुमको छुट्टी देना चाहते हैं। सारे दिन तुमने हम लोगों के लिए परिश्रम किया, अब जाकर विश्राम करो।” इसके बाद व्यग्र होकर केशव ने पूछा, “तुम भोजन कर चुकी हो दुलारी?”

दुलारी ने मृदु स्वर में कहा, “नहीं।”

“छिः, देखो खाने के बाद भी तो हमारे सोने की व्यवस्था करने से काम चल सकता था।”

दुलारी ने थोड़ा हँसकर कहा, “तो इससे क्या! मुझे इससे कुछ कष्ट नहीं होता!”

“अच्छा, और देरी न करो। तुम जाओ।”

दुलारी के चले जाने पर कृष्णचन्द्र ने अपने शरीर को बिछौने पर जितना हो सका लम्बा करके सीधे लेटकर कहा, “आह!”

जल के गिलास में जल उँडेलते हुए केशव ने कहा, “कल कै बजे की गाड़ी से चलना होगा कृष्ण?”

कृष्णचन्द्र ने उधर ही करवट बदलकर कहा, “यह न होगा। कल की बात कल होगी। इस समय बात न कहूँगा, सोऊँगा। बहुत नींद लगी है।”

इसके बाद पानी पीकर, थोड़ी खिड़की खोलकर, बत्ती को बुझाकर, बिछौने के ऊपर आकर जब केशव ने पूछा, “क्यों कृष्ण, सो गये क्या?” तो कृष्णचन्द्र एक स्वप्न देख रहा था—ऐसा स्वप्न, जागते में जिसकी कुछ भी सम्भावना नहीं।

सवेरे जागकर, बाहर आकर कृष्णचन्द्र ने देखा, दुलारी और सिलिया की मा घर के काम में लगी है। दुलारी एक साधारण सेमिज और एक चौड़ी लाल किनारी की साड़ी पहने थी। आँचल को घुमाकर कमर में लपेट लिया था। हाथ में चूड़ियाँ, गले में हार। अभी सूर्योदय न हुआ था—उदित न हुए सूर्य की स्वर्ण किरणों से रंगकर आकाश तथा पृथ्वी लाल रंग की हो गई थी। उसी रश्मिजाल के बीच जगमगाती दुलारी की अमल मूर्ति को देखकर कृष्णचन्द्र एकबार और मुग्ध हो गया। उसकी सद्यः निद्रामुक्त आँखों को ऐसा लगा, मानो उषा मूर्तिमती होकर आँगन में खड़ी है।

कृष्णचन्द्र को सामने देखकर सिलिया की मा ने कहा, “बाबू, मुँह धोने का बन्दोबस्त यहाँ है।”

कृष्णचन्द्र के पास आने पर दुलारी ने पूछा, “रात में नींद में किसी तरह की असुविधा तो नहीं हुई?”

कृष्णचन्द्र ने प्रशान्त भाव से उत्तर दिया, “आपके चले आने पर दो मिनट के भीतर ही सो गया था, और अब उठा हूँ। असुविधा हुई भी हो, तो समझ नहीं पाता!” कहकर कृष्णचन्द्र हँसने लगा।

दुलारी ने कहा, “कोई खास असुविधा हो, तो कहिएगा।”

कृष्णचन्द्र ने हँसते हुए कहा, “द्विधा-संकोच जैसी चीज हम दोनों में से किसी में नहीं है। इस सम्बन्ध में आप निश्चिन्त रहे। लेकिन यदि आप हर समय हम लोगों के लिए इतनी व्यस्त रहेगी, तो कुछ कहने का मौका हम पायेंगे किस तरह?”

दुलारी के होठों पर कुछ मीठी हँसी प्रस्फुटित हो गई। उसने मृदु स्वर में कहा, “बप्पा बीमार, इस गाँव में कोई चीज मिलती नहीं—इच्छा होने पर भी उपाय नहीं।”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “लेकिन चीजों के अभाव की तो आपकी तैयारी परवाह करती नहीं, और आपकी तैयारी में चीजों का अभाव दिखलाई भी नहीं पड़ता।”

दुलारी का मुँह लाल हो गया। एकबार कृष्णचन्द्र की ओर

निहारकर दूसरे ही क्षण आँखें नीची करके कहा, “आप मुझे आप क्यों कहते हैं।”

कृष्णचन्द्र ने पहले ही विचार किया था कि केशव की भी तुलना में उसके साथ दुलारी का सम्पर्क इतना कम है कि केशव तुम कहता है इसी लिए दुलारी की तरह की सयानी लड़की को तुम कहके सम्बोधन करना उसके लिए असंगत था। इसी लिए उसने हँसकर कहा, “इसके लिए कुछ अन्यथा न सोचिएगा। तुम कहने में जिस दिन मुझे अड़चन न मालूम होगी, उस दिन आप ही तुम कहूँगा।”

इस सम्बन्ध में और कुछ न कहके दुलारी ने कहा, “आपको चाय लाऊँ क्या?”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “केशव अभी उठा नहीं। उठने पर एक साथ ही पियेंगे।”

ऊपर आकर कृष्णचन्द्र ने देखा केशव जगा है, लेकिन बिछौना नहीं छोड़ा। बिछौने पर ही अलसाया पड़ा है।

कृष्णचन्द्र को देखकर कहा, “सारी रात जागता ही रहा क्या?”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “सारी रात जागने पर क्या कोई इतनी जल्दी जगता है? सारी रात जागने पर ही लोग इतनी देर बिछौने पर पड़े रहते हैं।”

“यह ठीक है!” कहकर केशव हँसता हुआ उठ बैठा। इसके बाद कृष्णचन्द्र से दो-एक बातें करके बाहर गया।

सिलिया की मा दाल पीसती थी, केशव को देखकर कहा, “बिटिया, बाबू उठे हैं।”

दुलारी रसोईघर में दूध गरम कर रही थी, बाहर आकर केशव को देखकर कहा, “रात में नींद तो आई थी?”

केशव ने हँसकर सिर हिलाते हुए कहा, “सारी रात। तुम्हारी व्यवस्था में तो किसी प्रकार की त्रुटि थी नहीं दुलारी।”

लेकिन दुलारी मन ही मन लज्जित हो रही थी कि वह केशव और

कृष्णचन्द्र की यथोचित व्यवस्था नहीं कर सकी। पिता बीमार चल-फिर सकते नहीं। घर में और दूसरा आदमी नहीं जो दोनों अतिथियों की खातिर का भार ले सके। अतिथि दोनों लखनऊ के रहनेवाले धनियों के लड़के थे। यह ख्याल भी उसे था। सबसे बड़ी समस्या थी अपनी और दोनों युवक अतिथियों की जाति और आयु को भुलाकर अतिथि-सत्कार करने की। एक सोलह साल की किशोरी कुमारी के लिए दो अविवाहित युवकों के सामने आत्म-विस्मृत होकर बिना लजाये काम करने से अधिक कठिन काम नहीं—लेकिन बराबर उनके सामने न जाने और बात न करने से भी काम न चलता था। खातिरदारी करने की इच्छा होते हुए भी मन में संकोच का अनुभव करके दुलारी मन ही मन सोचती थी कि यथोचित खातिरदारी नहीं हो रही। इसी लिए उसने दुःखित होकर कहा, “व्यवस्था क्या कर पा रही हूँ—आप लोगों को कितना कष्ट होता है?”

दुलारी की बात सुनकर केशव के होठों पर शान्त स्निग्ध हँसी फूट पड़ी। उसने गर्दन हिलाकर ज़रा जोर से कहा, “नहीं, थोड़ा भी कष्ट नहीं हो रहा! कल से तुम्हें देखकर मुझे जो आनन्द मिल रहा है, वह कहने से परे है। तुम्हें शायद मालूम नहीं, मेरे सगी बहन नहीं है—एक मौसेरी बहन है, वह लखनऊ में अपने ससुर के घर रहती है, इसी लिए उसके यहाँ जाकर रहने में इस प्रकार का आनन्द नहीं मिलता। जिस रस के स्वाद से मैं इतने दिनों तक वंचित था, वह मैं कल से तुमसे पा रहा हूँ। यह रस बिलकुल मीठा है, उसमें और कोई रस नहीं मिला। तुम जब मेरी बहन हो, तो अब से मेरे साथ तुम्हारा सम्बन्ध केवल भद्रता का नहीं, स्नेह का है, समझती हो!”

दुलारी गर्दन झुकाये तब तक केशव की यह अद्भुत मधुर बातें सुन रही थी। उसे ऐसा अनुभव होता था कि मानों ये वाक्य न थे, बल्कि तेज या शक्ति अपने आप उसके मर्म में प्रवेश कर रही थी। पुलक और आवेश से दुलारी का शरीर थोड़ा-थोड़ा काँप रहा था।

केशव के पूछने पर गर्दन उठाकर उसकी ओर देखते हुए दुलारी ने कहा, “समझी” मुख उसका लाल हो गया था, और अधर पर सलज्ज

मृदु हास्य-रेखा प्रस्फुटित हुई थी। इसके बाद उसने धीरे-धीरे कहा, “आज से आप मेरे भाई हुए।”

केशव ने स्नेहपूर्वक उसके सिर पर हाथ फेरा।

सिलिया की मा का हृदय जितना सरल था, जान पड़ता है मस्तिष्क उतना ही वक्र। अर्थात् कोई बात ही सहज भाव से उसकी समझ में न आती। दूर से दुलारी और केशव की बात-चीत से उसने जो विचार बना लिया, वह सर्वथा विपरीत। उत्सुकतावश वह ठीक से मसाला न पीस रही थी। केशव के चले जाने पर जल्दी-जल्दी दुलारी के पास आ हाजिर हुई, और पूछा, “बिटिया, यही क्या तुम्हारे घरवाले होंगे?”

दुलारी का मुँह लाल हो गया। जल्दी से कहा, “ये मेरे भाई लगते हैं।”

“भाई कैसे बिटिया?”

थोड़ा अड़कर दुलारी ने कहा, “दूर के रिश्ते में।”

उस उत्तर से सन्तुष्ट न होकर सिलिया की मा ने कहा, “गोत के तो नहीं?” मालूम नहीं सिलिया की मा ने कैसे यह धारणा बना ली थी कि केशव इन लोगों का आत्मीय नहीं।

दुलारी ने कहा, “नहीं, गोत के नहीं।”

तब सिलिया की मा थोड़ी देर तक चुप रही, फिर कहा, “यह तुम्हारे घर के होते तो बड़ा अच्छा होता!”

दुलारी ने व्यस्त होकर कहा, “छि: चाची। यह मत कहो, पाप लगेगा।”

सिलिया की मा पाप-पुण्य का निर्णय न कर सकी। वह एक मुहूर्त तक चुप खड़ी रही, इसके बाद मसाला पीसने लगी।

(८)

पाँच दिन हुए पंडित रामचरण लखनऊ आकर हज़रतगंजवाले मकान में रहने लगे हैं। केशव कई दिनों तक पंडित रामचरण का घर ठीक करने में व्यस्त रहा। अब सारा बन्दोबस्त हो जाने के कारण वह

पंडित रामचरण के यहाँ बहुत अधिक जाने की जरूरत नहीं समझता । बहुत जरूरी चीज़ें केशव ने कुछ इकट्ठी करके और कुछ खरीदकर दे दी हैं । नौकर-चाकरों ने अपना काम समझ लिया है । रामचरण की चिकित्सा का भार एक अनुभवी चिकित्सक को सौंपा गया है । और सबके ऊपर पंडित रामचरण की पुत्री दुलारी सारे कामों की देख-भाल करती है । इस समय उनके घर जाना और घूमने जाना समान है । यह मानकर केशव सबेरे उठकर अपन पाठ-घर में बैठ उखड़े मन को किसी तरह पढ़ने में लगा रहा था । इतने ही में अनन्त भीतर आकर एक कुर्सी पर बैठ गये ।

दो-चार इधर-उधर की बातें करने के बाद अनन्त ने कहा, “केशव, तुम्हारी भाभी ने मुझे अजीब मुश्किल में डाल दिया है ।”

केशव ने थोड़ा हँसकर कहा, “यह तो कुछ नई बात नहीं है भैया ! भाभी तो प्रायः तुमको इसी तरह मुश्किल में डाल देती है ।” ऐसा जान पड़ता है कि केशव को बात कुछ मालूम हो गई थी ।

अनन्त ने कहा, “इस बार एक ज़्यादा बड़ी समस्या है—तुम्हारे बिना हल न होगी ।”

पेंसिल बनाते-बनाते केशव ने कहा, “कहो, सुनूँ ।”

अनन्त ने सोचा था कि बात को खूब बनाकर कहेगा, लेकिन वैसा कुछ न बन पड़ा । कहा, “मालती के विवाह के लिए तुमसे आग्रह करने को कहा है ।”

प्रसन्नमुख केशव ने कहा, “यह तो अच्छी बात है—इसके लिए और आग्रह कैसा ? मैं आज ही वर की खोज करूँगा ।”

अनन्त ने थोड़ा हिचकिचाते हुए कहा, “सो बात नहीं । उसका मतलब है कि तुम मालती से विवाह करो ।”

केशव थोड़ा हँसकर पेंसिल बनाने लगा । इसके बाद कहा, “भाभी की यही भूल है । उनका खुद का कहना ही मेरे लिए काफी है—किसी की सिफ़ारिश की क्या जरूरत ? मैं उन्हीं को ऊपरवाला मानता हूँ ।”

मन में प्रसन्न होकर अनन्त ने कहा, “सो वह जानती है । यह बात

नहीं। समझो मैं ही तुम्हारा मत जानना चाहता हूँ।" अपने से स्त्री को बड़ा बनाने की कमजोरी अनन्त में भी थी।

केशव ने बहुत ही सहज ढंग से कहा, "भाभी ने जो कुछ कहा है, उसके सिवा नई बात मुझे कुछ नहीं कहनी। मेरी सम्मति नहीं है।"

अनन्त ने थोड़ा नाराज होकर कहा, "अगर मालती तुमको पसन्द नहीं है, तो मैं तुमसे कुछ नहीं कहना चाहता।"

केशव ने सिर उठाकर कहा, "देखो भैया, तुम जो बात कहते हो, वह बात ही नहीं उठती। रूप और गुण में मालती मुझे पसन्द नहीं है, यह बात मैं कहूँ भी तो तुमको विश्वास न होगा। लेकिन फिर भी मैं राजी नहीं होता, यह जानने की तुम्हें इच्छा हो सकती है। एक तो इतने दिनों के बाद जो नाता बन गया है, उसे एकबारगी उलट-पलट देना होगा। दूसरे, सम्बन्ध पर विचार करने से तुमको खुद ही हँसी आवेगी—साली होगी लहुरी, और भाई होगा साढ़ू। जो तुम्हारे मुँह में कौर डाल सकती है, उसे तुम्हारी छाया पड़ने से गंगा-स्नान करना पड़ेगा।" इतना कहकर केशव हँसने लगा।

अनन्त ने कहा, "यदि तुम्हारी असम्मति इसी लिए है, तो यह तो कोई तर्क नहीं। और कोई कारण है?"

केशव ने कहा, "मेरी दूसरी आपत्ति, यद्यपि यह मेरी पहली आपत्ति होनी चाहिए थी—मेरी विवाह करने की थोड़ी भी इच्छा नहीं। मैं कुछ सयानी लड़की तो हूँ नहीं कि विवाह करके फुसंत मिले।"

"तीसरी आपत्ति?"

तीसरी आपत्ति—"मेरी राय में ऐसा सम्बन्ध करना ठीक नहीं जिससे आत्मीयों की संख्या न बढ़े। सोचो, दूसरी जगह मालती का विवाह होने से मैं तो तुम्हारा भाई रहूँगा ही, मालती का पति तुम्हारा साढ़ू होगा। लेकिन मेरे साथ विवाह होने से क्या होगा? क्यों ठीक है न?"

अनन्त कुछ देर तक केशव के मुँह की तरफ देखता रहा, फिर कहा, "ये सब छोकड़ों की बातें—मैं कुछ भी नहीं जानता। तुम जानो और तुम्हारी भाभी।" कहकर अनन्त उठकर खड़ा हो गया।

केशव ने कहा—“भैया, एक बात भाभी से कह दो, जिससे वे कहीं यह न सोचे कि मैं उनकी अपेक्षा मालती का कम हितू हूँ। अगर मैं देखूँगा कि मालती का विवाह ऐसे वर के साथ होता है, जो मुझसे किसी भी तरह कम है, तो मैं विवाह बन्द कराके स्वयं विवाह कर लूँगा। लेकिन सत्पात्रों की कमी तो है नहीं। और यदि तुम इसलिए घर ही में करने की सोच रहे हो कि खर्च न हो, तो तुमको एक पैसा भी न देना पड़ेगा। मैं और भाभी सब कर लेंगे। मालती का विवाह करके वहन की शादी की साध पूरी करूँगा। मालती का विवाह धूमधाम से अच्छी जगह करेंगे, जिससे वह कहीं यह न सोचे कि पराये आसरे में थी, इसलिए बाहर कहीं धूमकर न देखा, घर ही में कर दिया।”

अनन्त ने मुस्कराते हुए कहा—“पागल सिर्फ पागलखाने में ही नहीं रहते—बाहर भी रहते हैं।” और चले गये।

केशव हँसते-हँसते एक किताब खोलकर पढ़ने लगा।

(९)

इसके बाद तीन दिन और बीत गये। केशव रामचरण के घर न जा सका। आज सवेरे ही निश्चय किया कि दूसरे पहर जाऊँगा। दर्शन की एक किताब लेकर वह पढ़ने के लिए बैठा ही था कि दरवाजे से आवाज आई—“केशव भैया।”

केशव ने पीछे मुड़कर स्नेहपूर्वक कहा, ‘आओ।’

किवाड़ा खोलकर मालती दूध का कटोरा लिये भीतर आई। शीतकाल में गरम दूध से घुआँ निकल-निकलकर मालती के मुँह के आस-पास कुहासे की सृष्टि कर रहा था।

केशव ने हँसकर कहा, “तुम्हीं दूध ले आई, मालती। काली कहाँ है?” काली है घर का नौकर।

मालती ने कहा, “कल रात से उसे बुखार हुआ है। अब तक सिर नहीं उठाया।”

“तो तुम्हीं ने गरम भी किया है?”

“हाँ।”

कटोरा हाथ में लेकर केशव ने एक घूंट पिया। मालती ने पूछा,
“क्या चीनी अधिक है?”

‘नहीं’ केशव ने कहा, “और यदि थोड़ी अधिक हो मान लो, तो हानि ही क्या है? क्या मानव-जीवन ऐसा बड़ा है कि दूध में चीनी कुछ अधिक होने या पान में चूना कुछ कम होने से उसे ग्रहण ही न करना चाहिए। लेकिन ये छोटी-छोटी बातें सच में छोटी नहीं हैं। इन्हीं उपादानों को लेकर हमारा चरित्र बनता है। आज जो दूध का चीनी में साधारण रूप दिखलाई पड़ रहा है, उसी को विराट् रूप में अन्न-वस्त्र में देख सकते हैं। यह तुम निश्चित समझो कि मनुष्यों में जो ये सब कमियाँ देखी जाती हैं, इनके लिए शिकायत करते देखा जाता है, उनकी उत्पत्ति बाहर से नहीं है। सबकी मानव अपने ही भीतर रचना करता है। इसी से मानव का अपने हित की दृष्टि से यह कर्त्तव्य है कि वह अपने आपको संयत करे। अपने भीतर ऐसी कमियों की सृष्टि न करे जिनके लिए अन्त में अपनी ही शिकायत करनी पड़े। मैंने जो यह सब कहा, इसका यह अभिप्राय नहीं कि तुम्हारे दूध में चीनी अधिक है। कल शाम के वक्त भाभी से कुछ बातें हुई थीं, दूध की चीनी के प्रसंग में वे बातें याद आ गईं। यह बात नहीं कि इन बातों का भाभी की बातों से कुछ बहुत सम्बन्ध है। भाभी से मेरी जो बातें हुई हैं, यदि तुमको मालूम हों तो भी, और न मालूम हों तो भी मेरी बात का भाव समझो, और जीवन में उसे उतारने की चेष्टा करो। अपने लिए स्वयं दुख तथा कमियों की सृष्टि न करो।”

दूध की चीनी के उत्तर में इतना लम्बा लेक्चर और यह उपदेश सुनने को मालती तैयार न थी। वह इसका असली भाव न समझकर आश्चर्य से ताकती रह गई।

मालती की मानसिक दशा को समझकर केशव ने हँसकर कहा, “दूध में थोड़ी अधिक चीनी डाल देने से दूध का स्वाद बिगड़ जाता है, यह समझना जिस प्रकार भूल है, उसी प्रकार अधिक चीनी देना भी अनुचित है। लेकिन इस सम्बन्ध में तुम्हें या मुझे कोई चिन्ता करने

की जरूरत नहीं, क्योंकि चीनी तुमने ठीक ही दी है, और दूध मुझे बहुत अच्छा लगा है।”

मालती ने थोड़ी हिचकिचाहट के साथ कहा, “लेकिन यह सब तुम क्यों कह रहे हो, यह तो मैं ज़रा भी न समझी केशव भैया।”

केशव ने हँसकर कहा, “जितना समझ सकी हो, उससे अधिक समझने की इस समय जरूरत नहीं। जब जरूरत होगी, और भी साफ़-साफ़ बतला दूंगा।”

मालती के कुछ कहने के पहले ही रामकली ने घर में घुसते हुए कहा, “देवर, तुम्हारी एक चिट्ठी आई है।” केशव ने चिट्ठी लेकर देखा लिफ़ाफ़े पर अपरिचित अक्षरों में लिखा था उसका नाम और पता। लिफ़ाफ़ा खोलकर देखा, दो पंक्तियों में पत्र समाप्त था। नीचे था दुलारी का हस्ताक्षर।”

रामकली ने पूछा, “किसकी चिट्ठी है देवर।”

‘दुलारी की’ कहकर केशव ने चिट्ठी रामकली के हाथ में दे दी। चिट्ठी में लिखा था, “प्रियवर, आज किसी समय आकर बप्पा से मिलिए। उनके आदेश से चिट्ठी लिखी है। आपकी, दुलारी।”

रामकली ने पूछा, “तुम कल गये हो केशव?”

केशव ने हँसकर कहा, “तीन दिन से नहीं गया।”

“मैं भी दो-तीन दिन से नहीं गई। शायद तुम्हारे भैया भी नहीं गये। बड़ी बेजा बात है! एक लड़की हमारे सहारे पड़ी है, और हम निश्चिन्त बैठे हैं। जाओ केशव, तुम इसी समय जाओ।”

केशव ने कहा, “सोचा था, उस वक्त जाऊँगा, लेकिन जब चिट्ठी देकर बुलाया है, तो अभी जाता हूँ।”

आध घंटे में केशव रामचरण के पास दाखिल हो गया। तिवारीपुर से आने के दस दिन पहले रामचरण को मोतीलाल का अन्तिम पत्र मिला था, लखनऊ आकर उसे पत्र लिखा था, लेकिन उसने न तो भेंट ही की और न पत्र का उत्तर ही दिया। वह लखनऊ में है या नहीं, शरीर कैसा है, यह सब जानने के लिए रामचरण ने केशव से मोतीलाल का पता लेने के लिए कहा।

रामचरण ने कहा, “दुलारी के साथ उमके विवाह की बात तुम जानते हो, यह बात तुम उसको बतला सकते हो; और जरूरत समझो तो विवाह के स्थान, दिन आदि पर भी बात कर सकते हो। और एक बात, अपने साथी कृष्ण को बीच-बीच में आने को कहो। लड़का बहुत अच्छा है। वह मुझे बहुत अच्छा लगता है।”

माथी की प्रशंसा सुनकर केशव मन ही मन प्रसन्न हुआ, और दोनों ही काम करेगा, यह वचन देकर तथा मोतीलाल के मकान का पता लेकर वह चला आया।

अमीनाबाद के पास एक सँकरी गली में उसका मकान। नम्बर के सहारे खोजने में देर न लगी। उस समय शाम हो रही थी। एक सँकरे अँधेरे रास्ते को पारकर केशव और कृष्णचन्द्र मकान के भीतर के बरामदे में आये। दाहिनी तरफ़ ऊपर को सीढ़ी गई थी। बाईं तरफ़ एक नौकर बैठा कुछ लालटेनों और लैम्पो के कल-पुर्जे साफ़ कर रहा था। एक दिया जल रहा था। उसकी शिखा के प्रकाश से दुगुना धुआँ निकल रहा था। केशव ने उस आदमी से मोतीलाल का कमरा पूछा।

वह उस समय एक टूटी डिज लालटेन का कल्ला दुरुस्त कर रहा था। अपने कठिन काम से छुट्टी पाकर उसने गर्दन उठाई, और कहा, “मालूम नहीं बाबू, मैं नया आदमी हूँ।”

यहाँ समय बरबाद करना व्यर्थ समझकर केशव और कृष्णचन्द्र सीढ़ी की तरफ़ बढ़े। सन्ध्या होने के पहले ही सीढ़ी पर इतना अन्धकार हो गया था कि यह कह सकना कठिन था कि सीढ़ी ऊपर को गई है या नीचे को, सीढ़ी गई है या टेढ़ी। कृष्णचन्द्र ने कहा, “बहुत अधिक अँधेरा है। ज़रा रोशनी तो दिखाओ।”

बोलते ही वह व्यक्ति मिट्टी का दिया उठाकर उनके इतने निकट आ खड़ा हुआ कि केशव ने घबड़ाकर कहा, “हटो, रोशनी नहीं चाहिए। झुँप से जान जाती है।”

लेकिन उस धुंधले प्रकाश से भी बहुत काम चला। सीढ़ियों का कुछ अन्दाज़ा मिलने पर दोनों धीरे-धीरे दोमंजिले पर पहुँचे। खोजकर मोतीलाल का कमरा मालूम कर लिया, और वहाँ दाखिल हुए।

एक युवक मेज के पास बैठा पढ़ रहा था। केशव के पूछने पर वह उठ खड़ा हुआ, और आगन्तुकों को घर के भीतर भुलाया।

भीतर जाने पर केशव ने अपना प्रश्न दोहराया।

युवक ने कहा, “आठ-दस दिन हुए, बे घर गये हैं। उनका विवाह इसी फागुन में होनेवाला है। उसी का बन्दोबस्त करने गये हैं। कल सवेरे आयेंगे। आप लोग कहीं से आये हैं?”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “जहाँ उनका विवाह होगा, हम वहीं से आते हैं।”

कृष्णचन्द्र की बात सुनकर युवक की उत्सुकता बढ़ गई। उसने पूछा, “तो क्या आप सुल्तानपुर से आते हैं?”

“नहीं, क्यों?”

युवक ने थोड़ी हिचकिचाहट के बाद कहा, “राजबहादुर बाबू सुल्तानपुर में ही तो वकालत करते हैं न?”

“वे कौन हैं?”

युवक ने साधारण आश्चर्य के साथ एकबार कृष्णचन्द्र और एकबार केशव के मुँह की ओर देखकर कहा, “उन्हीं की लड़की के साथ तो मास्टर साहब का विवाह हो रहा है!”

युवक की बात सुनकर केशव ने एकबार कृष्णचन्द्र की ओर भेदभरी दृष्टि डाली, और कहा, “हमे जब उनसे भेंट करनी ही है, तो इस समय इन सब बातों से कुछ लाभ नहीं। कल कितनी देर में आने से उनसे भेंट होगी?”

“वे आवेंगे बहुत तड़के। आप लोग दस बजे से पहले आइए।”

रास्ते के बाहर आकर केशव ने कहा “मामला क्या है?”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “हो सकता है लड़का जो कह रहा है, पहले की बात हो—या मोतीलाल ने असली बात यहाँ न बताई हो।”

केशव ने कृष्णचन्द्र के अनुमान को उचित मानकर भी कहा, “हो सकता है, लेकिन मेरे मन में खटका हो रहा है। ऐसा जान पड़ता है, कुछ दाल में काला है।”

कृष्णचन्द्र ने स्वाभाविक ढंग से कहा, “मोतीलाल के साथ जब

तक बातचीत न हो ले, तब तक व्यर्थ के अनुमानों में समय बरबाद करने से लाभ नहीं।”

केशव ने मुस्कराकर कहा, “अनुमान को बिलकुल सत्य नहीं प्रमाण कर रहा, लेकिन अनुमान के द्वारा ज्ञान की खोज हुई है, यह मानते हो कि नहीं?”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “यह स्वीकार करने पर भी जब ज्ञान इतना निकट है—कुछ घंटों के बाद ही मिल जायगा, तो अनुमान को लेकर परेशान होने की क्या जरूरत?”

केशव ने कहा, “यही ठीक। तो आज रात में पंडित रामचरण को अनुमान के द्वारा परेशान करने का काम नहीं—कल सवेरे बिलकुल ताज़ा ज्ञान लेकर उनके पास चलेंगे।”

(१०)

दूसरे दिन सवेरे केशव और कृष्णचन्द्र ने जब मोतीलाल के घर में प्रवेश किया, उस समय तक उस मकान के सब ओर प्रकाश नहीं आया था। कहीं मोतीलाल बाहर न चला जाय, इसी भय से सवेरे ही सवेरे ये लोग आगये थे। एक अपरिचित युवक मोतीलाल के कमरे में टेबुल के पास बैठा लिख रहा था। केशव और कृष्णचन्द्र को दरवाजे के सामने खड़ा देखकर कुर्सी से खड़ा हो गया, और कहा, “आइए, कल शाम के वक्त आप ही पूछ रहे थे?”

केशव ने कहा—“जी हाँ। आप ही शायद मोतीलाल जी हैं?”

“जी हाँ।”

तब केशव ने अपना परिचय दिया, और आने का कारण बतलाया।

केशव की बात सुनकर कुछ देर चुप रहने के बाद मोतीलाल ने कहा, “पंडित रामचरण की चिट्ठी आज आने पर मिली है। इस समय उन्हीं की चिट्ठी का उत्तर लिख रहा हूँ। आप लोग कहें, जिसे कि आज ही उनको उत्तर मिलेगा।”

मोतीलाल के इस उत्तर से केशव भीतर की बात तनिक भी जान न सका। इसलिए कल शाम के वक्त जो सन्देह का काँटा लगा था,

उसे निकाले बिना उसे चैन न थी। उसने बात को यहीं समाप्त न करके कहा, “देखिए, जिस वजह से वे आपके साथ भेंट करने को इतने चिन्तित हैं, उम सम्बन्ध में चिट्ठी में सारी बात न लिखी जा सकेगी।”

थोड़ा सोचकर मोतीलाल ने कहा, “पंडित रामचरण के साथ आपका क्या सम्बन्ध है, और उनकी दुनिया से आपको कितनी जानकारी है, यह मालूम होने पर इस सम्बन्ध में बातचीत करने में मुझे आसानी होती।”

केशव ने पंडित रामचरण के साथ अपनी आत्मीयता बतलाई, और मोतीलाल दुलारी के साथ विवाह करके समाज की रूढ़ियों की दीवाल को जिस तरह गिरा रहा है, इसके लिए धन्यवाद दिया। केशव ने कहा, “युक्त-प्रान्त के हिन्दू-समाज में आपका नाम आदर से लिया जायगा। मनुष्य को उसके स्वाभाविक अधिकार से वंचित कर दिया गया है, और आप उसे वह स्वाभाविक अधिकार दे रहे हैं, इसके लिए आप हिन्दू-समाज में श्रद्धास्पद होंगे।”

केशव के तेजयुक्त वाक्यों को सुनकर मोतीलाल का मुँह पहले तो फट हो गया। लेकिन फिर सँभलकर अविचल भाव से बोला—“आप मुझे जो सम्मान दे रहे हैं, खेद है कि मैं उसका पात्र नहीं। बात इतनी ही नहीं कि मैं पंडित रामचरण की कन्या के साथ विवाह न करूँगा, बल्कि मेरा विवाह अन्यत्र ठीक भी हो गया है।”

मोतीलाल की इस बात पर तनिक भी आश्चर्य प्रकट न करके केशव ने कहा, “कल शाम के वक्त आपके कमरे में इसी तरह की बात सुनी थी। लेकिन वह इतनी अद्भुत और अनुचित जैसी कि आपके मुँह से सुने बिना उस पर तनिक भी विश्वास नहीं किया जा सकता था।”

मोतीलाल ने मुस्कराते हुए कहा, “कभी-कभी साधारण बात भी अद्भुत तथा अनुचित जान पड़ती है। उसके लिए मैं आपको दोष नहीं देता।”

कृष्णचन्द्र अब तक चुप था। मोतीलाल की इस धोखेबाजी की बात को सुनकर वह मन ही मन जल रहा था। उस पर केशव की भर्त्सना का इस निर्लज्जता के साथ उत्तर सुनकर उससे और न रहा गया। क्रुद्ध स्वर

मे कहा, “हमको दोष नहीं दे सकते, यह सुनकर धन्य हुए ! लेकिन तब भी बात साधारण है, यह आपको सिद्ध करना होगा।”

कृष्णचन्द्र की ओर मुँह फिराकर मोतीलाल थोड़ी देर तक ताकता रहा। इसके बाद कहा, “मेरे सम्बन्ध में आप जैसी धारणा बनाना चाहें, बना सकते हैं,—लेकिन अपने किसी काम की सफ़ाई दूँ या न दूँ यह मेरे अधिकार की बात है। मेरी इच्छा के बिना मेरे सम्बन्ध में कुछ जानने की जितनी चेष्टा आप करेंगे, वह होगी अनधिकार-चेष्टा।”

मोतीलाल का उत्तर सुनकर कृष्णचन्द्र का क्रोध और भी बढ़ गया। भाँड़ के मुँह से ब्रह्मज्ञान। असह्य क्रोध के कारण उसने जोर से कहा, “आपके सम्बन्ध में जानने की हमारी थोड़ी भी इच्छा नहीं, लेकिन एक ब्राह्मण-कन्या को फुसलाना, और फिर स्वार्थ के लिए उसे छोड़ देना यह साधारण बात किस तरह, यह जानने की हमारी इच्छा ही नहीं अधिकार भी है।”

इस बार मोतीलाल का मुँह क्रोध से लाल हो गया। कहा, “आपने जो कुछ कहा, उसका उचित उत्तर दे सकता था, लेकिन आप मेरे घर में हैं, यह बात मैं भूला नहीं।” केशव से कहा, “आप मुझे और क्या कहेंगे, यह तो मुझे ज्ञात नहीं। लेकिन अपने साथी को समझा दीजिए कि किसी के घर में चढ़कर इस प्रकार अपमान करने में मर्दानगी नहीं है।”

केशव उठकर खड़ा हो गया। कहा, “अपमान करने की भी जरूरत नहीं, समझाने की भी जरूरत नहीं। पंडित रामचरण ने हमसे जो कुछ कहने के लिए कहा था, हमने कह दिया। अब आप क्या कहना चाहते हैं, बतलाइए।”

मोतीलाल ने कहा, “आप कहिएगा कि आज ही उनके पत्र का उत्तर मिल जायगा।” थोड़ा सोचकर कहा, “देखिए, इस सम्बन्ध में दुलारी ने मुझे एक पत्र दिया था। उसकी चर्चा पंडित रामचरण की चिट्ठी में कई बार रहेगी। लेकिन कई कारणोंवश मैं वह चिट्ठी उनके पास न भेजूँगा। आप लोग यदि चिट्ठी पढ़ें, तो अपनी तरफ़ की

बात जानकर बहुत कुछ निश्चिन्त हो सकते हैं।” कहकर मोतीलाल ने लेटरपैड से एक चिट्ठी निकाली।

केशव दुलारी की सम्मति के बिना उसका पत्र पढ़ने को राजी न हुआ।

मोतीलाल ने कहा, “चिट्ठी अगर साधारण न होती, तो मैं किसी को न देता। इतना ही नहीं, इस चिट्ठी के सुनने से दुलारी की कुछ हानि न होगी। आपको पढ़ने में आपत्ति है, तो मैं सुनाता हूँ।”

“श्रद्धास्पद, आपका पत्र मिला। आपके उपदेश और अनुरोध के अनुसार सब बातों पर जहाँ तक हो सका, विचार किया है। इस सम्बन्ध में अपने दुःख-सुख पर विचार करने की मुझे जरूरत नहीं। जिस विचार से मैंने आपका पहले का प्रस्ताव स्वीकार किया था, उसी के फलस्वरूप आपके इस प्रस्ताव को भी स्वीकार करती हूँ। यह बात बप्पा को जल्दी न बताने से यदि कुछ हर्ज न हो, तो कुछ दिन बाद बताइएगा। वे इस समय इतने अस्वस्थ हैं, कि रोग की पीड़ा के साथ मेरे विवाह की चिन्ता भी लग जाने से अच्छा न होगा। आपकी दुलारी। अब इस चिट्ठी से आप ही सोचिए कि दुलारी का कितना हानि-लाभ हो रहा है।

केशव ने कहा, “सिर्फ इस चिट्ठी से विचार नहीं किया जायगा, क्योंकि इसमें दुलारी ने अपनी बात तो कुछ लिखी नहीं। लेकिन इससे क्या। हम चलते हैं। आपने जैसा कहा है पंडित रामचरण से कह देंगे।”

रास्ते से बाहर निकलकर कृष्णचन्द्र ने उत्तेजित स्वर में कहा—
“पढ़ा-लिखा होने पर भी आदमी है जानवर !”

केशव ने कहा, “जानवर के साथ तुम अकारण ही अन्याय कर रहे हो कृष्ण। जानवर इतना नीच होता है, यह तुम्हारा अनुमान-मात्र है, तुम्हारे पास कोई प्रमाण नहीं।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “यह तो ठीक है।”

दोनों मोतीलाल और दुलारी के सम्बन्ध में तरह-तरह की आलोचना करते हुए जा रहे थे।

जाड़े की रात में सिकुड़ा लखनऊ शहर जगकर भी अभी कुहासे की रज़ाई ओढ़े अलसाया पड़ा था। रास्तों में अब भी ताँगों, मोटरों की

भीड़ न थी। केशव और कृष्णचन्द्र फुटपाथ से मोतीलाल और दुलारी के सम्बन्ध में सोचते हुए जा रहे थे।

केशव ने सोचा यह कठोर समाचार सुनकर रोगी रामचरण की क्या दशा होगी। सारे समाज की उपेक्षा करके उन्होंने यह ठान ठाना था, अब किस तरह समाज के सामने नतमस्तक होकर कहेंगे, 'भूल हुई, शरण दो।' उधर कृष्णचन्द्र सोच रहा था मोतीलाल के इस निष्ठुर व्यवहार ने दुलारी के हृदय को किस तरह विदीर्ण कर दिया है, फिर भी रोगी पिता की सेवा में किस मनोयोग से लगी रहती है, और अपने अन्तर के हाहाकार की एक रेखा भी मुख पर खिचने नहीं देती।

अचानक नीरवता को भंग करते हुए केशव ने कहा, "क्या, दुलारी की बात सोच रहे हो?"

कृष्णचन्द्र ने चौंककर कहा, "ठीक ही सोच रहा था। मोतीलाल ने उस पर कैसा जुल्म किया है?"

"इसी से मोतीलाल पर तुम बहुत नाराज हो?"

"कम से कम प्रसन्न तो नहीं हो रहा।"

"मुझे तो ऐसा लगता है प्रसन्न ही हो रहे हो।"

"किस पर?"

"दोनों पर—मोतीलाल दुलारी को छोड़ रहा है, इसलिए मोतीलाल पर, और दुलारी त्यक्त हो रही है, इसलिए उस पर।"

केशव की पीठ पर मुक्का लगाते हुए कृष्णचन्द्र ने कहा, "उल्टू, तुम बहुत नीच हो! एक के मुँह से कौर गिरते न गिरते 'हों' करते दोड़े।"

केशव ने हँसकर कहा, "मैं या तुम।"

बात में कुछ सत्यता भी थी। मोतीलाल के कमरे में जब कृष्णचन्द्र उत्तेजित होकर क्रोध प्रकट कर रहा था, तो उस क्रोध के भीतर एक बहुत धुंधली हर्ष की रेखा खिंची दिखलाई पड़ती थी। लेकिन उस हर्ष का उद्गम कहाँ था, किस लिए था, यह सब उस समय अज्ञात था, दीख रहा था केवल उसका अस्तित्व। लेकिन केशव ने परिहास की चिकोटी लेकर जैसे उसकी मुप्त भावना को जगा दिया, और कृष्णचन्द्र

की आँखों के सामने लखनऊ के वजाय तिवारीपुर का दृश्य एक क्षण के लिए चित्र की भाँति खिच गया। कृष्णचन्द्र दालान में खड़ा था, और दुलारी रसोईघर के पास बैठी आटा गूँध रही थी। कृष्णचन्द्र की आँखों में दुलारी का जो सौन्दर्य सोया पड़ा था, वह आशा-प्रभात की प्रथम किरण पड़ने से जग पड़ा।

रास्ते के एक मोड़ पर पहुँचने पर कृष्णचन्द्र ने कहा, “अब चलूँ। उस वक्त फिर मिलूँगा।”

मज्रवूती के साथ कृष्णचन्द्र का हाथ पकड़कर केशव ने कहा, “और पंडित रामचरण को सन्देश सुनाने नहीं चलोगे। वे तुम्हें पूछा भी करते हैं।”

एक बार और चेष्टा करके जब उसने देखा कि केशव छोड़ेंगा नहीं, तो कहा, “चलो, चलें।”

केशव ने हँसकर कहा, “अभी से इतनी लज्जा क्यों?”

कृष्णचन्द्र ने भी हँसकर उत्तर दिया, “तुम्हारी निर्लज्जता को देखकर!”

(११)

मुँह धोकर रामचरण चारपाई के ऊपर बैठे जप कर रहे थे। दुलारी ने एक कटोरे में दूध लाकर कहा, “बप्पा, दूध लाई हूँ।”

रामचरण ने कहा, “टेबुल के ऊपर धर दो। थोड़ी देर में पीऊँगा।”

इसके बाद आँखें टेढ़ी करके लड़की की ओर ताकते हुए कहा, “हाँ दुलारी, मोतीलाल की कोई चिट्ठी मिली है?”

दूध का कटोरा टेबुल पर रखते हुए दुलारी ने कहा, “न बप्पा, यहाँ तो मिली नहीं।”

“कल केशव से जाने को कहा था। क्या उसने आकर कुछ सन्देशा दिया है?”

“नहीं, वे तो नहीं आये।”

रामचरण ने केशव से मोतीलाल की खबर लेने के लिए कहा, सुनकर दुलारी को शंका हुई। जब केशव सच्चा हाल लेकर रामचरण के पास

उपस्थित होगा, तब रामचरण को कितनी पीड़ा होगी, यह सोचकर दुलारी चिन्तित हो गई। पीड़ा के वेग को कुछ कम रखने के लिए दुलारी ने सोचा, पिता को मोतीलाल के सम्बन्ध में कुछ बतला दूँ, उसने कहा, “बप्पा।”

लड़की की हँधी हुई गम्भीर वाणी से चकित होकर रामचरण ने पूछा, “क्या बेटा?”

“इस सम्बन्ध में उनको और जोर देने की जरूरत नहीं।”

“किसको?”

थोड़ा हिचकिचाकर साफ़-साफ़ कहा, “मास्टर साहब को।”

लड़की की बात और उसके भाव से आश्चर्य-चकित होकर रामचरण ने कहा—“मैं तो तुम्हारी बात ही नहीं समझ पाता। किस बारे में उस पर जोर देने की जरूरत नहीं?”

थोड़ी देर के लिए दुलारी का मुँह लाल हो गया। लेकिन संकोच और हिचकिचाहट को कर्त्तव्य से दबाकर उसने धीरता के साथ कहा, “यदि उन्होंने अपना विचार बदल दिया हो, तो विवाह के बारे में उन पर जोर देने की जरूरत नहीं।”

यह सुनकर रामचरण के माथे पर बल पड़ गये। उद्विग्न होकर पूछा, “क्यों बिटिया, क्या उसने तुमसे कोई बात कही है?”

दुलारी ने हिचकिचाते हुए कहा, “हाँ, कुछ कहा है। लेकिन बाकी बात अब भी मालूम नहीं।” इसके बाद हृदय की सारी शक्ति लगाकर उसने कहा, “लेकिन बप्पा, बाकी बात जानने की क्या जरूरत है? मैंने तो उनको लिख दिया है कि हमारी असम्मति नहीं है।”

रामचरण समझ गये कि मोतीलाल को दुलारी ने जो उत्तर दिया है, वह स्वाभिमान के सिवा और कुछ नहीं। इस स्वाभिमान के पीछे प्यारी बेटा की कितनी वेदना छिपी है, उसका अनुमान करके रोगी रामचरण की आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगी। मुँह से एक शब्द न निकला। रुके हुए क्रोध से सारा शरीर और मन पागल हो उठा। समाज के साथ लगातार संग्राम करके क्षत-विक्षत होने का यह पुरस्कार !

रामचरण की यह दशा देखकर दुलारी को अत्यन्त पीड़ा हुई।

मोतीलाल के इस व्यवहार से उसे जितना ~~बुरा~~ ~~हो~~ ~~था~~, रामचरण के हृदय पर उसका दसगुना अधिक आघात पहुँचा है, ~~इससे दुःखित हो जाता है~~। पिता की चारपाई पर हाथों के बल झुककर दुलारी ने कहा, “बप्पा, इससे दुःखित क्यों होते हैं। उन्हीं के लिए राजी हुए थे। एक बार और उनका अनुरोध रखो।”

जिस तरह पिता की मृत्यु पर शोकातुर सन्तान को जब माता सान्त्वना देती है, तो सन्तान का हृदय कचोटने लगता है, उसी प्रकार दुलारी के मुँह से सान्त्वना की बात सुनकर रामचरण व्यथित हो उठे।

दुलारी के सिर पर सहानुभूति के साथ अपना हाथ रखकर रामचरण ने कहा, “बिटिया, क्या तू उसे क्षमा कर देगी?”

पिता की स्नेहयुक्त आँखों की ओर निहारकर दुलारी ने कहा, “तुम्हारे क्षमा करने पर मैं कर दूँगी।” तुम्हीं तो कहते हो बप्पा कि सभी दुःखो-कष्टों में भगवान् का कृपा-हाथ रहता है। तो इसको हम भिन्न कैसे समझे?”

इस इकलौती बेटी के साथ रामचरण का व्यवहार जैसा था, वह सर्वथा पिता-पुत्री का-सा व्यवहार न था। परस्परावलम्बन तथा स्नेह से दोनों में ऐसी सकोचहीनता आगई थी, जैसी माता और पुत्री में ही देखने में आती है। रामचरण केवल पिता के ही कर्त्तव्यों का पालन न करते, माता के भी कर्त्तव्यों का पालन करते।

रामचरण ने पुत्री की बात सुनकर प्रगाढ़ स्नेह के स्वर में कहा, “नहीं बेटी, कभी भिन्न नहीं समझेंगे। इस घटना में भी भगवान् की कृपा का हाथ है। इससे मंगल ही होगा, अमंगल नहीं।” यह कहकर लड़की के सिर पर दोनों हाथ रखकर रामचरण आँखें मूँदकर मन ही मन पुत्री को एकाग्र भाव से आशीर्वाद देने लगे।

पूर्व की खिड़की से सूर्य की किरणें कमरे में आकर पड़ रही थीं, जैसे वे नया आलोकमय मार्ग दिखला रही हो।

सीढ़ी पर किसी के पैरों की आहट सुनकर रामचरण ने कहा, “शायद केशव आ रहा है।”

दुलारी ने बरामदे में आकर देखा केशव और उसके पीछे कृष्णचन्द्र आ रहे हैं।

अचानक दुलारी को सामने देखकर दोनों को कुछ कष्ट मालूम हुआ। दुलारी से भेट होगी, यह जानकर भी उनका ऐसा अनुमान न था कि पहले दुलारी से ही भेट होगी। वे दुलारी से क्या कहेंगे, कैसे कहेंगे, कुछ भी सोच न सके।

दुलारी ने मुस्कराते हुए उनसे कहा, “आइए, बप्पा आपका ही रास्ता देख रहे थे।” दुलारी की मुस्कराहट से दोनों की हिचकिचाहट जाती रही।

केशव अभी कुछ उत्तर दे भी न पाया था कि दुलारी कमरे में चली गई, और दो कुर्सियाँ लाकर पिता की चारपाई के पास लगा दीं, और जब तक दोनों आन्दर आये, वह कमरे से बाहर चली गई।

इस असह्य कठोर संवाद को दुलारी के सामने न कहना होगा, इससे केशव की चिन्ता कुछ कम हुई। उसने और देरी करना ठीक न समझकर कहा, “हम मोतीलाल से मिल आये हैं।” लेकिन इसके बाद क्या कहे, कुछ सोच न सका। वह अचानक रुक गया।

काले बादलों के बीच सहसा बिजली कौंध जाने से मन की जो दशा होती है, रामचरण के मन की भी कुछ क्षणों के लिए वही दशा हुई। लेकिन अगले क्षण अपने आपको सँभालकर सहज भाव से उन्होंने कहा, “तुमको नाहक कष्ट दिया। उसके साथ अब हमारा कुछ सम्बन्ध नहीं।” इसके बाद दुलारी से कुछ देर पहले जो बातचीत हुई थी, वह भी रामचरण ने बतला दी।

रामचरण की बात ध्यान से सुनने के बाद केशव ने कहा, “हमने दुलारी की वह चिट्ठी देखी है। उस चिट्ठी से पता चला कि दुलारी का कैसा हृदय है। ऐसा संयम किसी उच्च शिक्षा पाये पुरुष में भी गौरव की चीज है।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “उसका लव-मात्र भी यदि मोतीलाल में होता ! मुझे ऐसा जान पड़ता है, मोतीलाल दुलारी के बिलकुल उपयुक्त नहीं,

इसी लिए भगवान् ने ऐसा किया है। इसमें दुःख करने की कुछ भी बात नहीं।”

कृष्णचन्द्र अभी शायद कुछ और कहता, लेकिन केशव के मुंह की ओर देखकर चुप हो गया। केशव की आँखों में एक रहस्यमय हँसी खेल रही थी। उसका अर्थ समझने में कृष्णचन्द्र को देरी न लगी, और वह शर्म से कुछ लाल हो गया।

रामचरण ने कहा, “तुम जो कह रहे हो, वह बिल्कुल ठीक है कृष्ण। लेकिन हमारा ज्ञान इतना संकीर्ण, हमारी दृष्टि इतनी क्षीण है कि हम नहीं देख पाते कि अमंगल में भी मंगल छिपा है।”

इसी समय दुलारी ने कमरे में प्रवेश किया। उसके हाथ में कुछ खाने के लिए और दो कटोरों में दूध था। टेबुल के ऊपर रखकर टेबुल केशव और कृष्णचन्द्र के बीच में रख दी। दुलारी के आने से बात वहीं पर रुक गई। रामचरण तकिये के सहारे आधे लेट गये। केशव को यह चुप्पी अच्छी न लगी, इसलिए इस मौन को भंग करने के लिए उसने कहा, “दुलारी, तुम जलपान के लिए जो लाई हो, वह दो आदमियों के लिए है तो काफ़ी, लेकिन अकेले कृष्णचन्द्र के लिए अधिक नहीं है। मैं तो घर से ही जलपान करके चला हूँ, इसलिए कृष्णचन्द्र यह सब ले सकते हैं।”

दुलारी ने कहा, “तो मैं आपके लिये और लिए आती हूँ।”

कृष्णचन्द्र ने थोड़े कातर भाव से दुलारी से कहा, “मैं ऐसा पेट्रू हूँ, यह तुमने उसकी बात से इतनी आसानी से समझ लिया। क्या तुम सच में समझती हो कि दो कटोरा दूध और इतना खाने का सामान एक आदमी की खुराक है?”

दुलारी ने शरमाते हुए मुस्कराकर कहा, “नहीं। यह कुछ बहुत थोड़े हैं।”

केशव ने हँसते हुए कहा, “इसमें समझने, न समझने की क्या बात ! यह तो अनुभव की बात है। तिवारीपुर में पूड़ियाँ खाने की बात अब भी दुलारी को याद होगी। तीन दर्जन पूड़ियाँ खाने के बाद खीर के साथ पूड़ी खाने की बात भूली तो नहीं हो दुलारी ?”

मुस्कराते हुए दुलारी ने कहा, “नहीं, नहीं, आप बहुत बड़ा रहे हैं।”

कृष्णचन्द्र ने थोड़ा उत्तेजित होकर कहा, “तो बढ़ाओ; लेकिन खीर के साथ पूड़ी खाना कौन-सा अनुचित काम है ? सभी तन्दुरुस्त शरीफ आदमी खीर-पूड़ी खाते हैं।”

खाने की बात पर दो मित्रों का झगड़ा, और उनके बीच दुलारी की यह अवस्था देखकर रामचरण मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे। उन्होंने कहा, “तुम ठीक कहते हो, कृष्ण, सभी तन्दुरुस्त शरीफ आदमी खीर-पूड़ी खाते हैं। खाना अनुचित नहीं, और इसमें लज्जा भी नहीं। लज्जा तुम न खा सकने में। केशव तुमको जो बड़प्पन दे रहे हैं, उसकी एक दिन हमारे सामने परीक्षा हो।” फिर लड़की की ओर देखकर कहा, “क्या आज प्रबन्ध हो सकता है बेटी ?”

थोड़ा सोचकर दुलारी ने कहा, “हाँ, आज रात में हो सकता है।”

रामचरण ने केशव और कृष्णचन्द्र से रात में यही भोजन करने को कहा। मोतीलाल की घटना से सबके मनो को जो व्यथा हुई थी, वह खाने के हास-परिहास में लुप्त हो गई, और सबके मन हलके हो गये।

(१२)

कई दिन के बाद तीसरे पहर रामकली अपने कमरे में बैठी एकाग्र चित्त से रामायण पढ़ रही थी। लक्ष्मण सीता की आज्ञा से मायामृग के पीछे गये थे, और साधुवेश में रावण आकर द्वार पर भीख के लिए खड़ा था। इसी समय केशव ने कमरे में प्रवेश करते हुए पुकारा, “भाभी !”

रामकली ने पुस्तक से आँख उठाई, और हँसते हुए कहा, “क्या देवर, सोने का मृग ले आये ?”

केशव ने हँसते हुए कहा, “सच ले आया हूँ। देखोगी, आओ।”

रामकली ने हँसकर कहा, “यहीं ले आओ। रेखा से बाहर जाने में डर लगता है।”

केशव ने थोड़ी उलझन के साथ कहा, “नहीं भाभी, जल्दी आओ। मेरा एक मित्र मालती को देखने आया है। वह यदि विद्या, बुद्धि, गुण, धन सबमें मुझसे अच्छा न हो, तो तुम मुझे जो कुछ करने को कहोगी, करूँगा।”

रामकली ने केशव से मालती के साथ विवाह करने को कहा था, लेकिन केशव ने उसकी बात नहीं मानी थी। इससे रामकली के स्वाभिमान को ठेस लगी थी। धीरे-धीरे वह दर्द कम हो गया था। किन्तु फिर भी चोट खाये स्वाभिमान के स्वर में कहा, “मुझे जरूरत नहीं !”

केशव ने हँसकर कहा, “मैंने अपने साथ तुलना की है, इसी से तुम न उठोगी, अच्छा सुधार किये देता हूँ। देखने में भैया से सुन्दर। पढ़ा-लिखा भैया से अधिक, और धन में भैया को तीन बार खरीद सकता है। मोटर रास्ते में खड़ी है। देखने से ही जान जाओगी। साइलेण्ट मिनर्वा, अठारह हजार रुपया दाम।”

रामकली ने झूठा क्रोध दिखलाते हुए कहा, “भैया की उपमा दे रहे हो। यह सोचते हो क्या कि मैं मोह जाऊँगी !”

केशव ने हँसकर कहा, “न मोह जाना ही ठीक है। पतिव्रता का यही लक्षण है।”

रामकली ने हँसकर कहा, “तुमसे बातों में कौन पार पायेगा ? बातें रँगने में तो उस्ताद हो !”

केशव ने कहा, “इसलिए बतबढ़ाव न करके भैया को जल्दी से समझा दो। कहो, प्यारेशंकर पाँडे के पुत्र कृपाशंकर। सुनते ही वे समझ जायँगे। और तब तुम्हें भी समझने में देर न लगेगी।

जाते-जाते केशव ने कहा, “कुछ पान बाहर भेजवा दो। और जो कतलियाँ और नमकीन बनाया था, वह और है क्या ? तुम्हारे हाथ का भोजन करा देने से लोभ और बढ़ जायगा।

रामकली ने मुँह बनाकर कहा, “खूब रँगना जानते हो !”

केशव हँसते-हँसते चला गया।

अनन्त उस समय पास के कमरे में जमा-खर्च का हिसाब लगाने में व्यस्त थे। जमा से खर्च था अधिक, फिर भी कुछ रोकड़ में था। उन्हें इसका कारण मालूम ही न होता था। उसी समय रामकली ने आकर खबर दी ‘किन्ही प्यारेशंकर पाँडे के पुत्र कृपाशंकर मालती को देखने आये हैं।’

केशव ने जो बात कही थी, वही ठीक निकली। रामकली की बात

सुनते ही अनन्त का मन और अनन्त की बात सुनकर रामकली का मन आनन्द और विस्मय से भर गया। कृपाशंकर था स्वर्गीय प्यारेशंकर पाँडे का इकलौता लड़का, और डेढ़ लाख सालाना की आमदनी का मालिक ! सिर्फ़ यही नहीं, विश्वविद्यालय का वह एक जगमगाता रत्न, अर्थात् लक्ष्मी और सरस्वती दोनों का कृपापात्र !

अनन्त ने कहा, “बड़े पुण्य से मालती का यह विवाह होगा। मैं बाहर चला। तुम मालती को थोड़ा साफ़ करा दो।”

रामकली ने कहा, “मालती को सिगार कराकर दिखाने की ज़रूरत नहीं। अगर आँख में चढने को है, तो ऐसे ही चढ़ेगी।”

अनन्त ने हँसकर कहा, “अपनी बात से जान पड़ता है, तुममें इस दुःसाहस ने घर किया है। इन आँखों ने छत से लुक-छिपकर किसी चीज़ को जैसा देखा है, क्या तुम्हारा ख्याल है दुनिया की सब चीज़ें उसी तरह की हैं?”

रामकली ने लजाते हुए कहा, “यह बात नहीं। चोरी की चीज़ मीठी न होकर भी मीठी लगती है। चोरी से देखने के कारण चीज़ अच्छी लग रही थी। उसमें चीज़ का गुण न था।”

अनन्त ने स्नेहपूर्वक पत्नी की ठुड्डी पकड़कर हिला दी और कहा, “यह बात नहीं। भाई, यह बात नहीं। संसार की सब चीज़ें समान नहीं होतीं। कोई चीज़ ऐसे ही सुन्दर दिखाई पड़ती है, और किसी को सोने से जड़ देने से भी वह सुन्दर नहीं लगती।”

रामकली ने हँसकर कहा, “सो तुम मुझको प्यार करते हो, इसी लिए मैं अच्छी लगती हूँ, नहीं तो मालती मुझमें कहीं ज़्यादा सुन्दर है।”

अनन्त ने व्यंग्य-मिश्रित गर्व के स्वर में कहा, “तो इसी से समझ लो कि मैं कैसा शुद्ध पुरुष हूँ। स्त्री से साली को अधिक सुन्दर न समझें, ऐसे आदमी संसार में कम हैं।”

रामकली ने हँसकर कहा, “वाह जी महात्मा ! और जब छत से लुक-छिपकर देखते थे ! तब तो मैं न स्त्री थी और न साली ही !”

“न होने से क्या, हुई तो।”

अभी दोनों में कितनी देर और यों ही रसभरी बातें होतीं।' कौन कह सकता है। लेकिन जूतों की खटपट सुनकर दोनों सतर्क हो गये, और इतने में ही केशव ने आकर कहा, "भैया, कृपाशंकर ज्यादा देर न ठहरेंगे, इसलिए तुम जग भेंट कर लो।"

अनन्त ने हड़बड़ाकर कहा, "हाँ, मैं अभी जा रहा था।" इसके बाद उक्त सम्बन्ध के विषय में अपनी पूरी सम्मति बतलाकर और केशव को समझा-बुझाकर जिमसे यह सम्बन्ध हो जाय, अनन्त बाहर चला गया।

केशव ने कहा, "भाभी, सब बताओ तुमको यह सम्बन्ध पसन्द है या नहीं?"

रामकली ने कहा, "पसन्द है, यह तो ठीक है, लेकिन अगर सच बात सुनना चाहते हो, तो यह है कि तुम्हारे राजी होने पर मैं उसे थोड़ा भी पसन्द नहीं करती।"

केशव थोड़ी देर तक रामकली के मुँह की ओर देखता रहा, इसके बाद कहा, "मालती का विवाह हो जाय, इसके बाद निश्चय ही तुम्हारी दवा करानी पड़ेगी। तुम्हारा दिमाग जरूर खराब हो गया है।"

रामकली ने हँसकर कहा, "जब विश्वास ही नहीं करना, तो पूछते ही क्यों हो?"

केशव ने कहा, "तुम्हारी बात पर विश्वास करता हूँ, इसी से तो कहता हूँ कि तुम्हारा दिमाग ठीक नहीं है। हटाओ, इस समय ये सब बातें। ज़रा मालती को साफ़ कराके कपड़े पहना दो।"

रामकली ने मुस्कराते हुए कहा, "साफ़ है ही, तुम्हीं जाकर देखो कि कपड़े पहनाना है या नहीं।"

केशव ने बनावटी क्रोध दिखलाते हुए कहा, "मेरी मति मारी गई थी जो तुमसे कहने आया। तुम तो विरोधी दल में हो।"

रामकली ने मुस्कराते हुए कहा, "न, भाई न। मैंने देखा है उसने हाथ-पैर साफ़ किये हैं। शृंगार कराने की जरूरत नहीं। मैं जाती हूँ तुम्हारे और तुम्हारे साथी के लिए जलपान का प्रबन्ध करने। तुम्हारे कमरे के सामने छोटी मेज़ और चार कुर्सियाँ डाले देती हूँ।"

“बहुत ठीक ! मैं तब तक मालती को देख आऊँ।” कहकर केशव मालती को देखने के लिए उसके कमरे की ओर गया।

मालती उस समय एक कुर्सी पर बैठी एकाग्र चित्त से मखमल के एक टुकड़े पर रेशम से कसीदे काढ़ रही थी। पश्चिम की खुली खिड़की से सूर्य की किरणें आकर मालती के मुख पर पड़ती थीं जिससे मालती का मुख और भी निखरा पड़ता था। जिस तरह युद्ध में जाने के लिए प्रस्तुत सैनिक अपने हथियारों की ओर देखता है, उसी प्रकार केशव मालती के रूप को निहारता रह गया। उसने सोचा इसमें शक नहीं कि मालती कृपाशंकर को पसन्द आयेगी।

“मालती !”

मालती चौंककर उठ खड़ी हुई।

“क्या केशव भैया ?”

एकाग्र भाव से मालती को सिर से पैर तक दो-तीन बार देखने के बाद केशव ने कहा, “मालती, अगर तुम वह काले रंग की मद्रासी साड़ी पहनो, तो कैसा हो ?”

मालती इसका मतलब न समझ सकी, और वह हँस पड़ी। कहा, “मकान में उस साड़ी को पहनकर क्या होगा ?”

केशव ने कहा, “मकान में क्यों ? थोड़ी देर के लिए अगर बाहर चला जाय ! हमारे मकान के सामने एक मोटर खड़ी है, देखती तो हो ?”

‘नहीं’ कहकर मालती ने खिड़की के रास्ते बाहर देखा, और कहा, “ओहो, खूब बड़ी मोटर तो है ! किसकी मोटर है केशव भैया ?”

केशव ने कहा, “मान लो, मोटर अपनी करने की तैयारी हो रही हो।”

“खरीदी जायगी क्या ?”

“हाँ, एक तरह से खरीदना भी कह सकते हैं।”

केशव की बात सुनकर मालती हँस पड़ी। कहा, “भला केशव भैया भी कभी सीधा उत्तर देंगे !”

केशव ने उसका कुछ उत्तर न देकर कहा, “और काला ब्लाउज शायद अच्छा लगेगा।”

“बहनी, और राजरानी भी तो जायेंगी ?”

केशव ने कहा, “वह बाद की बातें बाद में होंगी। इस समय तुम तैयार होकर भाभी के पास आओ। देर न करो, मैं बाहर हूँ। तुम ठीक तीन मिनट में आ जाओ।” यह कहकर केशव कमरे का दरवाजा बन्द करके बाहर चला गया।

एक क्षण के लिए मालती अवाक् खड़ी रही। केशव की बातचीत से वह थोड़ी चकित हुई थी। लेकिन तीन मिनट का समय, सोचने को वक्त कहाँ ! केशव के आदेश के मुताबिक कपड़े पहनकर वह बाहर आई।

केशव ने देखकर कहा, “हाँ, ठीक है। अब चलो भाभी के पास।” दोनों रामकली की ओर चले।

रामकली उस समय बरामदे में कुर्सियाँ लगा रही थी। दूर से मालती का वेश देखकर चकित-सी देखती रह गई।

केशव और मालती के निकट आने पर रामकली ने ठुड्ठी पर हाथ धरकर कहा, “देवर तो कम नहीं। मालती का वेश बदल दिया।”

मालती ने कहा, “केशव भैया ने कहा, मोटर से बाहर जाना होगा—और मुझे—”

केशव ने बीच में ही कहा, “एक भूल करती हो मालती ! मोटर से बाहर जाना होगा, यह मैंने नहीं कहा। मैंने कहा था बाहर जाना होगा, और मोटर खड़ी है। इन दोनों को तुमने अपनी मर्जी से एक में मिला दिया है।”

मालती ने आश्चर्य के साथ कहा, “तुमने कहा नहीं केशव भैया, मोटर हमारी होगी ?”

केशव ने शान्तभाव से कहा, “मैं अब भी तो कह रहा हूँ उसी की तैयारी हो रही है। मेरा विश्वास न हो, तो भाभी से पूछो।”

रामकली ने केशव की बात सुनकर कहा, “ओफ़, तुम भी कैसे ठग हो देवर। तुम सब कुछ कर सकते हो।” इसके बाद मेज़ के ऊपर एक सफ़ेद मेज़पोश बिछाकर कहा, “तुम लोग यहीं रहो। मैं जलपाव के लिए के आऊँ।”

यह सुनकर मालती के सारे शरीर में ऐसी सिहरन हुई, जैसे बिजली दौड़ गई हो। उसे सारी बात का आभास प्राप्त करने में देर न लगी। लेकिन लज्जा और संकोच होते हुए भी वह कौतूहल की रोक न सकी। पूछा, “यहाँ किसके जलपान की व्यवस्था है, केशव भैया?”

केशव ने कहा, “उस मोटर के मालिक और मेरे परम मित्र की। और जलपान कराने का भार तुम्हारे ऊपर है।”

मालती ने कड़ी होकर कहा, “मुझसे न होगा।”

केशव ने आश्चर्य के साथ कहा, “तुमसे न होगा। यह तुम कैसे कहती हो मालती। पुराने जमाने में—”

इतने में रामकली दो थालों में भोजन की सामग्री लेकर उपस्थित हुई। उसने मेज पर थाल रखते हुए कहा, “जब पुराने जमाने ने क्या कसूर किया है देवर, जो उसे पकड़ के लेकर दे रहे हो।”

रामकली की ओर मुड़कर केशव ने कहा, “पुराने जमाने में अतिथि-सत्कार के लिए गृहस्थ रास्ते में अतिथि पकड़ लाते थे, और मालती कहती है, मुझसे न होगा। भला बताओ तो भाभी यह कहाँ की सभ्यता है?”

व्यंग्य करने हुए ज़रा गम्भीरता के साथ रामकली ने कहा, “बात सच है, लेकिन अब रीति-रिवाजों में कुछ हेर-फेर हो गया है।”

केशव ने एक क्षण के लिए चुप रहकर कहा, “तुम्हारी बुद्धि में भी कुछ हेर-फेर हो गया है, इसी से मालती की पीठ ठाँकती हो।”

रामकली ने कहा, “यह बात नहीं। पुराने जमाने के प्रसंग में मये जमाने की बात आगई। कुछ भी हो, मालती ने कभी तुम्हारी बात नहीं मानी, जो आज न मानेगी?”

इस तरह दोनों तरफ़ से अपने सम्बन्ध में फ़ैसला सुनकर मालती मुँह लटकाये अप्रसन्न खड़ी रही।

(१३)

मालती का रूप-लावण्य कृपाशंकर को मुग्ध कर रहा है, इसका प्रमाण जलपान के समय की उसकी दृष्टिभंगी से ही मिलता था।

उसके मुग्ध नेत्र परास्त होकर बन्दी हो गये हैं, यह प्रत्यक्ष होने पर भी पूर्ण जयलाभ की इच्छा से केशव मालती के गुणों की प्रशंसा कर रहा था, “यह जो टेबुलकलाथ देखते हो, इसे मालती ने तैयार किया है। यह दीवाल पर जो रेशम-चित्र टंगा है, इसे भी मालती ने बनाया है। मालती सिर्फ अंगरेजी ही जानती है, ऐसी बात नहीं, संस्कृत में रघु के तीन सर्ग समाप्त किये हैं। इत्यादि इत्यादि।”

केशव की बातें सुनकर कृपाशंकर मालती की ओर अधिकाधिक आकृष्ट हो रहा था, और उसके अन्दर का भाव उसकी प्रसन्नता से प्रकट होता था। सफलता की खुशी से केशव पुलकित हो रहा था, उसी समय उसकी दृष्टि मालती के अप्रसन्न मुख पर पड़ी। वह विस्मित और विरक्त हो उठा। कहीं कृपा भी न समझ जाय, इस भय से मालती से आँख मिलते ही केशव ने तीक्ष्ण दृष्टि से उसे मना करने की चेष्टा की। लेकिन यह दवा कुछ कारगर न जान पड़ी, तब मालती के सामने कृपा को अधिक देर रखना ठीक न समझकर केशव कृपा को लेकर बाहर आया।

बाहर आकर आमने-सामने कुर्सियों पर बैठकर केशव ने पूछा, “कैसी लगी बताओ?”

कृपाशंकर ने हँसकर कहा, “कब मुहूर्त ठीक कर रहे हो, बताओ?”

प्रसन्न होकर केशव ने पूछा “और कोई बात तो नहीं है ना?”

“और कोई बात नहीं। सिर्फ इतना ही कि जितने शीघ्र हो सके, विवाह का मुहूर्त ठीक करो।”

केशव ने हँसकर कहा, “मालती में इतनी शक्ति है, यह तो जानता न था। शंकर महाराज का ध्यान आध घंटे में भंग कर देगी, यह पता न था। अब तो मानना ही होगा कि उसमें असीम शक्ति है।”

कृपाशंकर ने हँसकर कहा, “मैं स्वीकार करता हूँ भाई, उसमें असीम शक्ति है। इस विषय में मेरा तुमसे मत-भेद नहीं, मेरी पूर्ण सम्मति है, तुम लोग कनौजिया तराजू में बैठाकर तौलो कि मैं ठीक उतरता हूँ या नहीं। इसके बाद शाम को अपना मतामत मुझे सूचित कर दो।”

कृपाशंकर की बात सुनकर केशव ठठाकर हँस पड़ा और कहा, “वह धिनय न जताने से भी अच्छा होता । भला तुम किसका मतामत चाहते हो ? मालती का मत ? वह तो मिलन-निशा की प्रतीक्षा कर रही है । और यदि हमारे मत की बात होती, तो तुम्हें घर के भीतर ले जाकर आध घंटे तक एक निरीह प्राणी को कष्ट न देते ।”

“अच्छा तो कल सबेरे गोपाल मामा और पंडित जी को लग्न स्थिर करने के लिए भेज दूंगा ।” कहकर कृपाशंकर ने हँसते-हँसते प्रस्थान किया ।

भीतर से सब देख और सुनकर रामकली के मन में अब किसी प्रकार की द्विधा न रह गई । इस शान्त, नम्र, प्रियदर्शी युवक के मालती का स्वामी होने पर मालती को वास्तव में सौभाग्यवती कहना होगा ! केशव के आने पर अग्रहपूर्वक पूछा, “क्या हुआ देवर, पसंद किया है ?”

केशव ने गम्भीर होकर कहा, “सब क्या मेरे समान हैं कि पसंद न होगी ?”

रामकली ने व्यस्त होकर कहा, “क्या कह रहे हो, समझ नहीं पाती, पमन्द किया है ?”

“किया है, किया है । इतना अधिक कि अब धीरज नहीं । कल सबेरे ही विवाह का दिन स्थिर करने लोग आयेंगे ।”

रामकली ने हँसकर कहा, “हाथ की लक्ष्मी को पाँव से ठुकरा देने के बाद देवर को मनस्ताप हो रहा है क्या ?”

केशव ने और भी गम्भीर होकर कहा, “बहुत ज्यादा ! इतना अधिक कि भूख लग आई है ! कुछ खाने को दो ।”

रामकली ने हँसकर कहा, “अभी तो अपने मित्र के साथ खाया है !”

केशव ने कहा, “हे भगवान् ! वे लड़की देखने के लिए आये, लज्जा के मारे कौर टूंगने लगे । उनके साथ खाने से क्या पेट भरा है ?”

केशव की बात सुनकर रामकली हँसने लगी । कहा, “वे टूंगते थे, तुम तो न टूंगते थे । टूंगने से क्या तश्तरियाँ यों ही खाली हो गई ?”

केशव ने विस्फारित नेत्रों से तश्तरियों की ओर देखकर कहा, “जो कुछ पड़ा था, जान पड़ता है इसी बीच उठा ले गई हो !”

रामकली ने हँसकर कहा, “इसी से पता चलता है कि और भूख लगी है।” कहकर रामकली खाने के लिए लेने को चली।

केशव ने टोंककर कहा, “खाना बाद में होगा। पहले सच-सच बताओ भाभी, तुमको कृपाशंकर पसन्द आया है कि नहीं ?”

रामकली ने स्पष्ट स्वीकार किया कि उसे पसन्द आया है।

“तो बताओ वरदेखुई का मेहनताना क्या होगी ?”

रामकली ने हँसकर कहा, “एक परम सुन्दरी बहू।”

केशव ने कहा, “यह खूब, मैंने मारे प्यास के माँगा जल और तुम ले आई आधी भेली गुड़। बहू नहीं भाभी मुझे चाहिए वर। मुझे यह वर दो कि बहू का नशा कभी मतवाला न करे।”

रामकली ने हँसते हँसते कहा, “वर नहीं, मैं तुमको यह शाप देती हूँ कि जल्दी ही तुम्हें विवाह के लिए पागल होकर हमारी शरण में आना पड़े।”

केशव इसका उत्तर देने ही वाला था कि इतने में अनन्त आगया और कहा, “तुम लोगों ने मालती को ऐसा नाराज किया है कि मैं उससे ज़रा दिल्लगी करने गया, लेकिन उसने एक बात भी न कही, गर्दन झुकाये बैठी रही।”

रामकली ने कहा, “तो उसका क्या अपराध ? देवर ने आज उसकी कैसी नक़ल बनाई थी ! मोटर में बाहर जाने की बात कहकर सजा-बजाकर उसे किसको दिखला दिया !”

केशव ने कहा, “चलो भाभी मालती को बायस्कोप दिखा ला दें। किसी तरह उसे शान्त करना चाहिए।”

रामकली राज़ी हो गई। उसने अनन्त से कहा, “तुम भी चलो।”

अनन्त ने कहा, “हि़साब न मिलने से मैं एक पैर बाहर न रक्खूँगा। जमा है खर्च अधिक, लेकिन हाथ में आठ रुपये हैं। यह कैसे हो सकता है ?”

केशव ने कहा, “ठीक है भैया ! यह आठ रुपये हम लोगों को बायस्कोप देखने को दे दो, तो गड़बड़ न रहेगा।”

अनन्त ने हँसकर कहा, “हिसाब का गड़बड़ यदि इस तरह ठीक किया जाता, तब तो संसार अजीब तमाशा हो जाता।”

रामकली ने मूढ़ मूढ़ मुस्कराकर कहा, “तमाशा तो बना सकते हो। किसके पास तुम्हें हिसाब देना है जो आठ रुपयों के लिए इतनी माथा-पच्ची कर रहे हो?”

अनन्त ने हँसकर कहा, “अपने स्वभाव के सामने, जो इन सत्ताईस वर्षों में इस तरह का बन गया है। तुम लोगों के क्षमा कर देने पर भी वह क्षमा न करेगा।”

केशव ने कहा, “मेरी तो राय है कि भूल के पीछे व्यर्थ समय न नष्ट कर जहाँ भूल हो, वहाँ उसका हिसाब रखकर आगे बढ़ना चाहिए।”

अनन्त ने कहा, “मेरी ठीक उलटी राय है। भूल को यदि उसी जगह सुधार न लिया जाय, तो वह बाद के सारे हिसाब को पन्ने-पन्ने में खराब करेगी। यह सिर्फ जमा-खर्च के खाते की बात नहीं, मनुष्य के जीवन में भी यही बात ठीक लागू होती है। जहाँ मालूम हो कि यह भूल हो गई है, उसे वहीं सुधार न लेने से उसके बाद की सारी घटनाओं में भूल होगी। जीवन का प्रत्येक दिन जमा-खर्च के प्रत्येक पन्ने की भाँति भूलों का एक एक अध्याय हो जायगा।”

केशव उत्तर में कुछ कहने जा रहा था, रामकली ने टोंककर कहा, “इस समय तुम लोग जो इसको लेकर तर्क कर रहे हो, यह भी एक भूल हो रही है। इसे सुधार न लेने से देर से बायस्कोप जाना हमारी भूल होगी। अब भी एक घंटा समय है। तुम हिसाब मिला लो, और हम तैयार हो लें।”

रामकली की बात सुनकर अनन्त और केशव दोनों हँसने लगे, और उसकी बात युक्तियुक्त है, यह स्वीकार करके दोनों अपने-अपने काम के लिए गये।

(१४)

तीन-चार दिन बाद केशव अपने कमरे में बैठा एकाग्रचित्त किताब पढ़ रहा था। जाड़े का सवेरा, आठ बज गये थे, लेकिन

झूप में तेज़ी अब भी नहीं आई थी। कुहासा और धुएँ से मिलकर लखनऊ के राजपथ की चीज़ें अब भी अस्पष्ट मलिन थीं। एक फेरीवाला शीतकम्पित स्वर में 'चाय गरम', 'मूँगफली' की आवाज़ लगा रहा था।

दूध का गरम कटोरा लिये रामकली ने केशव के कमरे में प्रवेश किया। टेबुल के ऊपर दूध का कटोरा रखकर कहा, "देवर, दूध पी लो।"

केशव ने किताब से आँख उठाकर थोड़ा मुस्कराते हुए कहा, "आज भाभी खुद दूध लेकर हाज़िर? कुछ मतलब ज़रूर है?"

मतलब ज़रूर था, और ऐसा बड़ा कि रामकली इनकार न कर सकी। एकाएक कुछ उत्तर न दे सकी, और मृदु हास्य से ही व्यक्त किया कि मतलब है।

केशव ने हँसकर कहा, "बैठो, समझ गया हूँ।" यह कहकर केशव कुर्सी से उठा, और एक कुर्सी लाकर रामकली के सामने रख दी।

रामकली के बैठने पर केशव ने कहा, "शायद विवाह के सम्बन्ध में परामर्श?"

थोड़ा अड़ते हुए रामकली ने कहा, "हाँ देवर, विवाह के ही सम्बन्ध में है। लेकिन कहने में डर लगता है। शायद तुम नाराज़ हो जाओगे।"

थोड़ा हँसकर केशव ने कहा, "लेकिन इतनी भूमिका के बाद न बोलने से तो और भी नाराज़ हूँगा।"

रामकली को क्या कहना है, एकबार सोचकर फिर संक्षेप में कहा, "मुझे ऐसा लगता है कि इस विवाह से मालती सुखी न होगी।"

केशव पहले तो विस्मित होकर देखता रह गया, फिर थोड़ा हँसकर कहा, "यह सिर्फ़ तुम्हें ऐसा लगता है या किसी ने कहा है?"

"इसे एक तरह से कहा ही समझो।"

"किस तरह कहा है, क्या कहा है, न जानने पर सलाह दी जाय किस तरह?"

रामकली ने हँसते हुए कहा, "तुम यदि इस तरह जिरह करोगे,

तो शायद मैं समझा न सकूंगी। बहुत बातें समझी तो जाती हैं, लेकिन समझाते नहीं बनतीं। मैं समझ गई हूँ कि मालती इस विवाह से सुखी न होगी।”

केशव ने दूध का एक घूंट पीकर कहा, “लेकिन सिर्फ तुम्हारी बात पर विश्वास करने के मैं और किसी तरह समझ नहीं पाता। मालती ने क्या तुमसे कुछ कहा है?”

“साफ़ तो कुछ नहीं कहा, लेकिन भावभंगी से; चाल-व्यवहार से और यहाँ तक कि बातचीत में उसने एक तरह से कहा है कि उसे यह विवाह पसन्द नहीं।”

रामकली की बात सुनकर केशव कुछ देर तक चुप बैठा रहा, इसके बाद कहा, “क्या चाहती है, यह भी कहा है क्या?”

“यह भी एक तरह से कहा है।”

केशव ने दबी ज़बान से पूछा, “क्या चाहती है?”

रामकली के मुँह में भययुक्त हँसी फूट पड़ी, “तुम्हें चाहती है!”

सुनकर केशव स्तम्भित होकर कुछ देर तक रामकली की ओर एक-टक देखता रहा; इसके बाद दूध पीकर कहा, “ना, तुम सब मिलकर मुझे पागल कर दोगी, ऐसा जान पड़ता है। मुझे चाहती है, इसका अर्थ क्या? क्या मुझे प्यार करती है?”

रामकली ने धीरे स्वर में कहा, “करती है।”

केशव ने थोड़ा उत्तेजित होकर कहा, “करती है, तो अच्छा करती है। लेकिन क्या उसने साफ़-साफ़ कहा है कि वह कृपा से विवाह नहीं करना चाहती और मेरे साथ विवाह करना चाहती है?”

रामकली ने कहा, “साफ़-साफ़ कहा है कि कृपा से विवाह नहीं करना चाहती है—और प्रकारान्तर से बतलाया है कि तुमसे विवाह करना चाहती है।”

थोड़ी देर सोचकर केशव ने कहा, “देखो भाभी, आग से खेलना जिस तरह बुरा है, उसी तरह आदमी से खासकर आदमी के मन से खेल करना बुरा है। मालती के मन में यदि किसी प्रकार का विकार आबसा है, तो इसके लिए निश्चय तुम और भैया दायी हो। मुझे

लेकर कुछ दिनों से तुम लोगों ने जिस तरह का उत्पात खड़ा किया है, उससे यदि मालती ने भी यह सोच लिया हो कि मैं कोई अद्भुत पदार्थ हूँ, तो आश्चर्य नहीं !”

रामकली ने हँसकर कहा, “यह खूब कहा देवर ! मालती प्यार करे तुमको, और इसके लिए दायी मैं और तुम्हारे भैया ! और तुम बिलकुल बारह पत्थर बाहर ! जो चोर, वह तो हुआ साधु, और जिन्होंने चोर को पकड़ लिया, वे हुए अपराधी !”

केशव ने कहा, “यह बात तो नहीं ! चोरी करने का प्रलोभन देकर साधु को जो चोर बनाना चाहे, वे ही हुए अपराधी । हटाओ यह सब, अब बताओ तुम्हारा मतलब क्या है ? कृपा के साथ विवाह न किया जाय, यही कहती हो ?”

रामकली ने नाराज होकर कहा, “मैं करने, न करने की बात कहती नहीं । असली बात तुमको बतला दी, अब तुम्हें जो कुछ जँचे, करो । मैं तो सिर्फ कह रही थी तुम्हारे साथ मालती का विवाह होने से वह सुखी होती !”

रामकली की सकातर बात सुनकर केशव को कुछ कष्ट हुआ । रामकली ने मालती के साथ उसके विवाह के लिए बहुत बार कहा है, अनुरोध, विनती, मार कुछ भी बाक्की नहीं रक्खा, लेकिन प्रत्येक बार केशव ने किसी न किसी तरह टाल दिया है । बार-बार टाल देने का जो अप्रिय काम उसे करना पड़ता था, इससे केशव को कष्ट होता था, लेकिन इसके सिवा और उपाय न था । संसार के जिस बंधन को सबसे अधिक भय करता था, हिताहित के ज्ञान से शून्य, बुद्धिहीन किसी लड़की की नासमझी को प्रश्रय देने के लिए वह उसी अप्रिय बन्धन में अपने को बाँधने के लिए तैयार न था । कातर होकर उसने रामकली से कहा, “भाभी, मुझको तुम लोग दया करके छोड़ दो । मैं हूँ संन्यासी, वैरागी मनुष्य, विवाह करके खुद भी विपत्ति में पड़ूँगा, दूसरे को भी सुखी न कर पाऊँगा । मैं कब हूँ, कब नहीं, इसका कुछ ठीक नहीं । सिर्फ तुम्हारे हाथ की रोटियाँ मिलती हैं, इसी से घर में हूँ, नहीं तो कभी का आश्रमवासी हो जाता ।”

हाथ की रोटियों का संकेत करके केशव ने जो कुछ कहने की चेष्टा की, उसे समझने में रामकली को कठिनाई न हुई। पहले-पहल जिस दिन अदृष्ट के विचित्र विधान से उसने दुःख और यातना के निर्मम कारागार से मुक्ति पाकर सौभाग्य के राजप्रासाद में प्रवेश किया था उसी दिन उसने समझ लिया था कि इस पुरी में सिर्फ रामचन्द्र नहीं हैं, लक्ष्मण भी सशरीर रामचन्द्र के पास ही हैं ! इसी से उसी दिन स्वामी के प्रति विपुल भक्ति और प्रेम के साथ-साथ देवर के प्रति उसी अनुपात से प्रीति और स्नेह भी बढ़ा था। केशव उसी स्नेह के बल पर आत्मरक्षा करने की चेष्टा कर रहा है। यह समझकर रामकली ने अपने को अलग करने की चेष्टा की। जोर देने पर जहाँ बाधा देने की सम्भावना जितनी अल्प होती है, वहाँ जोर देने में उतनी ही हिचकिचाहट होती है। धर-बाँध के सिवा जहाँ दूसरा चारा नहीं, वहाँ धर-बाँध करने में आप ही संकोच लगता है। इसके सिवा केशव की बात से रामकली को दो साल के पहले की बात याद आई, जब गांधी जी के आश्रम में योग देने की बात केशव ने जोरों के साथ चलाई थी। उस समय कितने कष्ट, कितनी विनती, कितने स्नेह-प्यार के जोर पर देवर की उस प्रबल इच्छा को दबाकर उसे घर में रख सकी थी। उसके बाद पिछले दो साल से स्नेह और प्यार के नित्य नये सूत्रों से जाल बुन-बुनकर देवर को चारों ओर से बाँधती आ रही है। सर्वथा निश्चिन्त हो जाने के उद्देश्य से जब जाल में आखिरी गाँठ लगाने के लिए उसने मालती का सहारा लेने की चेष्टा की, तो अचानक फिर गृह-त्याग और आश्रम का प्रसंग आ खड़ा हुआ। इससे डरकर रामकली पीछे हट गई। क्या मालूम जाल बाँधने में यदि फट जाय—हित करते अहित हो जाय !

रामकली ने देवर के मुख पर सकरुण दृष्टि डालकर कहा, “नहीं, नहीं, देवर, मैं तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई काम करने के लिए नहीं कहती। तुम मालती का कितना मंगल चाहते हो, यह जानकर ही मैंने सारी बात तुम्हारे सामने खोलकर रख दी है, अब जिससे मालती सुखी हो, वही करो। जो बात मैं तुम्हें बताने आई हूँ, उसमें

कितना सत्य है, उसे यदि चाहो, तो खुद देखो। इसके बाद जो अच्छा लगे करो।”

रामकली के इस आकस्मिक परिवर्तन का कारण कुछ समझकर केशव ने स्नेहपूर्वक कहा, “मालती के मंगल के लिए यदि मुझे कोई काम तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध भी करना पड़े भाभी, तो उसमें भी मैं संकोच न करूँगा। और अगर मैं यह समझूँगा कि मेरे साथ विवाह न होने से मालती का जीवन वास्तव में असुखी रहेगा, तो मालती के साथ विवाह करने में एक क्षण के लिए भी हिचकिचाहट न करूँगा। लेकिन जो मैं सिर्फ कर्तव्य समझ कर सकता हूँ, उसे शौक से करने के लिए मत कहो।”

केशव की बात सुनकर रामकली का मन हलका हो गया। प्रसन्न होकर उसने कहा, “मैं और तुमसे कुछ न कहूँगी। अब से मालती का सारा भार तुम्हारे ऊपर। तुम जो ठीक समझो, करो, उसी में उसका कल्याण होगा।”

रामकली की बात सुनकर केशव के मुख पर उद्वेग की रेखायें खिंच गईं। उसने कहा, “इतने बड़े दायित्व का भार उठाने की शक्ति क्या मुझमें है भाभी, जो तुम निश्चिन्त होकर मालती के इष्ट-अनिष्ट का भार मेरे ऊपर छोड़ रही हो?”

रामकली ने बिना हिचकिचाहट के कहा, “हाँ, वह शक्ति सिर्फ तुममें है। तुम मालती को देखो, उसकी सुनो, समझो, इसके बाद जो अच्छा लगे, करो।”

केशव ने कुछ उत्तर न दिया। वह चुप बैठा रहा।

केशव के चिन्तित मुख की ओर देखकर रामकली ने कहा, “इसमें सोचने की बात क्या है देवर? जो ठीक जँचे, करो।” कहकर वह कुर्सी से उठ खड़ी हुई।

केशव ने कहा, “नहीं, सोचने को कुछ नहीं है। मालती खुद क्या सोचती है, अपना अच्छा-बुरा क्या सोचती है, मैं सब ठीक कर लूँगा, तुम कुछ चिन्ता न करो भाभी!”

“नहीं मैं कुछ भी चिन्ता नहीं करती।” कहकर रामकली धीरे-धीरे कमरे से बाहर हो गई।

केशव कुछ देर तक चित्रलिखित-सा बैठा रहा—इसके बाद अपनी अन्तर्निहित शक्तियों को एकाग्रभाव से संचित करके उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की, जो शुभ और सत्य होगा, वही करूँगा। इसके बाद धीरे-धीरे अपने मन को चिन्तामुक्त करके किताब खोलकर बैठा।

(१५)

चार बजे थे। मालती अपने कमरे में चारपाई पर अनमनी-सी बैठी थी। खिड़की थोड़ी-सी खुली थी, और खिड़की के उस पार दो गिलहरियाँ लड़ रही थी। मालती की दृष्टि उधर थी, लेकिन मन कहीं और। वह किसी चिन्ता में मग्न थी।

कई दिनों से उसे क्या हो गया है, यह वह खुद ही न समझ पाती थी। किताब पढ़ने पर अर्थ समझ में न आता था। मोझे बुनते समय घर भूल जाती थी। सब समय मन में जाने कौसी अस्थिरता, बेचैनी और मुर्दनी बनी रहती। इस मानसिक अवस्था का कारण था कृपाशंकर के साथ उसके विवाह का प्रबन्ध। किन्तु ऐसा क्यों है, इसी उधेड़बुन में वह आज लगी थी। कृपाशंकर के साथ विवाह में अनासक्ति का क्या कारण है? लोग कहते हैं, गुणवान् है, धनवान् है, घोड़ागाड़ी, मोटर, घर; विपुल धन-राशि सबकी स्वामिनी भी हूँगी, लेकिन मन तो यह सब चाहता नहीं। मन में तो यह घर इस तरह से चढ़ गया है, कि एक क्षण के लिए यहाँ से उचटता नहीं। जी चाहता है कि इस घर के एक कमरे में मैं जाऊँ, जिस पर मेरा अधिकार हो, जिसकी किताबों को मैं दुरुस्त करूँ, जहाँ की मेज की मैं सफ़ाई करूँ। लेकिन उस कमरे में जाने में संकोच अब क्यों होता है, जब दो दिन पहले यह सब मैं करती थी। और यह आज जो उन्माद पागल बनाये है, यह पहले तो न था। पहले जब केशव के साथ विवाह की बात चलती थी, तो हृदय को सहज आनन्द मिलता था, यह अनुभव करके अभीष्ट की प्राप्ति होने जा रही है। उसके अन्दर में क्या है, इसका स्पष्ट पता तो उस दिन लगा जिस दिन उसका अन्यत्र विवाह तय हुआ। उसी दिन से अब आशा का आनन्द नहीं, मीठी कल्पना नहीं। बहो सब दिन-रात गुनती रहती।

“मालती कमरे में हो क्या ?”

केशव की आवाज सुनकर मालती चौंक पड़ी। उठकर कहा, “हूँ।” एक क्षण के बाद चारपाई से उठकर जमीन पर खड़ी हो गई और कहा, “दरवाजा खुला है।” दरवाजा ठेलकर केशव अन्दर आया।

“तुम क्या किसी काम में लगी हो मालती ?”

मालती ने एकबार केशव की ओर देखा, और कहा, “नहीं।”

“तो तुम्हें एक दफे मेरे साथ बाजार चलना होगा। तुम्हारे लिए कुछ ग्लाउज और सेमिज के आर्डर देने हैं।”

आश्चर्य के साथ केशव की ओर देखते हुए मालती ने कहा, “तो मुझे क्यों जाना होगा ?”

“नाप देने के लिए। एक नई दूकान खुली है, उसमें स्त्रियों की नाप लेने के लिए स्त्रियाँ रखी गई हैं।”

ग्लाउज और सेमिज का आर्डर क्यों दिया जा रहा है, इसका अनुमान करके मालती की इच्छा न हुई कि वह जाय। उसने कहा, “नमूना देने से भी तो काम हो सकता है। इसके अलावा इस समय ग्लाउज और सेमिज की जरूरत भी तो नहीं है।

केशव ने कहा, “जरूरत है या नहीं, यह निर्णय करने का अधिकार अभी हमारा कुछ दिन रहेगा—लेकिन तुम इतनी आपत्ति क्यों करती हो ? जाने में तुम्हें एतराज क्यों ?”

मालती ने एकबार केशव की ओर देखा, फिर कहा, “नहीं बाधा कुछ भी नहीं।”

“तो तैयार हो जाओ” कहकर केशव चला गया।

तांगे पर बैठकर मालती गर्दन घुमाये रास्ते की तरफ देखती रही। उसकी नज़र तो सड़क के विचित्र दृश्यों की ओर थी, लेकिन ध्यान उसका उधर थोड़ा भी न था। वह सोच रही थी इन ग्लाउज और सेमिज के साथ आरम्भ हुए उसके अभीष्ट का बिच्छेब और एक अनचाहे से संयोग।

उधर केशव बैठा सोच रहा था, “किस प्रकार मालती से पूछूँ कि यह सम्बन्ध तुम्हें पसन्द है या नहीं। अभी कहती थीं मालती इस संबंध

से प्रसन्न न होगी। उसने स्पष्ट कहा है कि वह कृपाशंकर से विवाह नहीं करना चाहती, और प्रसंगान्तर में यह भी कहा है कि वह तुमसे विवाह करना चाहती है।”

नाप देने का काम तुरन्त समाप्त हो गया। इसके बाद ताँगे पर बैठकर केशव ने कोचघान से अमीनाबाद ले चलने को कहा। मालती चुप बैठी रही। उसने एक शब्द भी न कहा।

पार्क पहुँचने के पहले ही केशव ने पूछा, “मालती, मैं तुम्हारा हित हूँ, तुम्हारा मंगल चाहता हूँ, यह तो तुम मानती हो?”

मालती ने एक क्षण सोचकर कहा, “हाँ।”

प्रसन्न होकर केशव ने कहा, “बहुत खूब। तुम्हारा यह विश्वास अब भी है, और तुम गाँठ बाँध लो कि ऐसा कोई काम न होगा जिससे तुम्हारा यह विश्वास उठ जाय।”

केशव की ओर फिर से देखकर मालती ने कहा, “केशव भैया, क्या मैं ऐसी कृतघ्न हूँ कि तुम्हें इसकी याद दिलानी होगी।”

मालती की बात से केशव को चोट लगी। उसने कहा, “कृतज्ञता कैसी बात मालती। तुम अपने गुण और अपनेपन से हमको स्नेह में बाँधे हो—तुम्हारे पावने से अधिक हमने दिया क्या, जो कृतज्ञता की बात उठे!”

ताँगा पार्क के पास आकर रुका। ताँगे से उतरते हुए केशव ने कहा, “आओ मालती, थोड़ी देर पार्क में बैठें।”

मालती उतरकर चुपचाप केशव के पीछे हो ली। एक निर्जन स्थान में जाकर एक बेंच पर दोनों बैठ गये। थोड़ी दूर पर कुछ लड़के खेल रहे थे। एक ओर एक कुंज के पास एक मेम और साहब बैठे बातें कर रहे थे। थोड़ी देर में पार्क की बत्ती जल गई। ठण्ड के दिन धीरे-धीरे घूमनेवालों की संख्या कम हो गई।

थोड़ी हिचकिचाहट के साथ केशव ने कहा, “एक बात पूछनी है मालती। आशा है तुम निस्संकोच ठीक-ठीक सहजभाव से उत्तर दोगी। बहुत जरूरत न होती, तो तुम्हें कष्ट न देता।”

मालती चुप बैठी रही, उसने कुछ भी उत्तर न दिया।

केशव ने कहा, “मैं जिस तरह तुमसे ठीक ठीक सीधा उत्तर चाहता हूँ, उसी तरह मैं तुमसे पूछूँगा भी सीधे-सीधे। घुमा-फिराकर बात करने में तुम्हारा समय बरबाद न करूँगा। क्या कृपाशंकर के साथ विवाह करना तुमको पसन्द नहीं है? ठीक-ठीक बताओ मालती! कभी-कभी लज्जा और संकोच छोड़ देना होता है।”

केशव की बात सुनकर मालती का शरीर शिथिल हो गया। इसका क्या उत्तर देगी? खासकर केशव को! संकोच क्या ऐसी चीज़ है कि उसे आसानी से दूर कर दिया जाय। मालती चुप बैठी रही।

मालती को चुप देखकर केशव ने अधीर होकर कहा, “मालती, बताओ, बताओ, क्या यह विवाह तुम्हें पसन्द नहीं है?”

“न” कहकर मालती अवाक् रह गई। आखिर यह शब्द उसके मुँह से निकल कैसे गया!

एक क्षण सोचने के बाद केशव ने कहा, “बहुत ठीक। अच्छा मेरे साथ विवाह होने से क्या तुम सुखी होगी? बोलो, लज्जा मत करो।”

उस ठंडक में भी मालती के माथे पर परीना आगया। इस अद्भुत और अनुचित प्रश्न का वह कुछ भी उत्तर न देगी यह तय करके मालती चुप बैठी रही। सिर में कुछ पीड़ा मालूम हुई, और उसने घेच के पाये पर सिर रख दिया। और भी कई बार केशव ने प्रश्न किया, लेकिन जब उसने समझ लिया कि मालती इसका उत्तर न देगी, तो उसने कहा, “तुम जब कुछ नहीं कहती, तो मैं यह माने लेता हूँ कि मेरे साथ विवाह होने से तुम प्रसन्न होगी। यही तुम्हारा मत है। दूध में चीनी के प्रसंग में मैंने जो कुछ कहा था, वह याद है! हमारे दुःख बाहर से नहीं आते, हम स्वयं उनकी सृष्टि करते हैं। तुमको उस दिन भी मैंने सावधान कर दिया था, और आज भी कर रहा हूँ। तुममें अब भी लड़कपन है। बुद्धि होने पर भी जानकारी नहीं है, इसी लिए तुम्हें केवल अपनी बुद्धि, विवेचना और प्रवृत्ति के अनुसार न चलकर क्या अपने हितैषियों की सलाह से न चलना चाहिए मालती? तुम मुझे प्यार करती हो, इससे तुम्हें बहुत प्रसन्नता है, लेकिन ध्यान रखो कि मैं भी तुम्हें कम प्यार नहीं करता।”

इतना कहते-कहते केशव का गला कुछ सँध गया। थोड़ी देर चुप रहकर फिर उसने कहा, “लेकिन हम एक दूसरे को प्यार करते हैं, इसी लिए हमें विवाह कर लेना चाहिए, या ऐसा करना मंगलमय है, ऐसा नहीं भी तो हो सकता? विवाह करने की कामना लेकर तो हमने प्यार करना शुरू नहीं किया, तो उसे चिरस्थायी बनाये रखने के लिए विवाह की इतनी जरूरत क्यों? तुम्हारे साथ जिसका विवाह होगा, उसको मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। मेरा परममित्र है। विद्या, बुद्धि, रूप, धन सबमें वह मुझसे श्रेष्ठ है। भैया और भाभी भी वसन्त करती हैं। तुम यह विचार लो कि संसार में तुम्हारे जो तीन व्यक्ति विशेष हित हैं, वे जो व्यवस्था करेंगे, उससे तुम्हारा मंगल होगा। मैं तो एक तरह का संन्यासी, वैरागी हूँ। तुम लोगों ने स्नेह की डोरियों से बाँध रक्खा है। मुझे जितना तुमने पाया है, उतना ही ठीक है। उसमें अधिक पाने पर तुम देखोगी कि मैं विलकुल निकम्मी चीज हूँ। मेरी हार्दिक कामना है कि तुम इस नये जीवन में प्रवेश करो, और तुम्हारा वैवाहिक जीवन मंगलमय हो।”

पार्क प्रायः खाली हो गया था। जाड़े के कारण चारों ओर की चीजें सिकुड़ी पड़ी थीं। केशव के इस आशीर्वाद को सुनकर मालती के हृदय में मृत्यु की-सी ठंडक ने प्रवेश किया, और ऐसा जान पड़ा मानो उसका रक्त-संचालन बन्द करके निस्पन्द कर दिया। मालती मरी की तरह बाहों के बीच मुँह डाले पड़ी रही। उसकी देह तथा मन में किसी प्रकार की चेतना न थी।

“मालती !”

केशव की आवाज़ सुनकर मालती को दोश हुआ।

“क्या कहते हो?”

“मैंने जो कहा समझी हो।”

“समझी हूँ।”

केशव ने प्रसन्न होकर कहा, “तो कृपाशंकर के साथ विवाह करने में अब तुम्हारी किसी प्रकार की असम्मति नहीं है?”

दाँतों से होंठ काटते हुए मालती ने कहा, “नहीं।”

केशव ने मालती की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा, “लक्ष्मी, आज तुमने मुझे सुखी किया। तुम्हें और क्या कहूँ। आशीर्वाद है कि चिर सौभाग्यवती हो।

लेकिन इस बार सहम की सीमा न रही। पत्थर को फोड़कर स्रोत उमड़ पड़ा। आँसुओं की धार से मालती की बाँह भीग गई, लेकिन केशव यह सब कुछ न जान सका। मालती के पीड़ित हृदय में अभिमान काँटे-सा चुभने लगा, उसने मन ही मन कहा, आज तुमको सुखी किया! मैं इतनी नाकदर, इतनी तुच्छ, इतनी निकम्मी कि तुम्हारे बदले दूसरे के साथ विवाह करने से तुमको खुशी है। तुम्हारे निठुर वैराग्य के निकट मेरे हृदय की पूजा इतनी तुच्छ है कि तुममे ग्रहण करने की बात न कहने से तुम सुखी हो।

मालती ने सिर उठाकर सीधे आकाश की ओर देखा, और उठ पड़ी। कहा, “भैया, घर चलो, रात हो गई।”

केशव ने उठकर कहा, “चलो।”

ताँगे पर बैठते हुए केशव ने कहा, “पं० रामचरण ने आज बुलाया था। उधर से जाकर दो मिनट के लिए यदि मिल लूँ, तो तुम्हें कुछ असुविधा होगी?”

मालती ने मीठे स्वर में कहा, “नहीं।”

रामचरण के घर के सामने ताँगे को रोकवाकर केशव उतर पड़ा। मालती ताँगे पर ही बैठी रही।

केशव ने पूछा, “तुम आओगी नहीं मालती?”

“मैं यहीं बैठी रहूँगी।”

“नही, यह ठीक नहीं। जान जाने पर वे दुःखी होंगे।”

आकर मालती केशव के पीछे-पीछे चल पड़ी।

ऊपर पहुँचकर बरामदे से केशव ने पुकारा, “दुलारी!”

दुलारी पिता के पास उनके हाथ दाब रही थी, और बात कर रही थी। केशव की आवाज़ सुनकर दरवाजा खोलकर कहा, “आइए।” केशव के पीछे मालती को देखकर कहा, “आओ भाई, आओ।”

रामचरण के साथ केशव की काम की बातचीत दो मिनट में समाप्त हो गई। दुलारी ने पूछा, “कुछ जलपान के लिए लाऊँ।”

“मुझे तो जरूरत नहीं। अपनी साथिन से पूछो।”

मालती ने सिर हिलाकर इनकार कर दिया।

केशव ने हँसकर कहा, “दुलारी उस दिन कृष्णचन्द्र को खीर खिलाकर तुम ज्यादा प्रसन्न हुई थी, या खीर खाकर कृष्णचन्द्र, यह बात ठीक से समझ में नहीं आई थी। कै सेर खीर कृष्णचन्द्र ने खाई थी?”

केशव की बात सुनकर दुलारी ने मुस्कराते हुए कहा, “आप खाने की बात को लेकर कृष्णचन्द्र का बहुत मजाक उड़ाते हैं। क्या वे इतना ज्यादा खाते हैं?”

केशव ने हँसकर कहा, “रहने दो। भगवान् ने जिस प्रकार इतनी खीर हजम करने की शक्ति दी है, उसी प्रकार मजाक को भी हजम करने की भी शक्ति उसे दी है। मजाक करने से उसकी भूख बढ़ती है, हजम अधिक होता है।”

केशव की बात सुनकर रामचरण हँसने लगे। कहा, “लड़का एक रत्न है। हजारों में ऐसा एक भी मिल सकता है, या नहीं, इसमें सन्देह है।”

मित्र की प्रशंसा से केशव प्रसन्न हुआ, और रामचरण तथा दुलारी के हृदय में यह प्रशंसा के बीज उगने से आगे चलकर अच्छे फल लगेंगे, इस आशा से प्रशंसा में खुद भी योग दिया। कहा “मेरे मित्रों में कृपाशंकर और कृष्णचन्द्र की तुलना के और नहीं हैं। कृपा को मित्र से आत्मीय बनाने का बन्दोबस्त हो चुका है। कृष्णचन्द्र को भी एक और बहन के लिए मन ही मन ठीक कर रखा है।”

रामचरण ने पूछा, “तुम्हारी बहन! शायद दूर के रिश्ते में?”

मुस्कराते हुए केशव ने कहा, “बहुत दूर के रिश्ते में नहीं।”

कृष्णचन्द्र के सम्बन्ध में अधिक विस्तार से बात करना की इच्छा बीच-बीच में रामचरण को होती थी, लेकिन केशव की बात सुनकर अब इसे व्यर्थ समझा। केशव ने भी पहले ही दिन सारी बात न कहकर कृपाशंकर की बात चलाई।

“बड़े आदमियों के लड़कों में कृपाशंकर जैसा देखने को बिरला ही मिलता है। बाहर के लोग उसका धन ही आगे देखेंगे, लेकिन जो उसे जानते हैं वे धन से ज्यादा उसमें दूसरे गुण ही पाते हैं।”

ऐसे सत्पात्र के साथ मालती का विवाह होना तय हुआ, यह सुनकर रामचरण ने प्रसन्नता प्रकट की, और मंगल-कामना की।

मालती को देर होती होगी, यह सोचकर केशव उठ खड़ा हुआ, कहा, “चलूँ, रात हो गई।”

दुलारी मालती और केशव को नीचे तक पहुँचाने गई। ताँगा थोड़ी दूर पर खड़ा था। केशव ताँगा लाने गया। दुलारी ने कहा, “मालती, इसी तरह बीच-बीच में आना, देखो विवाह की खुशी में कहीं बिलकुल ही भूल न जाना।”

मालती ने विरक्ति दिखलाते हुए कहा, “क्या विवाह कुछ ऐसी चीज है?”

दुलारी ने हँसते हुए कहा, “मेरे लिए तो भाई कुछ ऐसी ही ! विवाह के नाम पर जो स्वाद मिला है, वह असल में वैसा स्वादिष्ट न होगा।”

दुलारी की बात याद कर मालती को दुःख हुआ। सोचा, उसी की तरह दुलारी का भी हृदय दग्ध है, और इसी लिए परिहास से उसे शीतल कर रही है। सोचा दुलारी से कहूँ, “मेरे लिए भी विवाह कुछ साधारण पहली नहीं है।” लेकिन सँभलकर कहा, “उसी के लिए यदि मुझे सब कुछ भूल जाना पड़े, तो भी तुम मुझे न भूलना दुलारी।”

दुलारी ने मालती को अपनी दोनों भुजाओं के बीच में बाँधकर कहा, “कभी नहीं भाई। इस ज़िन्दगी में तुम लोगों को भूल जाऊँगी, इस लायक तुमने रक्खा ही नहीं। तुम्हारे केशव भैया—”

केशव के आ जाने के कारण बात पूरी न हुई। केशव के कान में दुलारी के कुछ शब्द पड़े थे। आकर उसने पूछा, “में क्या दुलारी?”

प्रश्न सुनकर दुलारी पहले तो अकचका गई, फिर कहा, “सुनने से आपको गर्व होगा।” मन में कहा, ‘देवता।’

“तो ऐसी भूठी बात सुनने की जरूरत नहीं।” कहकर हँसते-हँसते केशव मालती के साथ ताँगे पर जा बैठा।

ऊपर आकर दुलारी ने देखा कि रामचरण अब भी चारपाई पर बैठे हैं। कहा, “बप्पा, ज्यादा देर बैठने से कष्ट होगा, लेट जाओ।”

रामचरण ने कहा, “कुछ भी कष्ट नहीं होगा, बेटी।” इसके बाद लड़की के मुँह की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर थोड़ा अड़ते हुए कहा, “यह भी क्या ही आदमी हैं?”

“कौन बप्पा?”

“यही केशव वगैरह।”

“बहुत भले।”

थोड़ी देर चुप रहने के बाद कहा, “केशव की तरह का एक भी लड़का नहीं देखा। जितना उदार उतना ही परोपकारी।”

“मे भी ऐसा ही सोचती हूँ बप्पा।”

इसके बाद रामचरण के मस्तिष्क के सामने तिवारीपुर की घटना आगई। केशव का तिवारीपुर जाना और इस प्रकार वहाँ के दानबों के मुँह से निकाल लाना। यदि उस समय केशव न जाता, तो वचने का कोई रास्ता न था। कहा, “दुलारी?”

“क्या बप्पा?”

“केशव धार्मिक, बलवान्। उसका सहारा पाकर हम निडर हो गये हैं। यह सहारा सदा के लिए हो जाय, तो कैसा हो बेटी?”

रामचरण की बात दुलारी जरा भी न समझ सकी। उसने कहा, “तुम्हारी बात में ठीक से समझ नहीं सकी बप्पा।”

थोड़ी देर तक सोचने के बाद रामचरण ने कहा, केशव के हाथ तुम्हें देने की बात कह रहा हूँ बिटिया, तुम्हारी क्या असम्मति है?”

रामचरण की बात सुनकर दुलारी चुप हो गई। उसके मुँह से एक शब्द भी न निकला। लज्जा या संकोच नहीं, बल्कि विवाह को लेकर एक गहरा घाव उसको लगा था, इसलिए उसका मुँह लाल होने के बजाय फ्रीका पड़ गया। एक बात पूरा भी नहीं कि फिर चोट!

दुलारी को चुप देखकर रामचरण विचलित हो गये । कहा, “तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध मैं एक बात भी न कहूँगा । लेकिन तुम केशव को पति-रूप में पाओ, इससे बढ़कर मैं और क्या आशीर्वाद दूँ ।”

दुलारी ने कातर स्वर में कहा, “तुम्हारा शरीर अब भी ठीक नहीं है बप्पा । इस समय इन सब बातों की क्या जरूरत ?”

रामचरण चारपाई के ऊपर सीधे होकर बैठ गये, कहा, “इसी लिए तो जरूरत है । यदि भगवान् मेरी यह कामना पूरी करें, तो वह आनन्द ही मुझे सजीवन हो जायगा । इसके अलावा यदि यह रोग हटने का नहीं, तब तो इस बात की और भी जरूरत है ! तुम तो होशियार हो, सब समझती हो बिटिया !”

यह बात सुनकर दुलारी की दोनों आँखें डबडबा आईं । जो अमंगल बात कभी-कभी उसके मन में आ जाती थी, आज पिता का उसी की ओर संकेत सुनकर दुलारी विचलित हो उठी । क्या वह अमंगल बहुत निकट है, और इसी लिए पिता आश्रय देने के लिए इतने चिन्तित है ।

रामचरण ने कहा, “मालती का विवाह ठीक हो जाने के बाद से मेरे मन में यह बात है । अनन्त से बातचीत हुई है, वह राज़ी है । केशव भी राज़ी हो जायगा, मुझे विश्वास है । तुम बिटिया सोचो ! इस रोग-शय्या पर पड़े-पड़े, यदि तुम्हारी व्यवस्था कर सकूँ, तो निश्चिन्त हो जाऊँ ।”

दुलारी रामचरण की चारपाई की पाटी पर झुककर उनका हाथ मलने लगी । फिर धीरे-धीरे कहा, “तुम्हारे आशीर्वाद के बाद मुझे कुछ भी विचार नहीं करना बप्पा ।” उसकी आँखों से निकलकर दो बूँद गरम आँसू रामचरण के हाथ पर गिरे । स्नेह से रामचरण ने दुलारी की पीठ पर हाथ फेरा, और उनके दो बूँद आँसू दुलारी के बालों में चू पड़े ।

(१६)

आधी रात ! रामचरण बहुत पहले सो गये थे, परन्तु दुलारी की आँखों में नीव नहीं । वह अपने बिछौने पर लेटी सोच रही थी ।

विस्तृत नदी-पुलिन पर शुभ्र ज्योत्स्ना की धारा बहने से जिस प्रकार होता है—आदि नहीं, अन्त नहीं, अनिरीति, अस्पष्ट किन्तु अबाध आलोक की राशि—उसी प्रकार दुलारी के अन्तर में सब कुछ अनिश्चित और अस्पष्ट होते हुए भी एक सुखद आलोक से उसका अन्तर भरा था। पहले उसे अपने हृदय का पता न था। इसी लिए शाम के वक्त पिता ने विवाह की जो बात कही थी, उससे वह सिर्फ चकित न हुई थी, बल्कि दुःखी भी हुई थी। उस समय राख में छिपी आग की भाँति विरक्ति और घृणा में प्रेम अदृश्य था। मोतीलाल ने जिस चीज को निःसंशय रूप में मिथ्या और भ्रान्ति प्रमाणित कर दिया था, उसका बीज नष्ट न होकर उसके हृदय में अब भी जीवित था, इसका दुलारी को पता न था। केशव ने आज उस बीज का पता बता दिया—जहाँ अन्धकार घनीभूत हो गया था, वहाँ चन्द्रालोक ला दिया—बुझते दीपक में बत्ती लगा दी !

दुलारी सोच रही थी केशव की बात। वह गान्त, सौम्य, सुन्दर केशव—संयत साथ ही अनुरक्त, किसी से विरोध नहीं और निडर, हम लोगों का आश्रयदाता, रक्षक, विपत्ति का साथी केशव। जिनको इतने दिनों से दुलारी दीनानाथ के रूप में देखती आई है, आज वे हृदयनाथ के रूप में उसके सामने आये हैं। यह इतना आशातीत, सम्भावना से परे काम हो रहा था कि दुलारी फूल में कीड़े की भाँति आनन्द में संदेह की पीड़ा का अनुभव कर रही थी। यह मधुर स्वप्न से अधिक और कुछ होगा ऐसा विश्वास करते हुए दुलारी का हृदय काँपता था। वह एकाग्र होकर केशव की बातें सोचने लगी। तिवारीपुर में प्रथम बार भेंट होने से लेकर आज गाड़ी में बैठाने तक की सारी बातें सोच गई। नींद दुलारी की आँखों में न थी।

एक दूसरे मकान के एक कमरे में ठीक उसी समय एक लड़की लेटी थी, लेकिन उसकी भी आँखों में नींद नहीं। परन्तु उसकी आँखों में दुलारी की भाँति आनन्द की आभा न नाच रही थी। बादलों से लदे आकाश की भाँति उसके नयनों से बीच-बीच में आँसू निकल पड़ते थे। मालती चुप लेटी अपने अदृश्य भविष्य की चिन्ता

कर रही थी। केशव से वंचित होने के कारण उसकी आँखों में ये आँसू न थे। वह रो रही थी अपने भविष्य की चिन्ता करके। जिस घनी घर की मालकिन होकर वह जा रही थी, वह घर उसे कारागार के समान लगता था। जहाँ उसका शरीर निरुपाय होकर बन्द रहेगा, मन न रहेगा। तो मन कहाँ रहेगा? क्या इसी घर में जहाँ लेटी हुई वह भविष्य जीवन पर विचार कर रही है? ना, ना, यह बात नहीं। जादूगर के मंत्र के बल से आज अचानक उसका मन इस घर की तरफ़ से बदल गया है। इस करुणा एवं अनुग्रह देनेवाले घर में उसका शरीर अवश्य अब भी पड़ा था, लेकिन मन उसका इससे अलग हो चुका था। उसको ऐसा लगता था मानो घर किसी बड़े दानव का मुँह हो जो उसे खा जाने को है; और घर की चीज़ें हैं दंत-पंक्तियाँ जो निर्दय रूप में उसे काट रही हैं। यह सोचकर कि इस घर में वह सर्वोच्च अधिकार प्राप्त करेगी, इतने दिनों तक उसकी आत्म-मर्यादा अक्षुण्ण थी, लेकिन आज उसे मालूम हुआ कि वह कृपापात्री के सिवा और कुछ भी नहीं। मालती का मन एक ग्लानि पैदा करनेवाली हीनता से भर गया। दुःख का स्थान अभिमान ने ग्रहण किया। वह केशव की बातें सोचने लगी, दूध पिलानेवाले दिन से लेकर आज सन्ध्या-समय अमीनाबाद पार्क के उपदेश तक की बातें। नींद आज मालती की आँखों में न थी।

कृष्णचन्द्र भी अपने बिछौने पर पड़ा सोच रहा था। उसकी भी आँखों में नींद न थी। वह सोच रहा था विलासपुर की बात, रामचरण आदि के लखनऊ लाने की बात, मोतीलाल के अद्भुत आचरण की बात, और इन सब घटनाओं की परिणति से उसके हृदय में जो लालसा एवं आशा उत्पन्न हो रही थी, उसकी बात। पहले दिन जब उसने दुलारी को देखा, तो उस दिन सिर्फ़ उसकी आँखों को ही चोट लगी थी। उसने विस्मययुक्त प्रशंसा का लेप आँखों पर कर दिया था, लेकिन उसकी लालसा का द्वार असम्भव की मजबूत जंजीर से बन्द था।

उसके बाद घटनाचक्र जिस प्रकार फिरता गया, और मोतीलाल

से उसके कमरे में बातचीत हुई, उस दिन असम्भव की जंजीर खुल गई। हृदय के किसी कोने में जो लालसा दुराशा की अस्पष्ट छाया के रूप में भी नहीं थी, वह केशव के इशारे पर उसके हृदय में आशा का नवालोफ फैलाकर उपस्थित हुई। लेकिन लालसा को वास्तव रूप में परिणत करने का प्रस्ताव और प्रयास करने में उसके मन में एक अड़चन आ उपस्थित हुई। उसने सोचा ऐसा करना बिल्कुल लोभी का जैसा आचरण होगा, दूसरे के दुःख की परवाह न करके अपने सुख की साधना में जुट पड़ना ! इसी लिए केशव से भी साफ साफ कहने में उसे संकोच होता था।

कृष्णचन्द्र सोच रहा था दुलारी की बात। वह शान्त, सुन्दर, चञ्चल-सी मनोहर और वास्तव-सी सुखदायिनी ! वह दुलारी आज उसकी आशा—आकांक्षा से परे की वस्तु नहीं। इस समय काम है सिर्फ सम्भव को वास्तव करने का, हृदय-लक्ष्मी को गृह-लक्ष्मी बनाने का। कृष्णचन्द्र भविष्यत् की मनोरम कल्पनाओं में डूब गया। नींद उसकी भी आँखों में नहीं थी।

एक अन्य कमरे में बिछौने पर लेटा एक और व्यक्ति सोच रहा था इन तीनों की बात। वह था केशव। वह सोच रहा था, उसके दो मित्रों—कृपाशंकर और कृष्णचन्द्र के द्वारा दो आर्त बालिका-हृदयों की ग्लानि मिटानी होगी। दूषित वायु के कारण जहाँ प्रेम ने फूल नहीं खिलाकर काँटे उपजाये हैं, वहाँ फूल खिलाने होंगे। जीवन-सूत्र में इन दो नारियों के कारण जो गाँठ लग गई है, उसे खोल डालने के बाद वह हो जायगा बिल्कुल स्वच्छन्द ! उस दिन वह उन्मुक्त सागर के वक्ष में नदी की भाँति अपने को बिराट् कर्म-सागर में जो चिर दिन से उसके हृदय को लुभाये है, छोड़ देगा ! उस दिन वह संसार का सब प्रकार का देना-पावना चुकाकर संयत हृदय से चिर अभिलषित आराधना में लग जायगा !

आज शाम के वक्त अमीनुद्दीला पार्क में जो घटना हुई थी, उसे याद कर केशव प्रसन्न हुआ। प्रत्यक्ष रूप में नहीं, तब भी अप्रत्यक्ष रूप में उसने मालती के मन में जो व्यथा पैदा की थी, उसे दूर करने

की शक्ति भगवान् ने उसे दी है, यह सोचकर केशव ने सर्वान्तः-करण से भगवच्चरणों में कृतज्ञता अर्पित की, और मन का बल एवं प्रवृत्ति भविष्य में नष्ट न हो, इसके लिए मन ही मन प्रार्थना करके केशव नींद की गोद में चला गया ।

(१७)

कई दिन बाद रामचरण के यहाँ केशव और कृष्णचन्द्र का निमंत्रण था । शाम के वक्त जब दोनों पहुँचे, तो रामचरण अपने कमरे का दरवाजा बन्द किये जप कर रहे थे, और दुलारी रसोईघर में भोजन की तैयारी में लगी थी ।

केशव और कृष्णचन्द्र को देखकर दुलारी रसोईघर से बाहर आई, और कहा, “जान पड़ता है बप्पा जप कर रहे हैं, आप ऊपर चलकर बैठिए ।”

केशव ने कहा, “हम तो बैठते हैं, लेकिन तुम आखिर इतना कष्ट क्यों कर रही हो ?”

दुलारी ने मन्द-मन्द हँसते हुए कहा, “इसमें कष्ट क्या !” इसके बाद कृष्णचन्द्र की ओर निहारकर कहा, “सवेरे आपने लिखा था तबीअत अच्छी नहीं है । क्या बात थी ?”

कृष्णचन्द्र ने कुछ भेंपते हुए कहा, “नहीं कोई बात नहीं । शरीर कुछ ज्यादा अच्छा नहीं लग रहा था ।”

केशव ने आश्चर्यसहित कहा, “यही सवेरे लिख भेजा था न क्या ! सवेरे-सवेरे ऐसी भूठ लिखने की क्या जरूरत जिसका शाम के वक्त खाते समय प्रमाण न दे सकोगे ?”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “तुम कुछ भी कहो, लेकिन सवेरे ठीक कहा था । खाते समय उसको प्रमाणित करने की थोड़ी भी चेष्टा न करूँगा, बल्कि ऐसा प्रयत्न करूँगा जिससे आज की तरह कल भी बोल सकूँ । तबीअत अच्छी नहीं ।” कहकर कृष्णचन्द्र हँसने लगा ।

“तो आज तुम्हारे लिए कितने की व्यवस्था की जाय । बता सकती हो दुलारी ?” कहकर केशव विनोदपूर्वक दुलारी की ओर निहारने लगा ।

दुलारी ने कृष्णचन्द्र की ओर निहारकर थोड़ा मुस्करा दिया । इसके बाद मृदु स्वर में कहा, “आप इस बदनामी को स्वीकार कर लेते हैं, इसी से ऐसा कहा जाता है, नहीं तो इसका कोई कारण नहीं।”

केशव ने कहा, “यह बदनामी तो नहीं है दुलारी, यह तो नेकनामी है ! सुना तो है स्वस्थ भद्र पुरुष मात्र तीन पाव खीर और चार दर्जन पूड़ियाँ खाते हैं । अस्वस्थ भद्र पुरुष कितने दर्जन खाते हैं । आज इसका प्रमाण मिल जायगा।”

केशव और कृष्णचन्द्र दोनों हँसने लगे । और दुलारी से भी इस बार बिना हँसे न रहा गया ।

ऊपर आकर दोनों मित्र रामचरण के कमरे के पास के कमरे में दो कुर्सियों पर पास-पास आमने-सामने बैठ गये । जाड़े की ऋतु होने पर भी रास्ते की ओर की दो खिड़कियाँ खुली थी । उनसे होकर पास के एक अन्य मकान से संगीत की ध्वनि आ रही थी ।

थोड़ी देर तक संगीत की ओर चित्त लगाने के बाद केशव ने कहा, “यदि तुम साथ में न होते, तो आज तुम्हारे विवाह की बात बिलकुल पक्की कर लेता।”

केशव की बात सुनकर एकबार इधर-उधर देखकर दबी जबान कृष्णचन्द्र ने कहा, “नहीं, नहीं केशव । लड़कपन मत करो । कल शाम के वक्त तुम्हारे साथ बातचीत के बाद मैंने अच्छी तरह से विचार किया है कि इस समय रामचरण जी के सामने यह सब बात चलाना ठीक नहीं होगा । जब तक उनकी तरफ से दुलारी के विवाह की बात नहीं उठती, तब तक उस बात को उठाने का मतलब होगा, उनको कष्ट देना । बम्बई से मेरे वापस आने के पहले चर्चा न चलाओ।”

बम्बई में कृष्णचन्द्र के बहनोई रहते हैं । उनकी बीमारी का हाल पाकर बहन को लेकर बम्बई जाना कृष्णचन्द्र ने तय किया है ।

केशव ने कहा, “लड़कपन तुम कर रहे हो । यदि हमारे सामने चर्चा चलाने के पहले वे कहीं दुलारी का विवाह ठीक कर डालें, तो क्या होगा !”

कृष्णचन्द्र ने एक क्षण सोचकर कहा, “न, ऐसा कभी न होगा ।

तुम्हें न बताकर इनका कोई काम न होगा, यह बिलकुल तय है।” इसके बाद केशव की ओर झुककर मृदु स्वर में कहा, “और एक बात, हमको तुमको छोड़कर ये और जगह नहीं जायेंगे। पहले हमीं लोगों के लिए कहा जायगा।”

केशव ने हँसकर कहा. “यह सिद्धान्त तुमने किस तरह स्थिर किया ? क्या तुम्हारा ख्याल है कि हमसे अच्छा पात्र कान्यकुब्जों में और ढूँढ़ने से न मिलेगा ?”

रामचरण के कमरे के दरवाजे के खुलने की आवाज सुनकर कृष्णचन्द्र ने जल्दी-जल्दी कहा, “जल्दी नहीं मिलेगा—कम से कम मेरे बम्बई से लौट आने के पहले न मिलेगा। पहले मैं लौट आऊँ, इसके बाद परामर्श करके जैसा हो, किया जाय।”

केशव और कृष्णचन्द्र के आने की बात रामचरण ने उनके पैरों की आहट और आवाज सुनकर जान ली थी। उन्हें अपने कमरे में बुला ले जाकर उन्होंने बातचीत आरम्भ की।

भोजन आरम्भ होने पर केशव और कृष्णचन्द्र में भोजन को लेकर व्यंग्य आरम्भ हुआ, और बीच-बीच में केशव ने दुलारी को साक्षी के रूप में तलब किया, जिससे वह बड़ी परेशानी में पड़ी। उस दिन केशव के साथ अपने विवाह की बात होने के कारण आज पिता के सामने वह केशव से सहज भाव से बात न कर पाती थी। सिर्फ बात ही नहीं, भोजन परोसने में भी उसे लाज लग रही थी। इसी से कटोरों में दूध डालते समय जब एक कटोरे में सारी मलाई गिर गई, तो उसे इच्छा के विपरीत कृष्णचन्द्र की थाली में रख दिया। कृष्णचन्द्र की तबीयत कुछ खराब, फिर भी दूध और मलाई उसके ही हिस्से में अधिक पड़ी। इसे वह क्षण भर में केशव की आँखों से कैसे बचाये। यह देखने के लिए कि केशव की निगाह पड़ी है या नहीं, कृष्णचन्द्र ने जो आँखें उठाई, तो केशव से उसकी आँखें लड़ गईं।

कृष्णचन्द्र के मन का भाव समझकर केशव ने कुटिल हँसी हँसते हुए कहा, “लज्जा मत करो कृष्णा। मलाई पात्र ही को मिली है।”

दुलारी की ओर ज़रा-सा दृष्टिपात करके कृष्णचन्द्र ने देखा कि

दुलारी शान्त तथा प्रसन्न हास्य-सहित उसकी ओर देख रही है। पहले तो उसके मुँह से कोई बात न निकली, फिर केशव की ओर देखकर कहा, “तुम अपात्र हो, यह बात नहीं; लेकिन इसमें भी भाग्य की बात है, इसी से तुम्हारे कटोरे में न पड़कर मेरे कटोरे में पड़ी।”

केशव ने गर्दन हिलाकर कहा, “ना, भाग्य की बात ज़रा भी नहीं—यह तो दुलारी की विवेचना है। तुम्हें छोड़कर और किसी का अधिकार नहीं। दुलारी के इस विचार के ही कारण तुमने पाया है। यह तुम्हारा भाग्य नहीं, भाग है। क्यों दुलारी यही बात है न?”

दुलारी ने सिर्फ़ एकबार मृदु हँसी के सहित केशव की ओर निहारकर कृष्णचन्द्र की ओर देखते हुए कहा, “आप इन सब बातों पर ध्यान मत दीजिए। मैंने यह विचार कर लिया है कि आपको देने से वह नष्ट न होगी।”

दुलारी की सफ़ाई सुनकर केशव हँस पड़ा। कहा, “अर्थात् तुम्हारा यह विचार है कि और किसी को देने से यह नष्ट होगी। मैं भी तो यही कहता हूँ कि शक्ति जाँचकर दी है।”

रामचरण पूरे आनन्द के साथ दोनों मित्रों के परिहास का मज़ा ले रहे थे। इन दोनों शिक्षित और सुसंस्कृत युवकों का कपट-कलह उन्हें बहुत पसन्द आता, इसी लिए सदा इन्हें बुलाया करते।

भोजन के बाद और कुछ देर बातचीत के पश्चात् केशव और कृष्णचन्द्र न चलने की आज्ञा माँगी।

रामचरण ने सोचा था कि केशव के साथ दुलारी के विवाह की बात पहले कृष्णचन्द्र के ही द्वारा केशव को कहलायेंगे। मीक़ा मिलने पर आज ही कृष्णचन्द्र से इस विषय में बातचीत करेंगे, यह विचार भी उनका था, लेकिन केशव के हर समय पास रहने के कारण मीक़ा न मिला। जाते समय दुलारी से बात करते-करते केशव थोड़ा भागे चला गया, तो रामचरण ने कृष्णचन्द्र से मृदु स्वर में कहा, “तुम्हारे साथ हमें एक विशेष परामर्श करना था कृष्णचन्द्र, लेकिन आज तो हो न सका। बम्बई से लौट आओ, तब करेंगे।”

कृष्णचन्द्र रुककर खड़ा हो गया। कहा, “यदि विशेष जरूरत हो, तो और भी कुछ देर रुक सकता हूँ, या कल किसी समय एकबार—”

रामचरण ने कहा, “नहीं, नहीं। आज रात हो गई है, कल भी तुम्हें फँसाना ठीक नहीं। तुम्हारे लौट आने पर करूँगा। बात तो जरूरी है, लेकिन ऐसी जल्दी नहीं। बात और कुछ नहीं, दुलारी के विवाह के सम्बन्ध में तुमसे मेरा एक अनुरोध है। लेकिन ये सब बातें तो थोड़े में होती नहीं। तुम लौट आओ, तब होंगी।”

रामचरण की बात सुनकर कृष्णचन्द्र का हृदय उल्लास से नाच उठा। रामचरण ने यह बात न कही थी कि दुलारी के विवाह के सम्बन्ध में जो अनुरोध करना है, वह दुलारी का उसके साथ ही विवाह करने का अनुरोध है, फिर भी कृष्णचन्द्र का आशा से पागल मन यही मान बैठा। यह बात उसके ध्यान में न आई कि अब तक यहाँ का रिवाज यह है कि विवाह की बात पात्र से न करके उसके किसी निकट आत्मीय से की जाती है, और इसलिए हो सकता है कि वह पात्र न होकर पात्र का कोई आत्मीय या निकट मित्र हो। बहुत संक्षेप में सिर्फ ‘अच्छा’ कहकर वह हर्षविभोर होकर केशव और दुलारी के पीछे-पीछे चलने लगा।

रास्ते में आकर केशव ने कहा, “व्यर्थ ही तुमने बाधा दी, नहीं तो आज विवाह की बात पक्की कर डालता। क्या जानो, ये सब काम छोड़ रखने के नहीं। आदमी कहते हैं ‘शुभस्य शीघ्रम्’।”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “दुनिया की बात मत सुनो भाई। ‘धीरज धरे तो लागे पार’ यह भी तो लोग कहते हैं।”

केशव ने हँसकर कहा, “पार तो लगना होता है, लेकिन कौन पार लगेगा, यह भी तो है। तुमने सन्तोष किया, और यदि पार में लगूँ, तब तो महा विपत्ति !”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “यह डर मुझे नहीं। वैराग की गठरी सिर पर लादकर तुम पार उतर जाओगे, ऐसी सम्भावना मुझे नहीं है।”

केशव ने दाहिनी भुजा से कृष्णचन्द्र को लपेटकर पकड़ लिया और कहा, “इतना दुःसाहस ठीक नहीं। जल्दी वापस आओ। बेर से

आने से अगर देखो कि वैराग की गठरी लिये पार उतर गया, तो फिर हाथ ही मलते रह जाओगे।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “इसमें शक नहीं, क्योंकि इससे बड़ा आश्चर्य तो और न होगा।”

केशव ने अचानक बहुत आग्रहपूर्वक पूछा, “अच्छा कृष्णा, बम्बई से लौटकर अगर तुम देखो कि इस बीच दुलारी के साथ मेरा विवाह ठीक हो गया है, तो ऐसी हालत में मेरे प्रति तुम्हारे मन की क्या हालत होगी, ठीक-ठीक बताओ तो?”

कृष्णचन्द्र ने हँसते हुए कहा, “रोमांचकारी ढंग से कहूँ।”

“कहो ना।”

“तुम्हारी हत्या करने के लिए दूकान से छुरा खरीदकर लाया हूँ, यह सुनकर तुम्हारे मन की अवस्था जैसी होगी, ठीक वैसी ही अवस्था।”

दोनों मित्रों के ठहाके से शीत से शान्त अंचल काँप उठा।

(१८)

कृष्णचन्द्र के बम्बई जाने के कई दिन बाद केशव मालती के विवाह में बूढ़ी आजी को लाने के लिए काशी गया। लेकिन वहाँ आजी किसी भी तरह चलने को तैयार नहीं। उन्होंने सिर हिलाकर कहा, “मैं हगिज न जाऊँगी। अगर तेरे साथ मालती का विवाह होता, तो जैसे भी होता इस बीमार शरीर को खींचकर ले चलती। यह काम तो केशव सिर्फ तेरे मत से हो रहा है।”

केशव को पहले तो कुछ उत्तर न सूझ पड़ा, लेकिन फिर हँसते हुए कहा, “अब तो सबकी राय से हो रहा है। तुम अगर सारी बात को धीरज से सुनो आजी, तो तुम्हारी भी राय हो जायगी।”

“मुझमें ऐसा धीरज नहीं है केशव कि बैठे-बैठे यह अन्याय सुनूँ। मैं उसके मामा को बात देकर ले आई थी, और तू उस लक्ष्मी को ठेलकर बाहर कर रहा है। क्यों, क्या तू यह समझता है कि मालती तेरे लायक नहीं है?”

केशव ने धवराकर कहा, “मैंने तो ऐसी बात एकबार भी नहीं

सोची आजी ! कैसे वर के साथ उसका विवाह हो रहा है, यह मृनने पर तुम समझ जाओगी कि मालती के ही भले के लिए हमने ऐसा किया है ।”

आजी ने नाराज होकर कहा, “थोड़ा भी नहीं केशव, थोड़ा भी नहीं । तूने उसका कितना अनर्थ किया, अगर इसे तू समझता, तो ऐसा कभी न करता ।”

केशव ने व्यग्र होकर कहा, “लेकिन आजी, मालती की मलाह लेकर यह काम तय किया गया है ।”

आजी ने कहा, “यह उसके लिए कितने दुःख, कितनी लज्जा की बात है, इसे क्या तू समझेगा ! वह तो तेरी पोथी में लिखा नहीं ।”

आग्रह के साथ केशव ने पूछा, “उसने तुम्हें कुछ लिखा है क्या ? भाभी ने कुछ लिखा है, बताओ ?”

केशव की बात का कुछ उत्तर न देकर आजी ने कहा, “जबर्दस्ती जो कुछ करता है, कर । विश्वनाथ जी सब मंगल करे । लेकिन मुझको छोड़ दे । जिसको मैं छाती में लगाकर लाई हूँ, उसको बिदा करने में न जाऊँगी । मेरा शरीर भी ठीक नहीं, और मन भी ठीक नहीं ।”

दो दिन रहकर आजी को तरह-तरह से समझा-बुझाकर भी केशव उन्हें लखनऊ ले जाने को राजी न कर सका । और एक दिन हके, या चला जाय, कुछ ठीक नहीं कर पा रहा था । इतने में अनन्त का तार आया कि रामचरण बहुत बीमार है । जल्दी आओ । आखिर केशव भकेला ही वापस आया ।

जब वह लखनऊ पहुँचा, तो वैद्य ने बतलाया कि रामचरण तीन घंटे से अधिक बच नहीं सकते । रोगी के पास जब केशव पहुँचा, तो रात के १० बज गये थे । अनन्त, रामकली और मालती तीनों उपस्थित थीं । रोगी को देखकर जितना नहीं, दुलारी को देखकर उससे अधिक केशव सिहर गया । कई दिनों तक पिता की लगातार सेवा करके और उसका कुछ भी फल न पाकर दुलारी का रूप बदल गया था ।

केशव धीरे-धीरे रामचरण के पास पहुँचा । रामचरण की घड़ी निकट आ रही थी । वे आँखें बन्द किये लेटे थे । उनकी लुप्तप्राय

चेतना का स्थान धीरे-धीरे जड़ता ले रही थी। अनन्त रामचरण के कान के पास मुंह ले गया, और कुछ जोर से कहा, “काका, केशव आया है।”

दो-तीन बार बुलाने पर रामचरण ने आँखें खोली। पूछा, “कहाँ—कहाँ?”

केशव ने रामचरण का एक हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, “यह मैं आपके पास ही हूँ।”

“दुला—दुलारी?”

केशव ने कहा, “दुलारी आपके उधर है।”

रामचरण ने अपने काँपते हुए हाथों से दुलारी का दाहिना हाथ पकड़कर केशव और दुलारी के हाथ अपनी छाती पर धरके केशव की ओर मुँदती आँखों से देखकर कहा, “बोलो।”

केशव ने गर्दन झुकाकर कहा, “क्या बोलूँ, बताओ?”

गतप्राय चेतना और शक्ति को किसी तरह संचित करके रामचरण ने केशव के मुँह पर दृष्टि जमाकर कहा, “बोलो, ग्रहण किया?”

थोड़ी देर सोचकर केशव ने कहा, “दुलारी का सब भार मैंने लिया। आप निश्चिन्त हो जाइए।”

केशव क्या उत्तर देगा, यह सुनने के लिए सभी कान लगाये उसी की तरफ़ ताक रहे थे। लेकिन केशव के उत्तर से जिसका थोड़ा भी हानि-लाभ न था, वह सबसे अधिक क्यों केशव की ओर साँस बाँधकर ताक रही थी, और केशव का उत्तर सुनकर उसका लाल मुख कपास की तरह सफ़ेद क्यों हो गया, यह रहस्य कम कौतुकपूर्ण न था। मालती के अभिमान को जो ठेस लगी थी, उसके बाव उसके हृदय में आशा की एक किरण भी न थी, ईर्ष्या-द्वेष की भी कोई बात न थी, जो हानि पहले ही हो गई है, उसमें कुछ बढ़ती नहीं हुई—फिर भी मृत्यु-शय्या के पास केशव ने जो वचन दिया, उससे मालती के हृदय के किसी अज्ञात देश में इतना आघात हुआ, जितना पहले सब कुछ लुट जाने पर भी नहीं हुआ था।

केशव की बात से मृत्यु-मुख में पड़े रोगी की तेज-हीन आँखों में भी एक क्षण के लिए तेज आ गया। शक्ति-हीन रूपर का ओंठ

जरा-सा हिला, और कुछ अस्पष्ट शब्द निकला। बात समझ में न आई। लेकिन यह मरणोन्मुख के प्रायः रुके हुए हृदय का आशीर्वाद था, यही सबने समझा।

रात में कई बार डाक्टर आया, और रामचरण को कई बार दवा दी गई, लेकिन केशव पर जो कृतज्ञतापूर्ण स्नेह-दृष्टि उन्होंने डाली थी, उसके बाद फिर और आँख न खोली। न उत्तेजक दवायें ही आँखें खोल सकीं, और न दुलारी की कातर पुकार। दुलारी मृत पिता की छाती पर लोटकर प्रायः मरी-सी पड़ी थी, केशव मृत के सिरहाने बैठा उदास बिना पलकें मारे मृत और इस अर्द्धमृत को देख रहा था। थोड़ी दूर पर बैठी रामकली और मालती आँसू बहा रही थीं। और अन्त अन्तिम संस्कार का प्रबन्ध करने के लिए नीचे चला गया था।

(१९)

रामचरण की तेरही हो गई। उसके बाद भी कई दिन तक दुलारी हजरतगंजवाले ही मकान में रही। मृत्यु के बाद अब पिता की स्मृति के सिवा उस घर में उनका और कुछ बाकी न था, यह दुलारी का व्यथित हृदय मानने को राजी न था। इसी घर में उसने पिता की सेवा की है, इसी में अन्तिम आशीर्वाद लिया है, इसी लिए तेरही के बाद भी वह घर छोड़ने को उसका जी न चाहता था।

दुलारी के हृदय की यह बात समझकर केशव ने भी कुछ बाधा न दी। उसके साथ मालती भी इसी घर में साथ के लिए रहती थी—और दोनों युवतियों की देख-भाल के लिए केशव पास के कमरे में सोता था।

प्रायः चार बजे हैं। स्कूल की छुट्टी हो गई है। लड़कों का एक बल झुण्ड बनाकर घर लौट रहा था। दुलारी और मालती खिड़की के पास बैठकर उन लड़कों की चपलता देख रही और बातें कर रही थीं।

मालती ने कहा, “मुझे विश्वास है दुलारी, तुम्हारे दुःखों के

बन्धन भगवान् पहले ही काटे देते हैं। तुम्हारे सुख के दिन जल्द आवेंगे।”

रास्ते की तरफ़ देखते हुए दुलारी ने कहा, “क्या मालूम भाई। मुझे नो थोड़ा भी भरोसा नहीं। मुझे इसी बीच कितने दुःख सहने पड़े हैं, तुम तो जानती ही हो। बप्पा सहारा थे, लेकिन वे भी छोड़ चले।”

थोड़ी देर सोचकर मालती ने कहा, “काका तुमको बिना सहारे नहीं कर गये दुलारी ! सहारा छोड़ने के ठीक पहले ही वे तुम्हारे लिए सहारा कर गये हैं।” इसके बाद दुलारी को बोलने का मौका न देकर मालती ने पूछा, “तुमने लड़कपन में गौरी की पूजा की है दुलारी ?”

दुलारी ने आश्चर्य के साथ मालती की ओर निहारकर कहा, “नहीं। क्यों ?”

उसका कुछ उत्तर न देकर मालती ने कहा, “और कौन-सा व्रत-पूजा जिमसे—” अचानक मन में चौकन्नी होकर मालती एकबारगी रुक गई। उसके मन की छिपी हुई व्यथा शब्दों में किसी तरह उतर आई थी। इसे वह समझ न सकी थी, लेकिन जब उसने समझा तो अचानक थम गई, जैसे तेज घोड़ा दौड़ते-दौड़ते आगे खन्दक देखकर सहसा रुक जाय।

बान यद्यपि आधी ही कही गई थी, लेकिन दुलागी ने आधे से ज्यादा ही समझ लिया। फिर भी मालती के असमाप्त वाक्य को दोहराकर कहा, “जिससे क्या हो मालती ?”

बान पूरी करने के सिवा और कोई रास्ता न देखकर मालती ने कहा, “जिससे केशव भैया तुम्हारे स्वामी हों।” कहते-कहते उसका मुँह लाल हो गया।

दुलारी ने मालती के मुख की लाली ही देखी, उसकी आँखों के कोनों में जो भावों की क्षीण रेखा थी, उसे वह देख न सकी। कहा, “इस जन्म में तो ऐसा कुछ नहीं किया, पूर्व जन्म में हो सकता है कुछ किया हो।”

असावधानी से मालती के प्रेम-वंचित हृदय में थोड़ी देर के लिए

जो दुर्बलता आगई थी, उसे दबाकर मालती ने सहज भाव से कहा, “यदि इस जन्म में कुछ नहीं किया, तो दुलारी पूर्व जन्म का बहुत बड़ा पुण्य समझो तभी ऐसा हो सकता है। केशव भैया का सहारा मिलने से तुम्हारा सब दुःख दूर हो जायगा।”

ऐसा आश्वासन मिलने पर दुलारी के हृदय को थोड़ी शान्ति मिली। पिता का सहारा छूट जाने के बाद उसे यह नया सहारा इस प्रकार का मिला है, यह जानकर थोड़ी देर के लिए वह पिता का आश्रय छूटने का दुःख भूल गई। लेकिन प्रकाश के पास ही छाया की तरह संशय ने आकर घर किया। पिता के न रहने पर उसने केशव के आश्रय की बात कई बार सोची है, लेकिन प्रतिवार संशय ने आकर उसके मस्तिष्क में घर किया है। इसी लिए उसने मालती की बात सुनकर कहा, “डर होता है बहन, भाग्य मेरा इतना मन्द है कि इतना सुख मुझे मिलेगा, ऐसा विश्वास नहीं होता। तुम्हारे केशव भैया मनुष्य तो हैं नहीं। वे हैं देवता, और मेरा ऐसा भाग्य कहाँ कि उनका आश्रय सदैव के लिए पाऊँगी?”

“तुम उनकी दया से आश्रय पाओगी। वे तुम पर कृपा करके तुम्हें आश्रय देंगे। तुमने ठीक कहा है दुलारी, वे देवता हैं, मनुष्य से बहुत ऊपर। वे सिर्फ देना जानते हैं, लेना कुछ नहीं जानते।” थोड़ा रुककर मालती ने कहा, “लेकिन यह बात भी ठीक है बहन, कि इच्छा करने से कुछ नहीं मिलता, अनचाहे सब मिलता है। यह जो तुम्हारा प्रेम, यह साधारण चीज नहीं। यह क्या उन्हें माँगने से मिला है? अनचाहे ही तो मिला है।”

प्रेम की बात सुनकर दुलारी के मुख पर लाली दौड़ गई, और शोक से मुरझाये ओठों पर मुस्कराहट की एक धुंधली-सी रेखा कुछ क्षणों के लिए खिच गई।

“प्रेम की बात तो कह नहीं सकती भाई, लेकिन मेरी भक्ति तो उन्हें यों ही नहीं मिली। पहले उन्होंने मुझ पर दया की है, उसके बाद मैंने भक्ति की है।”

मालती ने हँसकर कहा, “तो मैंने जो कहा था, वही ठीक है न ?

अनचाहे उन्होंने दिया है, और अनचाहे उन्होंने पाया है। इसके सिवा और देवता किसको कहा जाय ?”

दुलारी ने हँसकर कहा, “अपने केशव भैया को देवता कहने में तुम्हें कुछ हिचकिचाहट है क्या मालती ?”

मालती ने हँसकर कहा, “तनिक भी नहीं। लेकिन एक बात पूछती हूँ दुलारी। तुम इस देवता की भक्ति ही करती हो, या प्यार भी ?”

थोड़ा सोचकर दुलारी ने पूछा, “दोनों में क्या कुछ अन्तर है ?”

“ज्यादा न होने पर भी कुछ है। मैं यही पूछती हूँ कि भक्ति के साथ यह प्रेम कब आ जुटा ?”

दुलारी ने मीठी हँसी के साथ कहा, “जुटा है यही कैसे जाना ?”

“तुम्हारे कहने से।”

मालती की बातचीत सुनकर कुछ देर से दुलारी के मन में कुछ शंका उठ रही थी। वह शंका ठीक है या नहीं, इसका निर्णय करने के लिए दुलारी उत्सुक हो उठी, और उचित-अनुचित का विचार किये बिना अचानक मालती से पूछ बैठी, “अच्छा मालती तुम्हारे केशव भैया का विवाह यदि तुम्हारे साथ होता, तो अच्छा न होता ?”

दुलारी के इस अद्भुत प्रश्न से मालती पहले तो कुछ बेचैन-सी हो गई, लेकिन फिर संभलकर कहा, “छिः बहन, भाई के साथ बहन का भी कहीं विवाह होता है !” इसके बाद थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद थोड़े गम्भीर स्वर में कहा, “इस समय यह सब मत कहो !”

दुलारी के मन में जो सन्देह उत्पन्न हुआ था, मालती की बात से वह दूर हो गया, और मालती की मीठी भर्त्सना से थोड़ी लज्जित हो गई। उसने बात-चीत का प्रसंग बिलकुल बदलते हुए पूछा, “कृपा बाबू को तो तुमने देखा है मालती ?”

“देखा है।”

“सुना है रूप, गुण, धन सबमें वे समान हैं !”

“मैंने भी तो ऐसा ही सुना है।”

“सुना पहले ही दिन देखकर वे मुग्ध हो गये थे।”

“मैंने भी तो ऐसा ही सुना है।”

“अच्छा मालती?”

दुलारी के मुख पर वृष्टि गड़ाकर मालती ने पूछा, “क्या?”

“तुम्हारा मन भाई कहाँ रहता है, किसी भी तरह थाह नहीं मिलती।”

दुलारी की बात सुनकर मालती हँस पड़ी। कहा, “मेरे मन की थाह लेने के लिए तुम इतनी चिन्तित? अच्छा तुम्हारा क्या अन्वाज्ञा है दुलारी कि मेरा मन कहाँ रहता है?”

“मैं तो अन्दाज्ञा भी नहीं कर पाती। एकबार जो सोचती हूँ, दूसरे ही क्षण गलत मालूम होता है।”

“लेकिन तुम्हारे मन की थाह मैं ठीक ले चुकी हूँ—मैं जानती हूँ वह कहाँ रहता है। बोलूँ कहाँ रहता है?”

थोड़ी हिचकिचाहट के साथ दुलारी ने कहा, “बताओ”।

नीचे केशव की आवाज सुनकर दुलारी और मालती की आलोचना बन्द हो गई। केशव ने ऊपर आकर कहा कि कल सवेरे इस मकान को छोड़कर घर चलना होगा। इस समाचार से मालती बहुत प्रसन्न हुई। अलग रहना उसे धीरे-धीरे अरुचिकर हो गया था। लेकिन दुलारी ने और कई दिन रहने को कहा।

केशव ने हँसकर कहा, “कई दिन क्यों? तुम्हारी जितने दिन इच्छा होती, रहती, लेकिन बप्पा के एक मित्र की लड़की का विवाह है, उन्हें घर की जरूरत है बारात टिकाने के लिए। कल ही तीसरे पहर बारात आयेगी, इसी लिए कल सवेरे ही इसे खाली कर देना होगा। इसके सिवा सबसे मुश्किल है भाभी को लेकर। वे तुम दोनों के लिए हर समय चिन्तित रहती हैं, और मुझे इस तरह ताक़ीद करती हैं मानो मैंने ही तुम्हें यहाँ रोक रक्खा हो।”

इसके बाद दुलारी को कुछ आपत्ति न हुई, और कल सवेरे जाना तय हो गया।

मालती केशव के लिए जलपान लेने गई।

केशव के साथ कमरे में अकेले रहने में दुलारी को आज कुछ

संकोच होने लगा। केशव के प्रति उसकी जो प्रीति पिता की मृत्यु के कारण शोक के बादलों से घिर गई थी, मालती के साथ वार्त्तालाप के बाद शरत्-कालीन शशिकला की भाँति निखर उठी थी। वह अपने हृदय में उसी प्रेम की शशिकलाओं का मधुर रस-पान करने लगी।

केशव ने कहा, “भाभी तुम्हारे लिए मालती के कमरे के पास के कमरे को सवेरे से सजा रही हैं। तुम्हारे पढ़ने के लिए रामायण, महाभारत से लेकर सेवासदन और गोदान तक प्रायः बीस-पच्चीस किताबें खरीदकर लाई हैं। तुम्हें वहाँ किसी प्रकार की असुविधा न होगी दुलारी।”

इस अवस्था में केशव के घर में रहना ठीक होने पर भी कई दिनों से दुलारी को यह ठीक नहीं लग रहा था। लखनऊ में अलग रहना, या तिवारीपुर में अकेले रहना दोनों ही उचित न होने पर भी केशव के घर में रहने में जाने क्यों दुलारी को संकोच हो रहा था।

इसी लिए केशव की बात पर कहा, “आपके यहाँ जाने पर किसी प्रकार की असुविधा न होगी, यह तो जानती हूँ, लेकिन मैं ही सबको परेशान करूँगी। इसके सिवा यदि मैं कुछ दिनों के लिए तिवारी-पुर—” दुलारी के मुँह से इसके आगे और शब्द न निकले।

केशव के ओंठों पर मन्द-मन्द हँसी भलकने लगी। उसने कहा, “लेकिन उससे यदि हम और परेशान हों? हम किस तरह अधिक परेशान होंगे, यह तुमसे क्या हम अधिक नहीं समझ सकते? इसके सिवा सिर्फ हमारे परेशान होने की बात इसमें नहीं है। तुम्हें कहाँ अधिक परेशानी होगी? अकेले तिवारीपुर में या मालती और भाभी के साथ हमारे घर में?”

इस स्पष्ट तथा प्रबल बात का दुलारी से कुछ भी उत्तर न बन पड़ा, और वह चुप रही। उसके अति सूक्ष्म आत्म-मर्यादा के भाव को केशव की सरल तथा सबल आत्मीयता के कवच को छेदने का कोई रास्ता ही न मिला।

उसके मन की दशा का अनुमान करके केशव ने कहा, “काका

ने मुझे जो अधिकार दिया है, क्या उसे भूल गई हो दुलारी ! इस समय इस संसार में तुम पर मेरा सबसे अधिक अधिकार है ! उस अधिकार के उपयोग में यदि तुम बाधा दो, तो मैं समझूंगा कि तुम उस अधिकार को नहीं मानती । तुम अपने सम्बन्ध में सब प्रकार की चिन्ता से मुक्त होकर मेरे ऊपर सब कुछ छोड़ दो । मैं तुम्हारा जो प्रबन्ध करूँगा, उससे तुम न अपने और न संसार के सामने लज्जित होगी ।”

इसके बाद दुलारी के मन में कुछ भी द्विधा या द्वन्द्व न रह गया, और वह केशव के घर जाने को राजी हो गई, और अलग रहने की बात करके केशव से जो गैर का भाव दिखाया था, उससे दुःखित होकर कहा, “मैं अपने विषय में और कुछ चिन्ता न करूँगी । आप जो कहेंगे, वही होगा । आपके ही घर चलूँगी ।”

“सिर्फ हमारे घर क्यों दुलारी, वह तो तुम्हारा भी घर है । तुम अपने घर जाओगी ।”

इस प्रकार कहकर केशव ने अपने आसन्न मिलन का जो आभास दिया था, उसे सोचकर दुलारी लाल हो गई । उसको ऐसा लगा जैसे केशव सिर्फ अपने घर में नहीं, अपने हृदय में आश्रय देने के लिए बुला रहा है । इस अकथ माधुरी से दुलारी का हृदय आर्द्र हो गया, लेकिन मुख से एक शब्द भी न निकला ।

दुलारी को चुप देखकर केशव ने कहा, “क्या इसमें तुम्हें सन्देह है ?”

“किसमें ?”

“कि हमारा घर तुम्हारा घर है ?”

“थोड़ा भी नहीं ।”

केशव ने सन्तुष्ट होकर कहा, “तो सिर्फ मेरे कहने पर नहीं बल्कि खुद अपनी इच्छा से तुम कल अपने घर जाओगी ।”

मालती जलपान लेकर आई । उसके हाथ से तश्तरी लेकर केशव ने कहा, “नीचे राजमिस्त्री आये हैं—मैं जाकर चूना, सुर्खी लगाने के लिए उन्हें कहूँ । तुम तब तक कुछ सामान बाँध डालो ।”

कुछ देर सोच-विचार में रहने के बाद दुलारी ने पुकारा, “मालती ।”

“क्या ?”

“तुम्हारे केशव भैया सच में देवता हैं ?”

“मानव नहीं ?”

“नहीं ।”

“अमानव ?”

मालती की बात से मन ही मन खिन्न होकर दुलारी ने कहा, “छिः भाई, उनके सम्बन्ध में ऐसी बात मुंह पर लाना भी पाप है ।”

मालती ने कुछ उत्तर न दिया । वह सिर्फ़ मुसकराने लगी । जो बात दिन-रात उसके मस्तिष्क में रहती है, उसे क्या एकबार मुंह पर लाना पाप है ? यह बात उसने अपने सारे जीवन के सुख-सौभाग्य को देकर मीखी है कि केशव को देवता भी कहा जा सकता है, अमानव भी । सिर्फ़ मानव नहीं कहा जा सकता । जीवन में इससे अधिक अटल और निष्ठुर सत्य उसे ज्ञात न था ।

(२०)

फागुन का महीना, दोपहर अभी लौटा था । दरवाजे पर शहनाई बज रही थी । कल मालती का विवाह था । मालती अपने कमरे में बैठी थी । कमरे में मालती के सिवा दुलारी और राजरानी भी थीं । राजरानी एक रेशमी रूमाल के कोने में रेशमी सूतो से एक ही पास मालती और कृपाशंकर के नाम बुन रही थी । कलेऊ के समय वर को थैली के साथ उपहार देगी । दुलारी एक दरी पर बैठी राजरानी की कारीगरी देख रही थी । मालती दूसरी ओर मुंह फेरे इस हृदय-दाहक दृश्य से अपनी आँखें हटाये हुए थी । लेकिन परिहास-कुशला राजरानी के परिहासों से कानों को दूर रखने का उसे कोई उपाय सूझ नहीं पड़ता था । राजरानी ने मालती के इस मौन को स्वाभाविक लज्जा समझकर परिहास की मात्रा और बढ़ा दी थी । और दुलारी भी यह सोचकर कि कुछ न कहने का और अर्थ समझा जायगा, बीच-बीच में कुछ चुटकियाँ ले लेती थी ।

लेकिन वाक्यवाणों के किसी भी प्रहार से मालती का मुँह न खोल सकने पर जब राजरानी ने अभिमानपूर्वक कहा, “बोलती क्यों नहीं मालती ? मुझसे नाराज हो ?” तब बात करने के सिवा मालती के सामने और कोई चारा न था ।

उसने अपने दुःखित मुँह को यथा-शक्ति प्रसन्न करके कहा, “नाराज हूँगी क्यों राजरानी दीदी ! तुमको आनन्द है, मैं क्यों नाराज हूँ ?”

राजरानी ने फूल काटना बन्द करके हँसते हुए कहा, “लेकिन हमारे आनन्द में यदि तुम शरीक न हो, तो हम तो नाराज होंगी । हम भी तुम्हारे आनन्द में शामिल हुई हैं !”

राजरानी की बात सुनकर दुःखित होने पर भी मालती हँस पड़ी । कहा, “यदि मेरे आनन्द में सहायक होती, तो इस तरह दिल्लगी न करती । लेकिन तुम्हारी दिल्लगी में मैं किस तरह सहयोग दूँ ? मेरा तो विवाह है !”

“हाँ भाई, विवाह तुम्हारा, वर भी तुम्हारा—उस सबमें हम हिस्सा लेना नहीं चाहती । लेकिन तुम्हारा विवाह है, इसी से क्या दिल्लगी में शामिल न होने को कहा गया है—और रात-दिन मुँह लटकाये कृपा बाबू का ध्यान करने की सलाह मिली है ?”

इस तरह की अनेक बातें राजरानी ने कही हैं, इसलिए मालती को इससे और कुछ कष्ट न हुआ, सिर्फ फीकी हँसी की एक अस्पष्ट रेखा खिंच गई । मालती ने कहा, “विवाह के बाद तो और ध्यान करूँगी नहीं, इसलिए विवाह के पहले ही किये लेती हूँ ।”

राजरानी ने कहा, “तुम्हें तो अब और ध्यान करने की जरूरत नहीं । तुम्हें तो वर मिल गया है । संसार में ध्यान करने पर वर मिलता है, वर मिलने पर ध्यान नहीं किया जाता ।”

मालती ने मलिन हँसी हँसते हुए कहा, “मैं भी वर पाने पर ध्यान न करूँगी । अभी तो वर मिला नहीं ।”

दुलारी ने मीठे स्वर से कहा, “कल तो पावोगी ।”

राजरानी ने फिर रूमाल में फूल काढ़ते हुए कहा, “इतनी अधीर हो उठी हो ?”

मालती ने फीकी हँसी के साथ कहा, “बहुत ।”

दुलारी ने कहा, “तुम तो खूब बोलनी हो मालती, अब तक चुप क्यों थी ।”

“तुम्हारे आनन्द में शामिल हुए बिना बचती न थी ।”

रंगत अच्छी आगई थी, इससे राजरानी मन ही मन प्रसन्न हो रही थी । लेकिन सारे वार मालती पर ही हो रहे थे, इससे गड़बड़ न हो जाय, इसी के लिए राजरानी ने दुलारी की भी खबर लेने की सोची । कहा, “तुम ने वर पा लिया है, या अब भी ध्यान ही हो रहा है दुलारी ?”

राजरानी के प्रश्न से दुलारी का मुँह लाल हो गया । मुसकराते हुए कहा, “ध्यान बिना किये क्या वर मिलता है राजरानी दीदी ?”

राजरानी ने विस्मय के भाव से कहा, “सो कैसे मिलेगा ?”

“तुमने ध्यान किया था ?”

“जरूर, न करने से वर पाया किस तरह ?”

राजरानी की बात सुनकर दुलारी हँसने लगी ।

मालती ने कहा, “ज्यादा ध्यान करने से कभी कभी उलटा वर मिलता है ।”

राजरानी ने हँसकर कहा, “एक वर पा जाना चाहिए—फिर उसे सीधा करने में कितनी देर लगती है । तुम डरो नहीं मालती कृपा बहुत सीधे वर होंगे—फिर भी अगर कभी देखो कि उलटे हैं तो मुझे बतलाओ, मैं मंत्र बता दूँगी । उलटे दो दिन में सीधे हो जायेंगे ।”

दुलारी ने हँसकर कहा, “यह विद्या भी तुम जानती हो क्या राजरानी दीदी ? टोना-मंतर भी जानती हो ? उलटे को किस तरह सीधा करना होता है, बताओ तो मुनू ?”

राजरानी ने दुलारी की ओर देखकर हँसते हुए कहा, “समझी, तुम पहले से ही सीख रखना चाहती हो । तो छोटे भैया है थोड़े टेढ़े, थोड़ा सीधा करने की जरूरत हो सकती है । तो मन लगाकर सुनो । टेढ़ी लाठी, टेढ़े काठ को सीधा करने का उपाय तो जानती हो ?

जिधर टेढ़ा हो, उसके उलटी तरफ़ और जोर से टेढ़ा करना पड़ता है। टेढ़े वर को सीधा करने का यही नियम है। वह जिधर टेढ़ा हो, तुम उसके उलटी तरफ़ और टेढ़ी हो जाओ। वह अगर हँसे, तुम रोओ। वह अगर मुँह फुलाये रहे, तुम हँसती रहो। वह यदि बात करना बन्द कर दे, तुम घर के हर किसी से बिना बात बको। वह अगर मित्र के घर में जाकर बैठे, तुम सीधे बाप के घर जाकर बैठो। कुछ दिन इस तरह करने से देखोगी टेढ़ा वर बिलकुल सीधा हो जायगा।”

राजरानी की बात सुनकर दुलारी हँसने लगी।

मालती ने पूछा, “राजरानी दीदी, यह विद्या तुमने टोकर खाकर सीखी है, या पोथी से सीखी है?”

इसका उत्तर देने के पहले ही राजरानी को बाहर से रामकली ने बुलाया, और उसे चली जाना पड़ा।

राजरानी के चले जाने पर मालती ने पुकारा, “दुलारी?”

“क्या भाई?”

“तुम्हारा विवाह कब होगा?”

लज्जित होकर दुलारी ने कहा, “सो कैसे बताऊँ?”

“केशव भैया ने कुछ कहा नहीं?”

मुसकराते हुए अड़ते-अड़ते दुलारी ने कहा, “विशेष कुछ नहीं कहा।”

मालती ने कहा। “तब भी?”

थोड़ी देर चुप रहकर लज्जा से भुके नेत्रों को मालती की ओर फेरकर दुलारी ने कहा, “कहा था, तुम्हारा विवाह हो जाने के बाद मुझे एक बार तिवारीपुर ले जायेंगे।

“वहाँ तुम्हारा विवाह होगा?”

“नहीं, वहाँ सब बन्दोबस्त करके फिर यहीं लौट आयेंगे।”

“यहाँ आकर तुम्हारे साथ विवाह करेंगे?”

“शायद।”

“दुलारी!”

“क्या?”

“पंखा जरा खोल दो।”

“इस जाड़े में पंखा ?”

“मेरा शरीर आज बहुत खराब लगता है। पंखा खोल दो, बड़ी उमस लग रही है।”

दुलारी ने जल्दी से पंखा खोलकर कहा, “भाभी को बुलाऊँ ?”

बहुत ही कष्ट के साथ एक फीकी हँसी हँसते हुए विवर्ण मुँह से मालती ने कहा, “नहीं, नहीं। किसी को बुलाने की जरूरत नहीं। मुझे कभी-कभी इसी तरह होता है।”

पंखे की हवा से राजरानी का रुमाल उड़कर मेज के ऊपर खुल गया। अचानक मालती की दृष्टि उस पर पड़ी। लाल रंग के सूत से बुना उसका और कृपाशंकर का नाम जैसे कुछ सम से खीची रेखाये हों। उसे ऐसा लगा मानो वे अक्षर लाल सूत से नहीं उसके ही हृदय के रक्त से बनाये गये थे। उसने भय से आँखें बन्द कर ली।

(२१)

उसी दिन शाम के वक्त मालती अपने कमरे में अनमनी बैठी थी। उसी समय उसके दरवाजे से आवाज आई, “मालती है ?” केशव का स्वर पहचानकर मालती को पहले तो इच्छा हुई कि जंजीर लगा दे, लेकिन ऐसा न किया। बैठे ही बैठे कहा, “हूँ।” लेकिन बुलाया नहीं। सिर्फ बिछौने में उतर पड़ी।

केशव दरवाजा खोलकर मालती के सामने आ खड़ा हुआ। मालती का मुँह देखकर चौंक पड़ा।

“क्या तुम्हारी तबीअत अच्छी नहीं है मालती ?”

इसका कुछ भी उत्तर न देकर मालती ने पूछा, “क्या काम है केशव भैया ?”

मालती की तबीअत के बारे में और कुछ न पूछकर थोड़ा इधर-उधर करके कहा, “यह मैं तुमको भेंट दूँगा। देखने आया था कि गले में ठीक होगी या नहीं।” इतना कहते हुए मखमली डिब्बे के भीतर से बहुमूल्य मोतियों की एक कण्ठी निकाली। बिजली के प्रकाश में हीरों की चमक दुगुनी हो गई !

मन में जो एक उत्तेजना व्याप्त हो रही थी, मालती किसी तरह उसे दबाने की चेष्टा कर रही थी। लेकिन कण्ठी दिखलाने की इस साधारण बात से सहसा जैसे बिजली छू गई हो। मालती का पीला मुँह कठोर और लाल हो गया, और कण्ठी के हीरों की ही तरह आँखों में चमक दिखलाई पड़ने लगी।

“और मुझे कितना अपमानित करोगे केशव भैया ? मिटा दो, मिटा दो। जितने तरह से दुख देना हो, दो।”

क्षण में केशव के मुँह पर मानो मनो कालिख पुत गई हो। “क्या मैं तुम्हारा अपमान करता हूँ; तुम्हें दुख देता हूँ ?”

थोड़ा और आगे आकर उत्तेजित हो दबे स्वर में मालती ने कहा, “हाँ तुम ! तुम मेरा अपमान करते हो—तुम मुझे दुःख देते हो ! मुना ? अब जाओ—मुझसे अब और खड़ा नहीं रहा जाता !”

पीछे फिरकर एक कदम बिछौने की ओर जाकर फिर लौटकर कहा, “क्या तुम सोचते हो मैं हूँ गुड़िया कि तुम जहाँ रखोगे वहीं रहूँगी, जिस तरह सजाओगे, उसी तरह सज जाऊँगी ? क्या मेरे शरीर में रक्त-मांस नहीं है कि तुम चाहे जितने आघात करो, मैं चुप रहूँगी।”

केशव का मुँह फीका पड़ गया। वह कुछ क्षण चुप खड़ा रहा। वह सदा की शान्त, अल्पभाषिणी, मालती किसी दशा में ऐसा भी रूप धारण कर सकती है, यह केशव स्वप्न में भी न सोचता था।

मालती की चमकती आँखों में आँखें डालकर केशव ने कहा, “यही समझ बैठी हो मालती ? केवल आघात, केवल अपमान ? छः साल पहले जब तुम इस घर में आई थी, तब से अब तक यही मिला है, और कुछ नहीं ?”

इस कारण स्थिति का वर्णन करते ही मालती का मुँह पीला पड़ गया, लेकिन उसने कठोर करके कहा, “जानती हूँ, जानती हूँ। तुम लोगों ने बड़ी दया की है। इस शरीर के पीछे तुम्हारा बहुत खर्च हुआ है, लेकिन अब उसकी व्यवस्था भी तो हो गई है। बड़े आदमी के साथ मेरा विवाह कर रहे हो। चक्रवर्ति-सहित तुम्हारा ऋण चुकाने से अब होगा कि नहीं ?”

क्षण भर के लिए केशव की दुःखित आँखें जल उठीं, लेकिन अपने को संयत करके कहा, “यह हो सकता है, लेकिन सिर्फ़ रूप्यों का ही ऋण तो नहीं होता मालती, प्रणय भी तो एक ऋण है, सो क्या उसे इसी वक्त भुगता रही हो?”

दृढ़ स्वर में मालती ने कहा, “हाँ, इसी तरह तो भुगता रही हूँ—इसी प्रकार तुम्हारा दासीत्व स्वीकार करके—तुम्हारे सब हुक्म, सब जबर्दस्ती को सिर-माथे लेकर। अब भी यदि कुछ बाकी है, तो बोलो और क्या करना होगा?”

केशव का मुँह पीला पड़ गया। उसने गंभीर स्वर में कहा, “तुमको भी जो कुछ कहना हो, जितना कठोर, जितना भूठ, सब कह लो। कितना ही निष्ठुर क्यों न हो!”

अचानक केशव ने देखा कि मालती का मुँह इस तरह पीला पड़ गया है, जैसे सारा रक्त किसी ने खींच लिया हो, और केशव के देखते देखते मालती उसके पैरों पर गिर पड़ी। केशव ने जल्दी-जल्दी दरवाजे की जंजीर बन्द कर दी, और मालती को उठाकर बिछौने पर लिटाया, पंखा खोल दिया, तथा उसके मुँह पर जल के छीटे देने लगा।

दो-तीन मिनट में आँखें खोलकर मालती बिछौने के ऊपर उठकर बैठ गई। थोड़ी दूर जाकर केशव ने पूछा, “किसी को बुलाऊँ? क्या अब भी कमजोरी मालूम होती है?”

मालती ने मुँह झुकाकर कहा, “नहीं।” इसके बाद दृष्टि बन्द दरवाजे पर गई। मालती ने कहा, “दरवाजा खोल दो केशव भैया?”

केशव ने दरवाजा खोल दिया, और मालती के बिछौने के पास आकर स्नेहपूर्वक कहा, “मैं इस वक्त चलता हूँ मालती। तुम अपने मन को शान्त करो। मैं अधिक क्या कहूँ भगवान् तुम्हारे मन को शान्ति दें। यदि अनजाने किसी तरह का अन्याय किया हो, तो माफ़ कर दो भाई!” और न रुककर केशव धीरे-धीरे बाहर चला गया। तब मालती के हृदय में ग्रीष्म की तपन के बाद वर्षा आई। आँखों से भरभर कर आँसू निकलकर बिछौने को गीला करने लगे। केशव के चले जाने पर

मालती ने दरवाजा बन्द कर लिया, और बिछौने पर लेटकर बड़ी देर तक रोती रही।

(२२)

मालती के घर से निकलकर केशव रामकली को खोजने लगा। रामकली उस समय ठाकुरद्वारे में प्रार्थना करने गई थी। केशव भी वहीं जा खड़ा हुआ। प्रार्थना के बाद रामकली ने जब केशव की ओर देखा, तो सहम गई। “क्या हुआ है तुम्हें केशव ?”

थोड़ा हँसकर केशव ने कहा, “कुछ तो नहीं।”

“तब मुँह इस तरह सूख क्यों गया है ?”

“क्या चिन्ता कम है भाभी, विवाह क्या साधारण काम है ?”

रामकली इस उत्तर से प्रसन्न न हुई, लेकिन उसके कुछ पूछने के पहले ही केशव ने कहा, “भाभी !”

केशव के स्वर से रामकली ने चिन्तित होकर कहा, “क्या बात है, बताओ ?”

थोड़ा इधर-उधर करके केशव ने कहा, “तुम्हारी बात न मानी। जान पड़ता है अच्छा न हुआ।”

“मैं तो समझ ही नहीं पाती देवर, क्या अच्छा न हुआ ?”

थोड़ा सोचकर केशव ने धीरे-धीरे कहा, “कृपाशंकर के साथ विवाह होने से मालती यदि सुखी न हो भाभी ? क्या इस समय इस पर अब और विचार करने का समय नहीं है ?”

केशव की बात से रामकली चिन्तित हो उठी। चार दिन पहले तक जो केशव ठीक उलटी बात कहता था, आज उसी ने रामकली को खोजकर यह बात कही है, इसका मर्म रामकली बिना कहे समझ गई। थोड़ी देर में अच्छा-बुरा जो कुछ हो सका, सोचकर रामकली ने देखा कि अब इसमें और कुछ करने का रास्ता नहीं है। चारों तरफ से मामला कुछ इतना आगे बढ़ गया है कि, जो कुछ बाकी भी है उसकी कुछ गिनती नहीं। इस समय सारे काम को उलट देने का साहस रामकली में न था, और न ऐसा करना उसे उचित ही जँचता था।

इसके सिवा एक अन्य प्राणी का सुख-दुःख भी इसके साथ इस प्रकार जुड़ा था कि किसी प्रकार का हेर-फेर करने का साहस रामकली को न हुआ। दुलारी ने अपने मन में केशव पर कितना अधिकार कर लिया था, यह बात रामकली से छिपी न थी। एक लता को जिसे एक डाली से हटाकर दूसरी डाली में फैलाने की व्यवस्था हुई है, उसे फिर पहले-वाली डाली में फैलाने के लिए एक दूसरी लतिका को जो इस बीच डाली पर फैल चुकी है, काटना रामकली को अनुचित जान पड़ा। इसके सिवा रामकली ने हिन्दू नारियों की प्रवृत्ति पर ध्यान देकर सोचा कि चार दिन में मालती अपना घर देखेगी, विवाह की मर्यादा रखेगी और अपने पति को पहचान लेगी।

इन सब बातों पर विचार करके रामकली ने कहा, “नहीं देवर, अब और समय नहीं। इस वक्त उलट-पलट करने से बड़ी गड़बड़ी मच जायगी।”

“लेकिन यदि मालती सुखी न हो?”

“ऐसा न होगा।”

“तुम्हारा अन्दाजा है?”

“नहीं मेरा विश्वास है।”

अन्यमनस्क होकर केशव ने कहा, “तो ठीक है। लेकिन अब भी—”

बात अभी अधूरी ही थी कि “केशव कहाँ हैं, अरे भाभी भी तो नहीं हैं।” कहते कृष्णचन्द्र ने प्रवेश किया। केशव की पीठ पर एक हलका-सा घूँसा लगाया, और भाभी के चरणस्पर्श किये। रामकली ने मन ही मन आशीर्वाद देते हुए कहा, “अच्छे आगये कृष्णा, मैं तो सोचती थी तुम मालती के विवाह में आ ही न सकोगे। और अच्छे तो हो?”

हँसते हुए कृष्णचन्द्र ने कहा, “मालती के विवाह का भात तो छूट ही जाता भाभी। केशव का तार गया, और जल्दी-जल्दी चल पड़ा।”

केशव ने कहा, “भाभी, कृष्णा को खाने को दो। जाना पड़ता है आज सारे दिन नहीं खाया।”

रामकली ने कहा, “मैं अभी चली। कृष्णा तुम बाथरूम में जाकर हाथ-मुँह धो डालो।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “भाभी इस समय खाने की इच्छा नहीं। मैं यहाँ आने से पहले धर गया हूँ, और वहाँ से नहा-खाकर आया हूँ। अब शाम को एक साथ खायेंगे। भाभी, रसाज, बड़े तो तैयार कर चुकी हो, खूब पेट भर खाऊँगा। और मिठाईयाँ किसकी दूकान से बनवाई हूँ?”

रामकली ने हँसते हुए कहा, “अब खाकर बतलाना कि किसकी दूकान की है।”

“सो इस परीक्षा में मैं फेल होने का नहीं भाभी। लखनऊ में कौन ऐसी दूकान है जिसके यहाँ की मिठाई मेने न खाई हो।”

रामकली और केशव कृष्णचन्द्र की बात पर हँस पड़े। कुछ देर पहले मालती के सम्बन्ध की बात से जो चिन्ता के बादल आगये थे, वे कृष्णचन्द्र के विनोद का पवन लगने से कुछ फट गये। बात ही बात में रामचरण की मृत्यु का प्रसंग आगया।

रामकली ने कहा, “दुलारी से भेट करोगे कृष्णा?”

दुलारी को देखने की कृष्णचन्द्र को जो प्रबल चाह थी, उसमें लज्जा ही बाधक थी। बम्बई से लौटते समय रास्ते भर वह दुलारी की ही बात सोचता आया था। उसका यह भी ख्याल था कि केशव ने दुलारी के साथ मेरे विवाह की बात अब तक सबसे कह दी होगी। इसी से लज्जा और भी प्रबल थी। लेकिन रामकली ने जो शोक-समाचार सुनाया, उसे सुनकर कृष्णचन्द्र को मौक़ा मिल गया। उसने कहा, “हाँ मिलूँगा। कहाँ हूँ?”

रामकली ने कहा, “चलो, तुमको दुलारी के कमरे में छोड़ आऊँ।”

केशव ने कहा, “वहाँ से लौटकर मेरे कमरे में आओ। मैं वहीं रहूँगा।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “तुम भी चलो न?”

“नहीं मैं अपने कमरे में हूँ।” कहकर केशव चल पड़ा।

केशव क्यों नहीं जा रहा, यह रामकली और कृष्णचन्द्र दोनों ने समझा, लेकिन दोनों ने विभिन्न भाव से ।

(२३)

दुलारी अपने कमरे में ही थी । “कृष्णचन्द्र आये हैं, दुलारी ।” कहकर रामकली ने दुलारी के कमरे में प्रवेश किया ।

दुलारी ने आकर कृष्णचन्द्र से नमस्कार किया, और मलिन मुख कृष्णचन्द्र की ओर उठाकर पूछा, “अच्छे हैं ? बहनोई जी तो आपके अच्छे हो गये ?”

दुलारी शोक की पीड़ा से अब भी पूरे तौर पर मुक्त न हुई थी, यह उसका पीला मुख ही देखकर कृष्णचन्द्र ने मालूम कर लिया । उसके अन्तर का चिरकाल से प्यासा प्रेम करुणा में भरकर समवेदना के रूप में बदल गया ।

दुलारी के प्रश्न का मंक्षेप में उत्तर देकर कृष्णचन्द्र चुप हो गया । उसके अन्तर में समवेदना का जो भाव उठा था, उसे वह मुंह पर थोड़ा भी न ला सका । लेकिन उसकी मक सहानुभूति को दुलारी ने समझा, और काले बादलों पर शीतल पवन का एक झोंका लगने से जिस तरह टप-टप कर पानी बरसने लगता है, उसी तरह उसकी आँखों से जल भरने लगा । लेकिन शभ दिन में आँसू बहाना अपशकुन है, यह सोचकर उसने जल्दी से आँचल से आँखें पोछ डालीं ।

रामकली ने आर्द्र स्वर में कहा, “इस लड़की पर कृष्णा इतनी-सी ही अवस्था में इतनी आपदाये आई हैं । अब तो भगवान् की ऐसी कृपा हो जिससे इसे और दुःख न देखना पड़े ।”

रामकली की बात सुनकर दुलारी के दुःखित हृदय को किसी अंश में प्रसन्न करने के लिए कृष्णचन्द्र व्यग्र हो गया । कातर स्वर में उसने कहा, “यही बात समझ में नहीं आती कि यदि भगवान् है, तो इस प्रकार का अन्याय करने में उनका क्या उद्देश्य रहता है ? जो पवित्र है उसे दुःखों की भट्ठी में जलाकर और जो पापी है उसे सुख की गोद में सुलाकर वे क्या पाते हैं ?”

रामकली ने कहा, “इन सब बड़ी बड़ी बातों की मीमांसा हम स्त्रियाँ क्या करेंगी कृष्णा, लेकिन ऐसा जान पड़ता है कि हम घर को साफ़ करने के लिए पहले भाड़ू लगाती हैं, और फिर भी कुछ कूड़ा रह जाता है, जो आँखों से दिखलाई नहीं पड़ता, उसे पानी से धोकर साफ़ करती हैं, इसी तरह जो मैल साधारण रूप में आँख से नहीं दीखता, आँख का पानी उसे काट देता है ।”

रामकली की बात सुनकर कृष्णचन्द्र ने थोड़ा हँस दिया । इसके बाद कहा, “भाभी तुम्हारा जैसा मन, वैसी ही बात । यह तो हुई विश्वास की बात, तर्क की बात नहीं । यह कुछ कम नहीं है, इससे मन को बहुत आनन्द मिलता है, लेकिन कुछ प्रमाणित नहीं होता । ईश्वर तो है सर्वशक्तिमान्, वह तो इच्छा से ही सब कुछ कर सकता है, फिर इस तरह भाड़ू लगाकर, पानी देकर, जन्म-जन्मान्तर तक पीड़ा पहुँचाकर साफ़ क्यों करता है ? उससे लाभ किसका होता है उसका या मानव का ?”

कृष्णचन्द्र की इस बात के विरुद्ध रामकली कुछ न कह सकी । थोड़ा चुप रहकर कहा, “तुम ठीक कहते हो कृष्णा, यह सब अनुमान है—ठीक ठीक समझने का कोई रास्ता नहीं !”

तर्क की कुल्हाड़ी से रामकली के विश्वास की जड़ पर उसने वार किया था, इससे कृष्णचन्द्र को मन ही मन दुःख हुआ । उसने कहा, “लेकिन तर्क जब अधिक कुछ दे नहीं पाता भाभी, और विश्वास ही की बात चिरदिन से बड़े बड़े ज्ञानी पुरुष बतलाते आये हैं, तब इन अनुमान की बातों को ही मान लेना होगा । सोने की भाँति दुःख की आग में मनुष्य के मन को गलाकर भगवान् उसके मैल को साफ़ करते हैं । यह सिर्फ़ उपमा नहीं, हमें इसे सत्य की भाँति मान लेना होगा ।”

आज काम इतना अधिक था कि रामकली के लिए अधिक देर कही सकना सम्भव न था । कल्लू ने आकर कहा, “मा, बड़े भैया तुमको बुलाते हैं ।”

“तुम लोग बातचीत करो, मैं अभी आई” कहकर रामकली चली गई ।

रामकली के चले जाने पर कृष्णचन्द्र को संकोच मालूम होने लगा । उसे बातचीत के लिए कोई उपयुक्त बात ही न मिली । बम्बई से लखनऊ तक जो विचार उसके मन में उठ रहे थे, वही जोर मारने लगे ।

मौन को भंग करते हुए दुलारी ने कहा, “बप्पा की मृत्यु के बाद आपकी जो चिट्ठी आई थी, उसे पढ़ने में दुःख में भी मुझे बहुत शान्ति मिलती । मुझे ऐसा लगता है आपकी वह चिट्ठी मैंने बीस बार पढ़ी है ।”

कृष्णचन्द्र ने आग्रह के साथ कहा, “और उस चिट्ठी का आपने जो उत्तर दिया है, उसे शायद मैंने पचास बार पढ़ा है ।” इस तरह बात निकल जाने से कृष्णचन्द्र का मुँह लाल हो गया । उसकी इच्छा न थी कि ऐसी कोई बात कहे, लेकिन हृदय का वेग कुछ इतना प्रबल था कि हठात् वह सच बात को कह गया । इसी लिए दूसरी तरफ से जवाब न पूछने पर भी अपराधी की भाँति उसने खुद ही कहा, “आपकी उस चिट्ठी में पितृ-भक्ति और स्थिर-बुद्धि का ऐसा सुन्दर परिचय मिलता कि जितनी बार पढ़ता, उतना ही मुग्ध हो जाता ।”

जवाब कुछ जँचा नहीं, और उसमें भी दो-एक बातें नई गड़बड़ की आगई । एक अविवाहित युवक अविवाहिता लड़की का पत्र एक बार नहीं, पचास बार पढ़े, और जितनी बार पढ़े, उतना ही मुरध हो, तो यह सिर्फ पितृ-भक्ति और स्थिर-बुद्धि के कारण, यह बात कृष्णा को खुद ही ठीक न जान पड़ी ।

बात को बहुत सरल भाव में लेकर भी उसमें अपनी प्रशंसा पाकर दुलारी को संकोच हुआ । उसने बातचीत का प्रसंग बदलने के लिए एक नई बात छेड़ी, लेकिन यदि कृष्णचन्द्र की मानसिक स्थिति उसे शांत होती, तो शायद वह ऐसा न करती ।

दुलारी ने कहा, “मुझे अब और ‘आप’ कहकर सम्बोधन करना आपके लिए उचित नहीं ।”

कृष्णचन्द्र ने पूछा, “क्यों ?”

थोड़ी हिचकिचाहट के बाद दुलारी ने कहा, “क्या आप सोचते हैं कि अब भी आपका मुझे तुम कहने का अधिकार नहीं है ?”

पुलकित होकर कृष्णचन्द्र ने मन ही मन सोचा, बात तो बिल्कुल ठीक है। भावी पति आप कहें, यह किसी भी सहृदय स्त्री को अच्छा न लगेगा। ऐसा करना अपनेपन से बहुत दूर कर देता है, इससे हृदय का व्यथित होना स्वाभाविक है।

हँसकर कहा, “आप शब्द क्या इतना कर्कश हैं ?”

दुलारी ने कहा, “सम्बन्ध के हिसाब से कर्कश लगता है। पहले आप जब मुझे आप कहके पुकारते थे, तो अभ्यास के कारण खराब नहीं लगता था, लेकिन आज बम्बई से इतने दिनों के बाद आने पर आप सुनकर कानों को कुछ वैसा लगता है।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “मुझे भी तो ठीक उसी प्रकार लग सकता है ?”

दुलारी ने थोड़ा हँसकर कहा, “हो सकता है; लेकिन मैं आपको आप कहूँ, तो अनुचित न होगा, लेकिन आप मुझे आप कहें, तो यह अनुचित है।”

कृष्णचन्द्र ने विचार करके देखा, यह बात भी सही है। भावी पत्नी के लिए अपने पति को विवाह के पहले तुम कहने में कुछ कठिनाई मालूम हो सकती है। दुलारी के मुँह से तुम सम्बोधन सुनने के आनन्द को किसी निकट भविष्य की मदभरी रात के लिए संचित रखकर कृष्णचन्द्र ने थोड़े आवेग के स्वर में कहा, “तुम जब मेरा यह अधिकार स्वीकार करती हो, तो आज से तुम्हें तुम कहकर सम्बोधन करूँगा, और दुलारी कहके पुकारूँगा। क्यों ?”

दुलारी ने थोड़ी लज्जित होकर कहा, “जरूर। यह तो बहुत पहले होना चाहिए था, लेकिन जब आपने अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया, तो मुझे लाचार होकर कर्तव्य-पालन के लिए बाध्य करना पड़ा।”

कृष्णचन्द्र ने मुसकराते हुए स्नेह के स्वर में कहा, “भाग्य से मैंने कर्तव्य का पालन स्वतः नहीं किया—नहीं तुम्हारे द्वारा बाध्य किये जाने का सुख तो न पाता।”

इस बार दुलारी का मुँह केवल लाल न हुआ, बल्कि उसके मन में सन्देह की एक धुंधली-सी रेखा मानो खिंच गई। लेकिन उसने सोचा यह मेरा सन्देह है। और इसलिए उसकी बिल्कुल उपेक्षा करके सहज भाव से मुसकराते हुए उसने कहा, “कर्त्तव्य करने में आपको सुख नहीं मिलता ? कोई प्रेरणा करे, तो सुख मिलता है ?”

बालू की भीत और प्रेमी की प्रतिज्ञा समान है। दोनों के टूटते देश नहीं लगती। एक घड़ी पहले कृष्णचन्द्र संयम का जो दृढ़ प्रण कर रहा था, वह क्षण भर में ही टूट गया। और ऐसा जान पड़ा मानो कभी किया ही नहीं। दुलारी की बात से उसे कुछ ऐसी उत्तेजना मिली कि अकस्मात् उसने ऐसी बात कही कि दुलारी को तो मानो काठ मार गया—लज्जा, दुःख, विस्मय या और किसी कारण से, यह कह सकना कठिन है !

कृष्णचन्द्र ने कहा, “तुम्हारी प्रेरणा से मिलता है। तुम इसी तरह मेरे सारे कामों की प्रेरणा-शक्ति बनो, मेरे तुच्छ जीवन को सफल करो, मेरे जीवन का ध्रुवतारा बनो दुलारी ! यह मेरी आज की कल्पना नहीं है दुलारी—यह अनेक दुःखों-मुखों, अनेक दिनों की आशा है। एकबार बताओ तो कि यह सिर्फ मेरा स्वप्न नहीं है।”

कृष्णचन्द्र का उत्तेजित हृदय और कितनी दूर ले जाता कहा नहीं जा सकता, यदि उसी घड़ी रामकली वहाँ न आ जाती।

रामकली ने आकर फिर वही पहलेवाली बात उठाई। “तुमने कृष्णा विश्वास की बात कही थी। मेरा ख्याल है कि सत्य के साथ विश्वास का इतना निकट सम्बन्ध है कि हम जो विश्वास करते हैं, वह बहुत बार सच होता है। भगवान् हैं, यह चिरकाल से प्रायः सभी मनुष्य विश्वास करते आ रहे हैं, तो इससे समझना चाहिए कि भगवान् हैं।” इसी बीच रामकली ने सोचा शायद कृष्णचन्द्र और दुलारी दूसरी बात करते रहे हों, और उनकी बात का सिलसिला टूट गया हो, इसलिए उसने जल्दी से पूछा, “मेरे जाने पर क्या इसी विषय की चर्चा हो रही थी ?”

रामकली के जाने के बाद क्या क्या बातें हुई थीं, वह सब रामकली को ज्ञात न था, लेकिन रामकली के प्रश्न पर लज्जित होकर कृष्णचन्द्र ने कहा, “नहीं हम इस पर बात न कर रहे थे । लेकिन तुम जो कहती हो भाभी, वही ठीक है । विश्वास है प्रकाश । तर्क जहाँ सिर पर हाथ धरके बैठ जाता है, वहाँ विश्वास सारा मार्ग साफ़ कर देता है ।”

तर्क और विश्वास की बात अचानक छोड़कर रामकली ने कहा, “कृष्णा, जेठ की भी लग्न खाली न जायगी ।” कुछ पहले राजरानी से रामकली ने सुना था कि जेठ में कृष्णचन्द्र का विवाह होगा ।

कृष्णचन्द्र ने पूछा, “क्यों भाभी !”

“जेठ में तुम्हारा विवाह ।”

जेठ का महीना सुनकर कृष्णचन्द्र का कुछ दुःख हुआ । इतनी देर ! लेकिन दुलारी की इस समय जैसी मानसिक दशा थी, उसका विचार करके कृष्णचन्द्र ने इसे उचित समझा । कहा, “इतने दिन क्या मैं धैर्य रख सकूंगा । वैशाख महीने ने क्या अपराध किया है ?”

कृष्णचन्द्र ने तिरछी निगाह से दुलारी का लज्जा से लाल मुंह देखने की चेष्टा की ।

एक आघात के बाद और एक आघात पड़नेवाला है, यह सोचकर दुलारी चेतनाशून्य-सी हो रही थी । एक आघात कृष्णचन्द्र ने उस पर किया था, जिससे उसके होश ही उड़ गये थे, और अब रामकली उससे भी प्रचण्ड आघात करेगी, उससे कृष्णचन्द्र की क्या दशा होगी, उसका अनुमान कर दुलारी सिहर उठी ।

कृष्णचन्द्र के परिहास के उत्तर में रामकली ने हँसते हुए कहा, “इतने अधीर हुए जाते हो कृष्णा ? लेकिन और एक प्राणी यदि तुमसे भी अधिक अधीर हो ?” कहकर दुलारी की ओर देखकर ओठ दबाकर हँस पड़ी ।

वह एक प्राणी दुलारी के सिवा और कोई नहीं, यह समझकर प्रसन्न मन से कृष्णचन्द्र ने कहा, “तो उस एक प्राणी से कहो भाभी कि वैसी दशा में फागुन में भी मुझे आपत्ति नहीं ।”

रामकली ने हँसकर कहा, “यह भगड़ा क्या मैं मिटा सकूंगी कृष्णा । तुम दोनों मिलकर इसका निबटारा कर डालो । अच्छा बैठो, मैं केशव को बुला लाऊँ ।” कहकर रामकली कमरे से बाहर चली गई ।

आवेग से काँपते स्वर में कृष्णचन्द्र ने कहा, “केशव इसका क्या निबटारा करेगा दुलारी ? यह तो हम तुम करेंगे । लेकिन इस सम्बन्ध में तुम जो कहोगी, वही होगा । मेरी बात अगर पूछो तो मैं तो कहूँगा कल की ही लग्न में ! अपने प्रिय से कौन दूर रहना चाहता है दुलारी ?”

इस सम्बन्ध में दुलारी कुछ कह सकती थी, लेकिन उसमें कहने की शक्ति न थी । इस बार उसका सिर चक्कर करने लगा । आँखों के सामने अँधेरा छा गया ।

इस बार भी रामकली ने उसकी रक्षा की । कुछ पहले केशव से जो बातचीत हुई थी, उसकी ओर केशव की मानसिक अवस्था की याद करके रामकली ने इस परिहास में केशव को घसीटना ठीक न समझा । यह सोचते ही रामकली फिर लौट आई ।

“क्या हुआ भाभी ?”

रामकली ने कहा, “केशव अपने विवाह का मुहूर्त खुद ठीक करेंगे । किसी तरह विवाह की व्यवस्था हुई है, यही बहुत है ।” महान् आश्चर्य के साथ कृष्णचन्द्र ने कहा, “केशव का विवाह न क्या ?”

रामकली ने कुछ आश्चर्य के साथ कहा, “क्यों तुमको मालूम नहीं वैशाख के महीने में केशव का विवाह दुलारी के साथ ?”

“न” ।

“जानोगे भी कैसे, दुःख के कारण बात तो कहीं जाहिर की नहीं गई ।”

इसके बाद रामकली ने विस्तार के साथ बतलाया कि किस अवस्था में कैसे केशव दुलारी के साथ विवाह करने को राजी हुआ है । कहानी समाप्त करके रामकली ने कहा, “क्या खूब सुख का समाचार नहीं है कृष्णा ?”

जिस हँसी की अपेक्षा आँसू निकलने चाहिए थे, वही हँसी हँसते हुए कृष्णा ने कहा, “खूब !”

व्याग का मूल्य

इसके बाद कृष्णचन्द्र कुर्सी से उठ पड़ा । कहा, “भाभी आज अब घर चलूँगा । कल फिर आऊँगा ।”

रामकली ने व्यग्र होकर कहा, “यह क्या ! तुम खाओगे नहीं ?”

“नहीं भाभी, कई दिन से नींद नहीं लगी । आज अच्छी तरह सोऊँगा । तुम तो जानती हो साधारण दशा में मैं खाना नहीं छोड़ता । कल वारात में बहुत काम करना पड़ेगा ।”

“तो थोड़ी मिठाई खा लो ।”

“नहीं भाभी आज नहीं । अच्छा भाभी अनजाने अपराध होने से क्या क्षमा नहीं मिलती ?”

थोड़ा सोचकर रामकली ने कहा, “क्यों नहीं । लेकिन यह पूछ क्यों रहे हो ?”

“यह फिर बताऊँगा । बड़ी नींद लग रही है, चला ।”

“केशव से न मिलोगे ?”

“मिल लूँगा ।”

कृष्णचन्द्र पैर लटपटाते हुए कमरे से बाहर हुआ । केशव के कमरे के पास जाकर दरवाजे पर हाथ रखकर कुछ सोचा, इसके बाद दरवाजा न खोलकर चुपके से बाहर चला गया ।

(२४)

संसार में जितनी चीजें मनुष्य के अज्ञेय हैं, उनमें से एक सदैव उसके साथ रहती है, और वह है उसका मन । इसी मन से वह अपनी सारी बातें जान लेता है, लेकिन मन क्या है, यही सिर्फ वह नहीं जानता, दूसरे का नहीं अपना ही नहीं जानता ।

केशव आज इसी बात को प्रमाणित कर रहा था । जो चीज उसके मन में जरा भी नहीं है, ऐसा उसका आज सन्ध्या से पहले तक विश्वास था, वह चीज अर्थात् मालती के प्रति उसका प्रेम सदैव था, और सिर्फ इतना ही नहीं अपरिमित मात्रा में था । और उसी प्रकार विचित्र बात यह थी कि उस प्रेम का परिचय मिला उसे उस वक्त जब चोट खाई सर्पिणी की भाँति मालती ने उसे काटकर विष से

भर दिया था। साधारण रूप में जो बिल्कुल सोया हुआ था, आघात ने उसे जगा दिया। सुख के दिनों, आमोद-प्रमोद में, आराधना-साधना में जिसका पता नहीं मिलता था, सर्वनाश के दिन दुःख और अपमान उसका हाथ पकड़ उसे पहुँचा गया। केशव ने विस्मयपूर्वक देखा कि प्रेम तुरत का पैदा बच्चा नहीं, बहुत दिनों से उसकी छाती के भीतर घर बनाये रोज़ रोज़ उसकी नाजानकारी में बढ़ रहा था।

घड़ी में एक बजा था। कमरे में सब सो रहे थे, कहीं शब्द तक न सुन पड़ता था, लेकिन केशव की आँखों में नींद न थी। वह अपने बिछौने पर लेटा आँखें मूंदे शाम की बातों को सोच रहा था। आज उसने अद्भुत बात देखी थी। माधवीलता ने साँप बनकर काटा था; चन्दन ने अंगार बनकर जलाया था; फूल ने आज पत्थर बनकर चोट पहुँचाई थी। वह मुग्ध विस्मय मन से याद कर रहा था मालती की उस अधीर भावभंगी को, वह अभिमान से फड़का ओंठ, वह वेदना से लाल मुँह, और वह क्रोध से जलती आँखें। उसने चौबीस साल की उम्र में इस प्रकार का एक भी चित्र नहीं देखा जिसमें एक साथ इतने भावों का चित्रण रहा हो ! आज रजनीगन्धा गुलाब के फूल की भाँति लाल हो गई थी !

लेकिन यह तो हुई बाहर की बात ! उसके भीतर की हालत तो और भी आश्चर्य में डालनेवाली है ! जहाँ किसी दिन जल की एक क्षीण धारा भी दिखलाई नहीं पड़ती थी, वहाँ यह ज्वार आज कैसे आगया ? आग ने आज जलाने के बजाय शीतलता दी, और आघात ने चोट न पहुँचाकर आराम दिया, यह कैसे ? केशव ने मन ही मन आज की घटना और अपनी अवस्था पर विचार करने के बाद बिना सन्देह यह सोचा कि जोर का आघात देकर उसके हृदय के आवरण को फाड़कर मालती ने जो बीज दिखलाया है, उसके उपजाने और पल्लवित करने का रास्ता और उपाय न होने की हालत में उसके अंकुर को ही नष्ट करना होगा—अन्यथा बढ़ने पर जरूर विषमय फल देगा। लेकिन जिस प्रकार इसे रोकना होगा, वह संयम कहाँ गया, केशव यही सोच रहा था। वह संयम तो उसकी चेष्टा या साधना की चीज़ नहीं,

चिर-दिन से वह तो कभी पृथक् न होनेवाले साथी की तरह उसके हृदय में ही रहता था। किसी दिन उसे बुलाने की जरूरत नहीं पड़ी। छाल की तरह जब जरूरत हुई है, उसने उसकी रक्षा की है। लेकिन आज उसकी खोज हो रही है, और उसे निकालकर बाहर लाने की जरूरत हो रही है।

जब केशव इस प्रकार विचारमग्न था, उसी समय दरवाजे में खट का एक शब्द हुआ। किसी ने पुकारा, “केशव भैया !”

केशव उछलकर विस्तरे से उठ पड़ा, और दरवाजा खोलकर देखा मालती खड़ी है।

“तुम इतनी रात आई हो, मालती ?”

“एक बात कहनी है।”

“अच्छा भीतर आओ” कहकर मालती को भीतर करके दरवाजा बन्द कर दिया। हाथ के इशारे से एक कुर्सी की ओर संकेत करके कहा, “बैठो।”

“बैठने के पहले तुम्हें—” इसके आगे मालती का गला रूँध गया। वह केशव के पैरों पर गिर पड़ी। उसकी आँखों से भर-भरकर आँसू बहने लगे।

केशव ने जल्दी-जल्दी मालती का हाथ पकड़कर उठाया, और उसे कुर्सी पर बैठा दिया। कहा, “छिः मालती, इतनी अधीर होती हो ! थोड़ी देर चुप बैठो।” केशव ऐसा न भी कहता, तो भी मालती में इस समय बोलने की सामर्थ्य न थी।

मालती कुर्सी के हथ्थे पर सिर रखकर सिसक-सिसककर रोने लगी। आँसुओं का वेग थोड़ा कम होने पर मालती ने कहा, “मुझे माफ़ करो केशव भैया ! मैंने उस समय बहुत बेजा किया था।”

थोड़ा सोचकर कि क्या कहूँ, क्या कहना चाहिए, केशव ने कहा, “माफ़ किसको कहूँ मालती ? तुम पर मैं तनिक भी नाराज नहीं। मैं तो सिर्फ़ यह सोचता हूँ कि बेजा तुमने किया था, या मैंने।”

केशव की बात का असली मतलब न समझकर मालती ने कहा, “जरूर बेजा मैंने किया था। ऐसा बेजा तो जीवन में कभी मैंने नहीं

किया, और शायद किसी ने न किया हो। तुम्हारी असीम दया का अच्छा बदला दिया।”

मालती को रोककर केशव ने कहा, “बेजा तब नहीं, अब कर रही हो मालती ! उस समय तुमने मुझसे जो बातें कही थीं, वैसे बातें बहुत ही अपना आदमी अपने से कह सकता है। लेकिन इस समय जो तुम सोच-सोचकर कह रही हो, यह मुझे थोड़ा भी अच्छा नहीं लगता। तुम सच में मुझे कष्ट देती हो।”

इतना बड़ा अधिकार पाकर मालती एक क्षण के लिए आश्चर्य-चकित-सी देखती रह गई, फिर कहा, “यह मैं जानती हूँ भैया, तुम सब कुछ माफ़ कर सकते हो, सिर्फ़ माफ़ी माँगने को माफ़ नहीं कर सकते। खैर, लेकिन मैं तो यही सोचकर मरी जा रही हूँ कि मैंने ऐसी बात कही कैसे ! तुम्हारी चिर-दिन की शिक्षा के बाद भी यह असं-यम क्यों हुआ ? अमीनाबाद पार्क में भी तो ऐसा असंयम नहीं हुआ था।”

अमीनाबाद की बात मालती के मुँह से निकल तो गई, लेकिन उसी क्षण उसका मुँह लाल हो गया। उत्तर में केशव ने भी अपने मन की अनेक बातें कह डालीं। उसने कहा, “मन की दशा सभी समय ठीक समझ में नहीं आती मालती। इसी से हो सकता है कि अमीनाबाद में तुममें जो संयम था, वह आज न रह गया। दो दिन पहले मुझे स्वयं अपने मन की बात नहीं मालूम हो सकी—इसी से आज छाती पर मानो दुःख का पत्थर दवाया हो। यह दुःख चोट पाकर नहीं चोट देकर हुआ है।”

केशव ने जो कुछ कहा, मालती को उसे समझने में देर न लगी। लेकिन समझकर भी उसकी इच्छा न हुई कि वह इस सम्बन्ध में और बात बढ़ाये। इतनी रात गये केशव के कमरे में बिना बुलाये आकर, उसके मन में करुणा जगाकर अपने जीवन के प्रिय सौभाग्य की भीख लेगी, उन तत्त्वों की मालती न बनी थी। सन्धि यदि करनी ही होगी, तो वह केशव के कमरे में न होगी, बीच में भी कहीं न होगी। होगी तो उसी के कमरे में। यह सोचकर उसने कहा, “मैं जो कुछ कहने आई हूँ, उसे सुनो तो केशव भैया ?”

“क्या बताओ” व्यग्र होकर केशव ने पूछा ।

थोड़ी देर चुप रहकर मालती ने कहा, “तुमने माफी माँगने आई हूँ, और तुम्हें बताने आई हूँ कि तुम्हारी शिक्षा एकबार निष्फल हुई है, लेकिन यह मत समझो कि बार-बार निष्फल होगी । और कभी तुम मुझमें असयम न पाओगे ।”

“कभी नहीं ?”

“कभी नहीं ।”

“ठीक तो ?”

“ठीक !”

कितना ही जोर देकर केशव ने आश्वासन क्यों न लिया हो, लेकिन इससे केशव का मुख उज्ज्वल न होकर और फीका ही पड़ गया । असंयम उसकी आशा का द्वार खोलने का उपक्रम कर रहा था, इसलिए संयम की बात से उसके हृदय में कुछ उत्साह नहीं जगा । तब भी केशव ने कहा, “बहुत ठीक भाई, बहुत ठीक ! मैं हृदय से आशीर्वाद देता हूँ कि यह संयम तुम्हें चिर-दिन सुपथ पर ले जाय । तुम्हारे पैरों में कभी कंकड़-काँटे न लगे ।”

“तब चली” कहकर मालती उठ खड़ी हुई । उसकी आँखें सजल हो गई थीं । बाहर निकलकर आँचल से उन्हें पोंछा । अपने कमरे में आकर विस्तरे पर लेटकर तकिये में मुँह छिपाकर तकिये को गीला करने लगी ।

केशव का हृदय विव्हल हो उठा । एकबार ऐसा लगा कि वह पुकारकर कहे, “सुने जाओ मालती ।” लेकिन मुँह से एक शब्द न निकला । वह कुछ क्षण निस्तब्ध बैठा रहा, फिर उठकर बाहर आया, और धीरे धीरे मालती के कमरे के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ । पहले सोचा, दरवाजे पर दस्तक दे, लेकिन फिर क्या सोचकर चला आया । बाक़ी रात करवटे बदलकर काटी ।

(२५)

केशव अपने कमरे में बैठा अनन्त से कुछ परामर्श कर रहा था, इतने में कल्लू ने आकर कहा, “छोटे भैया, तुमको मा जी बुलाती है ।”

केशव भीतर आया, और रामकली को मालती के कमरे में पाया। कमरे में जाकर केशव ने पूछा, “क्या है भाभी?”

रामकली मालती की सन्दूक खोलकर कपड़ों का एक ढेर अपने सामने लगाये बैठी थी। उसका मुँह देखकर केशव ने उद्वेगपूर्वक पूछा, “क्या बात है भाभी?”

एक कपड़ा उठाकर रामकली ने कहा, “देखो।”

केशव ने देखा कपड़े के नीचे उसकी पुरानी मलमली चट्टियाँ!

विस्मित होकर उसने कहा, “यह तो मेरी पुरानी चट्टियाँ हैं। यहाँ कौन लाया?”

सूखे कण्ठ से उद्विग्न होकर रामकली ने कहा, “मालती की सन्दूक ठीक कर रही थी, तो देखा उसमें नीचे ये चट्टियाँ रक्खी हैं।”

यह सुनकर केशव स्तब्ध खड़ा रह गया। मुँह से एक शब्द भी न निकला। एक बहुत ही कठोर आघात की अनुभूति से अपने को किसी प्रकार मुक्त करने की चेष्टा करने लगा। अनिर्बाध जीवन-प्रवाह को उन्होंने बालू की भीत बनाकर रोकने की चेष्टा की है, यह जानकर केशव का हृदय आतंक से भर गया।

“देवर!”

केशव चुप रहा, और अपनी कातर-दृष्टि रामकली के मुख पर डाली।

“देवर, तुम्हीं को सुलभाना होगा। तुमको छोड़कर और कोई इस मामले को सँभाल नहीं सकता। वहाँ सन्दूक से पुरुष के पहने जूते निकलने से क्या हालत होगी, समझ भी नहीं सकती।”

रामकली को निर्भय करते हुए केशव ने कहा, “तुम डरो न भाभी, मैं अभी ठीक किये देता हूँ। मालती इस समय है कहाँ?”

“राजरानी के कमरे में। अभी यहाँ आयेगी।”

“अच्छा, इस कमरे में उसके आने पर मुझे खबर देना। मैं भैया से कुछ बातें कर रहा हूँ। तुम घबराओ नहीं भाभी, मैं सब ठीक कर दूँगा।”

इसके बाद केशव फिर अपने कमरे में आया, और अनन्त से कहा, “मिठाइयाँ बनाने का पूरा भार तो गुप्ता ब्रादर्स को दे दीजिए। वे अन्न की और फलाहारी सभी मिठाइयाँ तैयार करेंगे। पूरे भण्डार के मालिक

रामू मामा को रखिए। पुराने आदमी हैं, सबको जानते हैं। खातिर-दारी के लिए कृष्णचन्द्र है ही।”

अभी शायद केशव कुछ और कहता कि अनन्त बीच ही में बोल उठे, “यह सब तो हो ही जायगा, लेकिन यह तो बताओ मोनार ने क्या कहा। गहने बन गये या नहीं। ऐन मौके पर कहीं गड़बड़ न करे।”

“गड़बड़ कुछ न करेगा, और मैं आज ही जाकर देखे आता हूँ। जड़ाऊ काम में देर लगती ही है, फिर दिया भी देर से। कलेऊ के दिन तक दे देगा।”

“कलेऊ के दिन तक नहीं,” अनन्त ने कहा, “उससे कहो कि कच्ची के दिन ही दे जाय। औरतों का मामला, कोई चीज नापसन्द हुई, तो सुघरवाने के लिए भी तो समय चाहिए।”

“अच्छा कहूँगा, कुछ चीजें तो दे ही जायगा।”

इतने में कल्लू फिर आया, और कहा, “छोटे भैया चलो, मा जी बुलाती हैं।”

“यह अजब तमाशा है,” अनन्त ने भौं सिकोड़ते हुए कहा, “काम ही नहीं होने पाता। जो कुछ हो एकबार, निबटाकर आओ। बहुत काम है।”

“अभी आया,” कहकर केशव अन्दर चला गया।

भीतर जाकर केशव मालती के कमरे में दाखिल हुआ। मालती उस समय एक आरामकुर्सी पर अन्यमनस्क बैठी थी। केशव के बुलाने पर उठ खड़ी हुई।

“मालती?”

केशव की ओर अनुत्सुक नेत्रों से देखकर मालती ने कहा, “क्या?”

“तुम्हारे पास एक बात जानने के लिए आया हूँ। ठीक बताओगी तो?”

“क्या, बताओ?”

“‘बच्चों की शिक्षा’ पढ़ी है ब?”

“पढी है।”

“दूसरे की चीज को बिना बताये लेने को क्या कहते हैं?”

मालती ने कुछ उत्तर न दिया, और दूसरो आर देखने लगी। केशव की इस पुरानी स्नेह-व्यञ्जक कथोपकथन शैली से उसकी आँखों में जल भर आया!

“बताओ, दूसरे की चीज को बिना बताये लेने को क्या कहते हैं?”

थोड़ा अड़ते हुए मालती ने कहा, “चोरी।”

केशव के ओठों पर क्षीण हँसी प्रस्फुटित हो गई, और उमी के अनुपात से आँखों के कोनों में जल आगया।

“दूसरे की चट्टियाँ बिना बताये लेना क्या होगा?”

इस बार मालती ने कुछ उत्तर न दिया—स्थिर खड़ी रही, सिर्फ ऊपर का ओंठ एकबार फड़का, किस लिए कहा नहीं जा सकता।

केशव थोड़ा हटकर मालती की आँखों के सामने आगया, और कहा, “बताओ ना मालती, दूसरे की चट्टियाँ बिना बताये लेना क्या होगा?”

केशव के मुख पर स्थिर प्रशान्त नेत्र गड़ाकर शान्त तथा दृढ़ स्वर में मालती ने पूछा, “चट्टियाँ वापस लेना चाहते हो?”

जरूर चाहता हूँ, वह मुझे बहुत पसन्द हैं—विशेष यत्न के साथ रखना होगा! लेकिन अब पैरों में न छुआई जायगी।”

“क्यों?”

थोड़ा सोचकर केशव ने कहा, “अब वे पैर में पहनने लायक कम बाम की नही लगती।”

इस परिहास का कुछ उत्तर न देकर मालती ने स्थिर भाव से कहा, “अच्छा, चट्टियाँ तुम्हारी में अभी वापस देती हूँ, लेकिन एक बात में पूछती हूँ, क्या मेरे मन को तुम यहाँ रोक रखोगे, ऐसा सोचते हो?”

“नहीं, यह तो नहीं सोचता। मन तो देह के साथ जायगा।”

“अच्छा, अगर यही बात है, तो ससुराल में तुम लोग मुझे कैसे रोकोगे? मान लो, अगर सवेरे उठकर सब काम से पहले एक कागज पर प्रतिदिन एक सौ आठ बार तुम्हारा नाम लिखूँ, तो क्या करोगे?”

रोज सवेरे वहाँ जाकर वह कागज ले आओगे? या मेरी दावात, कलम और कागज छीन लोगे? क्या करोगे बताओ?"

मालती की इस बात से केशव का मुँह एकबारगी सूख गया। रामकली के अनुरोध पर वह दवा करने आया था, लेकिन दवा किस तरह बेकार हुई, यह जानकर वह निराशा और भय से बिलकुल हतबुद्धि हो गया। इस अद्भुत बात का वह क्या उत्तर दे, यह समझ न सकने पर वह विस्फारित नेत्रों से चुपचाप देखता रह गया।

केशव की विमूढ़ता देखकर मालती के मुख पर आत्म-प्रसन्नता की एक निष्ठुर हँसी झलकने लगी।

“बताओ न केशव भैया, वहाँ तुम क्या बन्दोबस्त करोगे?”

इस बार केशव का मुँह खुला, उसने कहा, “वह मैं नहीं जानना, लेकिन तुमको मेरा यह आदेश है मालती कि तुम यह सब लड़कपन न करना। समझीं?”

मालती ने हँसते हुए कहा, “नहीं, ठीक समझ नहीं सकी। मेरे ऊपर का सारा अधिकार छोड़ देने के बाद अब किस अधिकार के बल पर यह आदेश दे रहे हो?”

“आत्मीयता के अधिकार से?”

“लेकिन तुम्हारे साथ मेरी आत्मीयता अब कितनी साधारण है, यह जानते हो? मैं तुम्हारी भाभी की बहन या तुम्हारे भैया की साली, बहुत ज्यादा तुम्हारे मित्र की.....” मालती का गला सहसा रुँध गया। उसने जल्दी से अपना मुँह फेरकर किसी प्रकार आँखों का जल रोका।

केशव के हृदय को जैसे किसी ने दो तरफ़ से जोर से पकड़ लिया हो, दुर्बलनीय चित्त को किसी प्रकार संयत करके कहा, “अच्छा सम्पर्क की बात छोड़ दी। लेकिन तुममें भी तो न्याय-अन्याय, अच्छे-बुरे का विचार है? आत्माभिमान, मान-मर्यादा का ज्ञान क्या नहीं है?”

केशव की बात सुनकर मालती के मुख पर घृणा-मिश्रित यातना के चिह्न दिखलाई पड़े। उसने दृढ़ तथा विद्रुपात्मक स्वर में कहा, “शायद नहीं है। होने से क्या आज दूसरे के घर जाती!”

“छि: मालती ! यह सब तुम क्या कहती हो ? किसी उपन्यास में भी ये सब बातें होने से अतिशयोक्ति मालूम होती।”

“यह मैं भी समझ रही हूँ केशव भैया ! लेकिन यदि तुम मुझे लेकर जबर्दस्ती उपन्यास तैयार करो, तो मैं क्या करूँ ? मैं तो चुप ही हूँ—बात करना नहीं चाहती—लेकिन तुम तो बार-बार आकर संसी लगाकर मेरे मुँह से बात निकालते हो।”

मालती की बात सुनकर केशव थोड़ी देर तक चुप रहा। इसके बाद धीरे धीरे शान्त स्वर में कहा, “तुमसे मेरी आज एक प्रार्थना है मालती ! यदि तुमने मुझसे कभी कोई अच्छी शिक्षा पाई हो, यदि कभी अपना उपदेशक मानकर मुझ पर थोड़ी भी श्रद्धा की हो, तो आज मुझे उसकी दक्षिणा दे जाओ। यदि यह तुम अधिकार समझके न दो, तो भिक्षुक समझके ही दो।”

“क्या बताओ ?”

“मुझे सिर्फ यह आश्वासन दो कि भविष्य में तुम अपने को और अपनी अवस्था को ठीक से ध्यान में रखोगी। तुम यह बात कभी न भूलना कि तुम एक भले हिन्दू घर की लड़की हो। वंशपरम्परा से और अनेक वर्षों के बाद जो संस्कार तुम्हारे रक्त के माथ मिल गये हैं, और अब तुम्हारे शरीर के अंग बन गये हैं, उनकी सब तरह से रक्षा करना ही तुम्हारा धर्म है।”

किन्तु इस बार मालती की शान्त मूर्ति एक मुहूर्त में बदल गई, और वह क्रुद्धा सर्पिणी की भाँति फूटकार कर उठी—उसकी दोनों आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं। बारूद के ढेर पर केशव ने बत्ती लगा दी। “मैं इतनी हीन नहीं कि तुम्हें यह आश्वासन देकर अपने को अपमानित करूँगी ! तुम मुझे जो सोचते हो, मैं उससे बहुत ऊपर हूँ। माफ़ करो केशव भैया, और ज्यादा देवतागिरी न दिखाओ। इतना अहंकार न चलेगा—एक दिन यह चूर-चूर हो जायगा।”

“मैं देवता हूँ, यह बात किसने कही मालती !”

“तुमने ! तुम कहते हो ! तुम साधू, तुम ऋषि, तुम देवता ! स्वर्ग के देवता से भी तुम बढ़ गये हो ! एक अभागिनी की बात सोचकर

मेरी भगवान् से प्रार्थना है कि मुझे ही लेकर तुम्हारा यह देवत्व शेष हो जाय ! तुम आदमी बन जाओ ! जिससे तुम्हारा देवत्व उस बेचारी को और न पीसे।”

“वह कौन है मालती ?”

“मैं नहीं जानती ! और मैं अममर्थ हूँ—दया करके मुझे छोड़ दो। तुम्हारी मखमली चट्टियाँ तुम्हारे कमरे में पहुँचा दूंगी—उन पर मेरी थोड़ी भी ममता नहीं।”

केशव के मुँह से एक भी शब्द न निकला, लेकिन मन ही मन एकान्त चित्त में मालती की मंगल-कामना करके वह धीरे धीरे कमरे से बाहर चला गया।

(२६)

दुलारी के कमरे में निकलकर उस दिन कृष्णचन्द्र केशव से बिना मिले ही घर चला गया था। सोने के कमरे में जाकर बिजली बुझाकर वह बिछौने पर चुपचाप लेट रहा। जो चोट खाकर आया था, उसका दर्द अब भी छाती में कसक रहा था। मंडप के नीचे वर की मृत्यु हो जाने पर जो हालत होती है, उसके हृदय की अवस्था कुछ वैसी ही हुई थी। बाहर अब तक शहनाई मक्की नहीं, लेकिन भीतर हृदय-विदारक श्रन्दन आरम्भ हो गया है।

इस मर्मभेदी अनुभूति के भीतर सिर्फ दुःख की वेदना न थी, बल्कि एक अत्यन्त निकृष्ट लज्जा भी कृष्णचन्द्र के हृदय को छेद रही थी। जिस समय वह दुलारी के सामने निस्संशय होकर विजयी प्रेमी का झूठा अभिनय कर रहा था, उस समय दुलारी के मन में निस्सन्देह एक कौतुक-युक्त करुणा जागृत हुई होगी ! वह सहृदय है, इसलिए उसके सदय नेत्रों में कौतुक के चपल हास्य की जगह करुणा ही प्रस्फुटित हुई थी। लेकिन वही दुःसह करुणा ही कृष्णचन्द्र के व्यथित चित्त को तेज सुई की तरह छेद रही थी।

लेकिन जिस तरह कोई कोई जीव बाहर के आघात से अपनी रक्षा करने के लिए अपने कमजोर तथा कोमल अंगों को एक कठोर आवरण

के भीतर छिपा रखते हैं, कृष्णचन्द्र ने भी उसी तरह अपनी अति गोपनीय वेदना तथा लज्जा के चारों ओर विवेचना और स्वाभिमान का एक मजबूत जाल बुनकर उसे एक आच्छादन में प्रायः अदृश्य और अज्ञेय बना रक्खा था। इसी लिए रामकली को उसके भीतर के जलते हुए ज्वालामुखी का कुछ भी पता न चला।

सारी रात उसका चित्त बेचैन रहा। सबेरे उठकर कुल्ला-दातून करके केशव के घर को रवाना हुआ। अभी दरवाजे पर ही बैठा था कि भीतर से कल्लू ने आकर कहा, “भैया, तुमको मा जी बुलाती हैं।”

कृष्णचन्द्र घर आया। पूछा, “क्या है भाभी?”

“तुमको सन्देशा भोजना पड़ता है, कृष्णा” राजरानी ने कहा। “घर क्यों नहीं आये, क्या यहाँ तुम्हारी लहुरी बैठी है?”

“हाँ कृष्णा, वही दरवाजे पर भला क्यों बैठ गये, वोलो तो?” रामकली ने कहा।

कृष्णचन्द्र ने थोड़ा सकुचाते हुए कहा, “बात यह है भाभी, आज तो दरवाजे पर ही काम है। मैं भैया के पास बैठ गया, शायद कुछ काम बतला दे।”

रामकली ने हँसते हुए कहा, “तो आओ, बेकारों के लिए हमारे दरबार में बहुत काम है।”

“क्या?” मुसकराते हुए कृष्णचन्द्र ने पूछा।

“धैली और बारात न्योतने का सामान अभी तक कुछ नहीं आया कृष्णा, और यह सामान तुम्हीं ठीक से ला सकते हो।” रामकली ने कहा।

“तो कहाँ है फर्द? कितना सामान है?”

“कुछ नहीं बस यही कोई सौ चीजे। तुम दो मिनट बैठो, कुछ जलपान कर लो। और मैं फर्द पूरी किये देती हूँ।” इतना कहकर रामकली कृष्णचन्द्र के लिए जलपान लेने को चल दी। चलते-चलते कहा, “और राजरानी, तुम तब तक कच्ची फर्द से दुलारी के साथ इस फर्द को मिला लो।”

राजरानी और दुलारी फर्द मिलाने को बैठीं, तो इतने ही में कल्लू ने राजरानी से कहा, “बुआ, तुमको भैया बुलाते हैं?” राजरानी उठकर

अनन्त के पास को चल दी, कहती गई, “तुलारी तुम और कृष्ण तब तक फर्द मिला लो।”

कृष्णचन्द्र और दुलारी इस प्रकार अकेले पड़ जायेंगे, यह अनुमान न था, इसलिए अचानक इस अवस्था में पड़ जाने से दोनों कुछ परेशान-से हो गये। कुछ न बोलकर इस अवस्था को और भी प्रतिकूल करना ठीक न समझ कृष्णचन्द्र ने कच्ची फर्द को हाथ में लेकर कहा, “आप उस फर्द से बोलिए। मैं इसमें लाल पेसिल से निशान करता जाऊँगा।”

कृष्णचन्द्र की इस सलाह से दुलारी को बहुत सन्तोष हुआ। फर्द छठाकर पढ़ने लगी।

“श्रेष्ठ गुलाबजल—चार बोतल।”

“चार बोतल गुलाबजल, इस मौसम में क्या होगा! अच्छा बोलिए, पहले फर्द मिला लें।” कहकर कृष्णचन्द्र ने पेसिल से चिह्न बनाया।

“फेशवास—एक बोतल।”

“अच्छा।”

“लवेण्डर ओटो—बड़ी दो शीशी।”

“अच्छा।”

“इत्र हिना—दो शीशी।”

“अच्छा।”

“हेजलीन—”

कृष्णचन्द्र ने बीच में ही रुककर कहा, “ठहरिए, एक बात सुन लीजिए। बेखिए भूल करना अनुचित है, लेकिन भूल करके उसे न सुधारना उससे भी अधिक बुरा। उस दिन बिना समझे मैंने कुछ बातें कही, उसके लिए क्षमा कीजिए। वैसा कुछ भूल के कारण हुआ था। वह सब कहने की जरूरत नहीं। उस बात को आप मन में न रखिए। हाँ और क्या?”

थोड़ा रुककर काँपते हुए स्वर में दुलारी ने कहा, “हेजलीन स्नो—दो शीशी।”

“दो शीशी।”

“एसेंस—आठ तरह का।”

“आठ तरह का।”

“फेस पाउडर—तीन तरह का।”

“तीन तरह का। देखिए मेरे लिए आप थोड़ी भी चिन्ता न करें। मैं उस जापानी गुड्डे की तरह हूँ, जो सदा खड़ा ही रहता है। लिटा दीजिए तब भी खड़ा। और किसी से मैं यह बात न कहता—आपको पहचानता हूँ, इसी से कहा—आप दूसरों की बहुत चिन्ता करती हैं! हाँ, बोलिए और क्या?”

रूँधे हुए कण्ठ से दुलारी ने कहा—“सुवासित आलता—दो शीशी।”

“दो शीशी। क्या मजाक आलता भी दो शीशी। एक शीशी कृपा के बास्ते क्या? फर्द क्या बिलकुल लड़कपन हुआ है। खैर बोलिए, बाद में ठीक कर लेंगे।”

“बड़े शीशे—दो।”

“दो।”

“कंधे, ब्रुश, ककई—दो सेट।”

“दो सेट। जरा ठहरिए, एक बात कहूँ। केशव को मैं कितना प्यार करता हूँ यह आपको पता नहीं। ज़रूरत पड़ने पर उसके लिए प्राण देने में भी हिचकिचाहट नहीं। वह भी मुझे इसी तरह प्यार करता है। इससे समझ सकती हैं कि उसके साथ आपका विवाह होने से मुझे कितना हर्ष है। लेकिन आपसे मेरा एक अनुरोध है विवाह के पहले उस दिन की बात केशव से न कहिएगा। विवाह के बाद बतलाया जा सकता है—अच्छा मजाक रहेगा! समझ गई ना। अच्छा बोलिए।”

दुलारी को चुप देखकर कृष्णचन्द्र ने देखा कि उसकी आँखें छलछलाई हैं, बस आँसू टपकने की देर है। कहा, “आपकी आँख में कुछ पड़ गया है। बाहर जाकर पानी के छीटे देकर धो डालिए।”

इसी समय जलपान की तश्तरी लिये रामकली आई।

(२७)

कृष्णचन्द्र फर्द लेकर बाहर निकला, तो दरवाजे पर केशव से भेंट हो गई। केशव ने हाथ पकड़कर भकभोरते हुए कहा, “क्यों, रात आये नहीं? आजकल पता ही नहीं रहता।”

“पता लेने की तुम्हें फुर्सत हो तब न !”

“क्यों ?” पूछते पूछते केशव उसे अपने कमरे में ले गया ।

“यों ही, आजकल तो भावी पत्नी के कल्पित मिलन का मजा लेने ही से फुर्सत नहीं ।”

“कहीं है क्या ? जुटाई है कहीं ?” केशव ने मुसकराते हुए कहा ।

“जुटाने के लिए तो तिवारीपुर तक की खाक छान आया ।”

“तो आज न मिलने से पछतावा हो रहा है ।” केशव ने व्यंग्य करते हुए कहा ।

“तूने मेरे प्रेम को ऐसा ही समझ लिया क्या केशव, कि तेरे साथ विवाह होने से मुझे पछतावा होगा ।” कृष्णचन्द्र ने जरा गम्भीर होकर कहा ।

“प्रेम के साथ ईर्ष्या होना भी स्वाभाविक है, और प्रेम जितना ही गाढ़ा होगा, ईर्ष्या का तल भी उतना ही गहरा । केशव ने कहा ।

कृष्णचन्द्र ने मुसकराते हुए कहा, “लेकिन मेरा प्रेम कुछ क्षुद्र नदियों का थोड़े ही है । मेरा प्रेम है सागर, जो जितना ही गहरा उतना ही विस्तृत ।”

“और उस सागर में दुलारी के प्रेम-स्पर्श से तरंगें उठाने की भी मैं तैयारी कर चुका हूँ ।” केशव ने मुसकराते हुए कहा ।

केशव का यह मजाक कृष्णचन्द्र को अच्छा न लगा । उसने मजाक के उत्तर में मजाक न देकर जरा गम्भीर होकर कहा, “नहीं केशव, यह तुम बेजा कर रहे हो । मजाक करना हो, तो करो । मुझे आपत्ति नहीं । लेकिन दुलारी को बीच में मत घसीटो ।”

“इसलिए कि दुलारी तुम्हारी पत्नी होगी ?”

“इसलिए नहीं, बल्कि इसलिए कि दुलारी तुम्हारी पत्नी होगी, यह तय हो गया है ।”

केशव ने भीटें टेढ़ी करके कहा, “तय हो गया है न क्या ? तुमको पता है ? यह अच्छा राम के बिना रामायण ! यह पक्की खबर कहाँ मिली ?”

कृष्णचन्द्र ने मजाक के ढंग से हँसते हुए कहा, “विश्वस्तसूत्र से गलूम हुआ ।”

केशव ने कहा, “सूत्र तुम्हारा पक्का या कच्चा, रेशम का या ऊन का यह जानने की मुझे जरूरत नहीं। तुम इतना ही मान लो कि विश्वस्त सूत्र से तुम्हें जो खबर मिली है, उसकी कुछ बुनियाद नहीं।”

कृष्णचन्द्र ने मीठे स्वर में कहा, “बुनियाद तो इसकी बहुत मजबूत है भाई! उसमें लगे ईंट-पत्थर हैं मृत्यु-शय्या के ऊपर की प्रतिज्ञा और गारा-खूना है एक लड़की का प्रेम! यह इतनी मजबूत है कि इसके ऊपर मिलन का राजप्रासाद अनायास उठाया जा सकता है।”

मृत्यु-शय्या के ऊपर की प्रतिज्ञा की बात सुनकर केशव की परिहास मुद्रा एकवारगी लुप्त हो गई, और उसका मुँह सूख गया। मरणोन्मुख रोगी को सान्त्वना देने के लिए उसके अन्धकार मार्ग में जो मिथ्या क धुंधला दीपक दिखलाया गया था, वही समय पाकर सत्य का ज्योतिर्पुं हुआ जा रहा है, यह सोचकर केशव बैचेन हो उठा।

थोड़े रुखे स्वर में कहा, “क्या मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि मैं दुलार से विवाह करूँगा?”

कृष्णचन्द्र ने हँसकर कहा, “तुमने क्या प्रतिज्ञा की है, वह तो तुम जानो। लेकिन किस दशा में तुम्हें वैसी प्रतिज्ञा करनी पड़ी है—तुमने इच्छा से नहीं की, यह मुझे मालूम है, इसलिए मुझे इसमें थोड़ा भाग दुःख नहीं।”

केशव ने उत्तेजित होकर कहा—“तुम समझते नहीं, मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, वह स्वेच्छा से की थी, बाध्य होकर नहीं। लेकिन मैंने की क्या प्रतिज्ञा? क्या मैंने यह प्रतिज्ञा की कि मैं दुलारी से विवाह करूँगा? बिलकुल गलत। दुलारी का भार-ग्रहण करता हूँ, यही मैंने कहा था।”

थोड़ा सोचकर कृष्णचन्द्र ने कहा, “कुछ भी हो, लेकिन जिसको बतलाया था, और जिनके सामने बताया था, सभी ने यही समझा कि दुलारी के साथ विवाह करने की तुमने प्रतिज्ञा की थी। यही खयाल दुलारी ने तब भी किया था, अब भी यही खयाल है।”

केशव ने कहा, “तो अब दुलारी का वह खयाल न रह जायगा।” कृष्णचन्द्र का हाथ दबाते हुए, “भाई, अधीर न हो, मालती का विवाह

हो आय, तो बस तुम्हारा शीघ्र दुलारी-रत्न पर अधिकार करा दूँगा।”

कृष्णचन्द्र ने मुसकराते हुए कहा—“अधीर मैं हो नहीं रहा। लेकिन अधिकार मैं करूँगा किस तरह, तुम तो पहले ही अधिकार कर बैठे!”

“यदि ऐसा हो, तब भी तुम करोगे।” केशव ने कहा।

“कैसे? चोरी करके या डाका डालके?”

“बहुत आसानी से। मैं स्वयं अधिकार छोड़ दूँगा।”

कृष्णचन्द्र ने मुसकराते हुए कहा, “दान में? और सबका दान लिया जा सकता है, स्त्री का नहीं। उससे तो चोरी करना, डाका डालना प्रच्छा।”

इस हास-परिहास में केशव को कृष्णचन्द्र के मन की थाह मिल गई। स्वाभिमानी कृष्णचन्द्र इस बात को पसन्द न करेगा, यह सोचकर केशव विचलित हो उठा। उसने कहा, “लेकिन जहाँ दान की वस्तु पर दाना को आसक्ति न हो, वहाँ दान लेने में कुछ अप्रमिष्टा नहीं। मैंने दुलारी से अधिक प्रिय वस्तु छोड़ दी है। दुलारी के लिए मुझमें थोड़ा भी लालच नहीं।”

कृष्णचन्द्र ने हँसते हुए कहा, “और मुझमें लालच क्या इनका अधिक है कि बिना अधिकार के ग्रहण करने में भी हिचकिचाहट न होगी।”

केशव ने शक्ति होकर कहा, “बिना अधिकार क्यों कहते हो कृष्णा? तुमसे ज्यादा दुलारी पर और है किसका अधिकार! और कोई जाने या न जाने में जानता हूँ कि दुलारी को तुम कितना चाहते हो। वही तुम्हारा सबसे बड़ा अधिकार है।”

कृष्णचन्द्र ने शान्त भाव से कहा, “अच्छा माना दुलारी को मैं बहुत चाहता हूँ। लेकिन यदि इसी तरह दुलारी तुमको चाहती हो, तो किसकी बात मानोगे? मेरी या दुलारी की?”

कृष्णचन्द्र के इस प्रश्न का उत्तर न देकर केशव ने कहा, “एक काल्पनिक अवस्था को लेकर परेशान होने की क्या जरूरत? अधिकार केवल तुम्हारा है और किसी का नहीं।”

“हाँ है, यदि प्रमाणित कर दूँ। यदि दोनों भाभियाँ साक्षी दें। दुलारी स्वयं स्वीकार करे। तो तुम क्या करोगे ?”

कृष्णचन्द्र के इस दृढ़ वाक्य को सुनकर केशव का मुँह सूख गया। उसने भीत स्वर में कहा, “इसका और दूसरा रास्ता नहीं कृष्णा। दुलारी से तुम्हारा विवाह होगा, और इसी में वह प्रसन्न होगी। तुम्हारा प्यार ऐसा नहीं कि व्यर्थ चला जाय।”

शान्त और दृढ़ स्वर में कृष्णचन्द्र ने कहा, “मेरा प्यार दुलारी को दुःखित करने के लिए भी नहीं है। यदि मुझसे दुलारी को दुःख पहुँचे तो मैं समझूँगा मेरा प्यार व्यर्थ हुआ।” थोड़ा चुप रहकर उसने फिर कहा, “और यह भी मैं कह सकता हूँ केशव कि दुलारी का स्वामी होने पर तुम पर मेरा प्रेम बढ़ेगा, कम न होगा।” केशव को चुप देखकर कृष्णचन्द्र ने कहा, “चुप क्यों हो? विश्वास नहीं होता?”

कृष्णचन्द्र की बात पर विश्वास न होता हो, यह बात नहीं, लेकिन केशव सोच रहा था कि एक लीला समाप्त होते न होते एक अन्य नारी-हृदय-पीड़न की लीला आरम्भ होनेवाली है। उसने फीके स्वर में कहा, “तुम सब मिलकर मुझे पागल बना दोगे।”

थोड़ी देर चुप बैठे रहने के बाद केशव और कृष्णचन्द्र जब उठे, तो दोनों व्यथित और चिन्तित थे।

(२८)

तीसरे पहर कृपाशंकर के घर में चहल-पहल थी। बारात की तैयारी हो रही थी। नौकरों के पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे। बाबू के विवाह की खुशी, इनाम-इकराम का लोभ, उत्सव और उत्साह, सभी में एक नशा-सा था। बारात शहराती थी, लेकिन फिर भी दरवाजे पर दो घोड़े आगये थे, हाथी मँगाया गया था, वह भी आगया था। हाथी के मस्तक पर ऐपन से अंकन हुआ था। एक तरफ़ वर की मोटर गरुडाकृति में सजाई गई थी। शहनाई मधुर राग से बज रही थी।

इतने में कृपाशंकर एक मोटर से उतरा और सामने खड़े एक नौकर की ओर आँखें तरेरते हुए गम्भीर होकर कहा, “शहनाई का

बजना बन्द करा दो, और कह दो जब तक में न कहूँ, तब तक न बजायें।”

शहनाई तान भरते ही बन्द कर दी गई।

घर के भीतर प्रवेश करते ही बैठकखाने की ओर मुड़ा, तो वहाँ मीर, जामा, चढ़ाव के गहने कारिन्दा के सामने रखे देखे।

कृपाशंकर ने भीड़ टेढ़ी करके कहा, “ये सब क्यों? मैंने तो आपको चिट्ठी भेजवा दी थी।”

बूढ़े कारिन्दा गोविन्द ने चश्मे को नाक पर ठीक करते हुए खड़े होकर कहा, “आपकी चिट्ठी बाद में मिली, यह सामान पहले ही आगया था।”

“यह हाथी-घोड़े सब ?” कृपाशंकर ने प्रश्नसूचक स्वर में पूछा।

“इन्हें अभी वापस करा रहा हूँ। लेकिन बात—” आगे कुछ कहने का कारिन्दा को साहस न हुआ।

“बात फिर होती रहेगी, अभी इतना ही समझिए कि बारात न जायगी।” इतना कहकर कृपाशंकर घर के भीतर चला गया।

कृपाशंकर को देखते ही एक वयस्का स्त्री ने जो दूर के रिश्ते में कृपाशंकर की मौसी थी, निकट आकर बहुत ही उद्वेग के साथ व्यस्त होकर कहा, “मारा दिन कहाँ रहे बेटा? मैं तो मारे चिन्ता के मरी बंठी थी—मेरा बच्चा गया कहाँ! बारात निकासी का सारा सामान किये में और उपरोहित बाबा रास्ता देख रहे हैं—बच्चे का पता नहीं! बच्चा का मुँह बिलकुल सूख गया है। काम-काज के समय इस तरह क्या करते हो बच्चा? जान पड़ता है सारे दिन मुँह में पानी भी नहीं पड़ा?” विवाह के उपलक्ष्य में जितनी स्त्रियाँ आई हैं, उनमें सम्पर्क के हिसाब से यह सबसे दूर की है, लेकिन बातचीत और व्यवहार में इनको मा की सगी बहन कहना भी कम था—कृपाशंकर की मा जीवित होतीं, तो जान पड़ता है उनको भी दूर ही रहना पड़ता।

अन्तिम प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कृपाशंकर ने कहा—“बारात न जायगी, यह बात तो मैंने कहला भेजी है, फिर चिन्ता किस बात की?”

मौसी ने आँखें फैलाकर कहा, “अरे चिन्ता न होगी—बच्चे की दो बातें सुनूँ! मैं तो औरों की तरह नहीं हूँ कि खाली गठरी बाँधने आई हूँ—दीदी जो मरते वक्त तुमको मेरे हाथ में सौंप गई थी। तुम तो तब थे छोटे, तुम तो जानते नहीं बेटा—मेरा हाथ पकड़ के कहा था, “सीता, मैं चली—तू बच्चा को देखना, तुझे छोड़कर उसका अपना और कोई नहीं!” मुझे चिन्ता न होगी, तो क्या उनको होगी जो भण्डारे में बैठ के चुप्पे पूड़ियाँ लीलती है?” इसके बाद कण्ठ-स्वर बिलकुल मृदु करके कृपाशंकर के कान के पास मुँह ले जाकर कहा—“और क्या कहूँ बेटा, बोलते लाज लगती है, मैं दो मिनट के लिए यहाँ से चली गई थी, लौटकर देखा तो दो-तीन चीजे हजम। क्या तुमसे कहूँ, मेरे तो प्राण जलते हैं। इच्छा होती है कि सन्दूक-पिटारी खोल के सब चीजे बाहर करके निकाल लूँ। लेकिन लाचार हूँ, इतनी साध के बाद यह काम, तो तुच्छ दो-चार चीजों के लिए किसी की आह ले नहीं सकती। चप रहना ही होगा।”

माना की मृत्यु के समय कृपाशंकर छोटा था, यह ठीक है, लेकिन यह बात उसे मालूम थी कि उस समय सीता मौसी वहाँ न थी। लेकिन इस समय उस सम्बन्ध में कुछ कहने की उसकी न इच्छा थी, और न अवस्था। मौसी की बात का कुछ उत्तर देने के पहले ही प्रनियादिनी और प्रतिव्रन्दिनी बुआ आकर हाजिर हो गईं।

ये थी कृपाशंकर की आजी की मौसेरी बहन की पुत्री, इसलिए बुआ; और हिसाब से मौसी से अधिक निकट सम्बन्ध की थी।

सीता की तरफ़ एकबार जलती आँखें फेरकर फिर कृपाशंकर पर अस्त और उद्विग्न दृष्टि डालकर कहा, “कहाँ रहे बच्चा सारा दिन—मैं तो काठ की तरह बैठी थी और भगवान् की मानता कर रही थी। बताओ तबीअत तो ठीक है?”

सीता दोनों के बीच में आकर बुआ के दृष्टिपथ को प्रायः रोककर खड़ी हो गई, और श्लेषमिश्रित वाणी में कहा, “सारा दिन नहाया-खाया नहीं, घूमते रहने से शरीर धँसे ठीक रह सकता है! और अब पूछती क्या हो दीदी? उसका क्या साठ हज़ार बातों का उत्तर देने का सामर्थ्य

है ? चल बेटा, मेरे कमरे में थोड़ी देर विश्राम कर । मैं जलपान लिये आती हूँ ।”

बुआ झनझना उठी। “देख सीता, तू है नातेदारिन, सब बातों में तेरा बीच में पड़ना अच्छा नहीं लगता । तुमको माथे पर लाई हूँ, काम हो जाने पर माथे पर पहुँचा दूंगी । तुम नातेदारिन हो, नातेदारिन की तरह रहो ।”

क्रोध से सीता का लम्बा सूखे काठ-सा शरीर और भी लम्बा हो गया । आँखें तरेरकर कहा, “मैं नातेदारिन ?”

बुआ ने कृपाशंकर की ओर शान्त दृष्टि रखते हुए दृढ़ तथा धीर स्वर में कहा, “अरे नातेदारिन नहीं ? मौसी नातेदारिन नहीं तो और क्या ? बताओ, तुम तो प्यारेशंकर की साली भी नहीं—थी गाँव नाते ।”

प्यारेशंकर थे कृपाशंकर के पिता ।

बुआ की बात सुनकर क्रोध में सीता को चारों तरफ़ अन्धकार दिखलाई पड़ा, “मैं हुई नातेदारिन, और तू गोत की ? अरे अपनी मेरी सौम्य ?” कहकर सीता ने अपने सारे शरीर को कुछ इस तरह से हिलाया, और ऐसी अद्भुत भाव-भंगी दिखलाई कि कृपाशंकर अवश्य विरक्ति और घृणा से दूसरी तरफ़ मुँह फेर लेता यदि उधर प्रत्युपकार के लिए विशेष भाव-भंगी से बुआ मुँह फुलाये न खड़ी होती ।

कृपाशंकर की मानसिक अवस्था उस समय जैसी थी, उसमें बुआ और मौसी के इस कलह में कुछ कहने की उसकी इच्छा न होती थी—लेकिन जब मामला इतना बढ़ा कि भलमनसाहत की सीमा से बाहर जाने लगा तो कृपाशंकर ने जोर से “बहनी, बहनी” कहके पुकारा ।

बुलाने पर एक विधवा अवस्था पचीस-तीस साल, आकर उपस्थित हुई ।

“कब आये कृपा ? क्या बात है बताओ तो ? सारा बिब—”

कृपाशंकर ने बीच में ही रोककर कहा, “यह सब बातें बाद में होंगी, इस समय अगर तुमसे हो सके, तो बुआ और मौसी को शान्त करो । व्यर्थ की बातों को लेकर झगड़ा सुनने की न मुझमें शक्ति है और न इच्छा ही ।”

सीता ने कृपाशंकर की बात सुनकर उस लड़की के प्रति एक विशेष अर्थव्यंजक कटाक्ष करते हुए कहा, “सच तो है ! हम हें डाइनें, डाइने ! लड़का सारा दिन घूमकर हारा-थका आया, और हम उसे काटे खाती हैं ।”

बुआ ने अपने भारी भरकम शरीर से बहुत ही महीन आनुनासिक शब्द करते हुए कहा, “काट खाने के ही लिए तो बच्चा भाबे भर-भर के पूड़ियाँ बनवा रहा है, घर में बैठे-बैठे खाना ही तो है । नातेदारिन तुम्हारा—”

“फिर नातेदारिन ?” सीता की दोनों आँखें बाघिन की आँखों की तरह जलने लगीं ।

शीतला अर्थात् विधवा बहन ने सीता को और बोलने का मौक़ा न देकर कहा, “मौसी, तुम इन सब फ़िज़ूल की बातों में पड़ी हो—उधर रसोईघर से अगर आधी पूड़ियाँ चोरी जायें, तो फिर मैं नहीं जानती ।”

इस आत्मीयता से मौसी पानी-पानी हो गईं । अधिकार की बात पर बुआ से विवाद हुआ था, शीतला की बात को उन्होंने अपने पक्ष की राय मान ली । विजय से चमकते नेत्रों से बुआ की ओर आग बरसाते हुए “ठीक कहती है बिटिया, मुझे इन फ़िज़ूल की बातों से क्या—में चली ।” कहकर वे जल्दी-जल्दी रसोईघर की ओर चली गईं ।

सीता की इस विजय से बुआ के हताश होने के पहले ही शीतला ने कहा, “बुआ, तुमको पूड़ी-तरकारी के काम में तो लगा रखने से चलेगा नहीं । उससे बहुत ज़्यादा ज़रूरी काम की बाबत तुमसे परामर्श करना है । मैं अपना कमरा खुला छोड़ आई हूँ, अलग पड़ता है । तुम जाकर दो मिनट वहाँ बैठो । मैं अभी आती हूँ ।”

सीता से कहीं बड़ा दर्जा पा जाने के कारण बुआ का मन हलका और मुख प्रफुल्लित हो गया । अपने आसन पर बैठने में और देरी न करके वे शीतला के कमरे की तरफ़ गईं ।

मौसी और बुआ के चले जाने के बाद शीतला ने कहा, “अब बताओ तो, सारा दिन रहे कहाँ, और बारात आज क्यों न जायगी ?”

थोड़ा रुकते हुए कृपाशंकर ने कहा, “यह सब बात तुम्हें बताऊँगा बहिनी, लेकिन इस समय थोड़ा भी वक्त नहीं। अभी अनन्त आते होंगे, उनसे बात करनी है। इधर आया था कि ज़रा जलपान कर लूँ, तो यहाँ यह मुसीबत।”

“तो चलो मेरे कमरे में बैठो, वही मैं जलपान लिये आती हूँ।”

“नहीं, मैं पूरबवाले कमरे में बैठता हूँ, तुम वही ले आओ।” चलते-चलते कहा, “और किसी नौकर से कह दो कारिन्दा जी मे कह वे अनन्त आये, तो यही उन्हें पहुँचा जायँ।”

कृपाशंकर धीरे-धीरे पूरबवाले कमरे में गया। शीतला एक तश्तरी में जलपान के लिए ले आई। कृपाशंकर ने अभी जलपान समाप्त किया ही था कि एक नौकर ने आकर कहा, “अनन्त बाबू आये है।”

“यहीं ले आ !”

कृपाशंकर के मन में इस समय एक प्रचण्ड कम्पन होने लगा। वह सोच न पा रहा था कि आखिर अनन्त से क्या कहेगा। कैसे कहेगा कि विवाह न होगा। इतने में अनन्त आगये। कृपाशंकर ने खड़े होकर अनन्त का अभिवादन किया और हाथ पकड़कर पास ही कालीन पर बैठा लिया।

एक क्षण तक दोनों एक दूसरे की ओर देखते रहे, किसी के मुँह से शब्द ही न निकला। इतने में अनन्त ने कहा, “क्यों कृपाशंकर, आज इतने उदास क्यों है? चेहरा बिल्कुल उतरा हुआ मालूम होता है? मुझे क्यों बुलाया?”

अब कृपाशंकर का ध्यान मानो भंग हुआ। उसने अड़ते हुए कहा, “भैया, बात कुछ ऐसी है कि कहने में संकोच होता है। और बिना कहे काम भी नहीं बनता।” इतना कहकर कृपाशंकर चुप हो गया, और अनन्त के मुँह की ओर ताकने लगा।

अनन्त ने घबराहट के स्वर में कहा, “बात क्या है? कुछ बोलो भी तो?”

कृपाशंकर ने सिर खुजलाते हुए गर्दन झुकाकर कहा, “भैया विवाह न हो सकेगा।” आगे उसका गला रुँध गया, वह कुछ न कह सका।

अनन्त को एक क्षण के लिए इन शब्दों पर विश्वास न हुआ। उन्हें ऐसा लगा मानो कृपाशंकर कुछ और ही कह गया, उन्होंने गलत समझा। उन्होंने आश्चर्य-सहित पूछा, “क्या कहा कृपा ? विवाह...” आगे के वाक्य पूरा न कर सके।

अब तक कृपाशंकर भी सोच चुका था कि आखिर उसे क्या कहना चाहिए, और जब बिना कहे चारा नहीं, तो कहता भी क्या। उसने कहा, “बात यह है भैया, आज दोपहर को कल्लू मामा ने बुलवाया। उन्होंने मालती के सम्बन्ध में कुछ ऐसी बातें कहीं कि विवाह करना किसी भी दशा में सम्भव नहीं।”

अनन्त इतने में बोल उठा, “क्या ?”

कृपाशंकर ने कहा, “उन्होंने बतलाया कि मालती और उनकी बड़ी बहन लड़कियाँ तो हैं पंडित रामरतन की, लेकिन सगी बहनें नहीं हैं। पंडित रामरतन की पत्नी के मर जाने पर लड़की के लालन-पालन के लिए उन्होंने दूर के नाते की एक विधवा को घर में रखा। बाद में उसी से मालती का जन्म हुआ। पंडित रामरतन मरते समय दोनों लड़कियों को अपने एक मित्र को सौंपते गये। उन मित्र को पंडित रामरतन की पत्नी भैया कहती थीं, इसी लिए उन्होंने अपने को लड़कियों का मामा बतलाया।” इतना कहकर कृपाशंकर चुप हो गया। थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे। इसके बाद कृपाशंकर ने कहा, “अब आप ही बतलाइए भैया, समाज में रहना है, तो चार को लेकर ही चलना होगा। मामा कहते थे हम बारात में न जायेंगे। भात न खायेंगे, कोई कनौजिया जाने न पायेगा।”

अनन्त बिलकुल चुप था। उसे ऐसा लगता था जैसे उसके नीचे की ज़मीन धँसती जा रही हो। उसने दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए माथे पर हाथ धर लिया, और गर्दन झुकाये चुप बैठा रहा।

कृपाशंकर ने अनन्त का हाथ थामते हुए कहा, “भैया, शोक न कीजिए। हमने उनसे कह दिया है कि अब इस बात को अपने ही तक रखो। मैं क्या कहूँ, मजबूरी है। मैं तो मालती के शील-गुण पर सोचता हूँ, तो कलेजे में राहें होती हैं।”

इतनी देर के बाद अनन्त ने कहा, “कल्लू मामा ने जो कुछ कहा, उसका उनके पास कुछ सबूत है। या यों ही सुनी-सुनाई कह दी?”

कृपाशंकर ने अड़ते हुए कहा, “वे तो और भी कुछ कहते थे, लेकिन मेने मारे संकोच के आपसे कहा नहीं?”

“क्या?” अनन्त ने घबराहट के साथ पूछा।

कृपाशंकर ने गर्दन झुकाकर कहा, “वे तो कहते थे, मालती की मा, वह विधवा अब भी चौक के चकले में रहती है। मुझे उनकी बात पर यक़ीन न हुआ, तो उनके साथ खुफ़िया पता लगाया, और उस नाम की रंडी वहाँ है जरूर।”

यह सुनकर तो अनन्त को ऐसा लगा जैसे किसी ने सीधे कलेजे में छुरी घुसेड़ दी हो। वह दोनों हाथों से सिर धामकर बैठ गया। उसकी आँखों के आगे बिलकुल अँधेरा छा गया। उसे सारा संसार चक्कर करता-सा मालूम हुआ। कृपाशंकर भी चुप था। थोड़ी देर उसी प्रकार बैठे रहने के बाद अनन्त एकाएक उठ खड़ा हुआ। सूखे स्वर में कहा, “अच्छा चलूँ, घर में सब राह देखते होंगे। जाकर रोकवा दूँ।” धीरे-धीरे वह कमरे से बाहर हुआ, लेकिन उसके पैर इस तरह पड़ रहे थे, जैसे वे संज्ञाशून्य हों, और कोई ठेल-ठेलकर आगे बढ़ा रहा हो।

(२९)

संध्या के सात बजे थे। केशव के घर में चहल-पहल थी। दरवाज़े पर शहनाई बज रही थी। आँगन में स्त्रियाँ मंगलगीत गा रही थी। अभी थोड़ी देर में बारात आयेगी। द्वार-पूजा की तैयारी हो रही थी।

केशव रामकली के कमरे में बैठा था। केशव ने कहा, “आखिर भैया को कृपाशंकर ने क्यों बुलवाया। अब तक भैया आये नहीं।”

रामकली ने कहा, “उनका नौकर आया था, और कुछ जरूरी सलाह के लिए तुरन्त चलने को कहा था। आते ही होंगे।”

इतने में अनन्त ने कमरे में प्रवेश किया। अनन्त का चेहरा उतरा हुआ था। वे बिछीने पर इस तरह गिरे जैसे मंजिल तय करके आ रहे हों।

केशव ने व्यग्र होकर पूछा, “क्या है भैया ! तुम्हारा चेहरा क्यों उतरा हुआ है ? कृपा ने क्यों बुलाया था ?”

अनन्त ने मुंह लटकाये हुए सिर पर हाथ फेरते-फेरते कहा, “बड़े जोर की चोट लगी केशव । नाक कट गई ।”

“आँ, क्या हुआ ?” रामकली ने घबराहट के स्वर में पूछा ।

अनन्त ने थोड़ा सोचकर अड़ते हुए कहा, “कृपाशंकर विवाह न करेंगे ।” इसके आगे वह कुछ न कह सके, मानो किसी ने उनकी ज़बान पर ताला जड़ दिया ।

“विवाह न करेंगे ! यह क्यों ?” रामकली ने पूछा ।

अनन्त ने धीरे-धीरे कहा, “कृपाशंकर कहते हैं कि मालती विधवा की पुत्री है । तुम्हारे और मालती के पिता ताँ एक हैं, लेकिन मातायें एक नहीं । तुम्हारी मा के देहान्त के बाद उन्होंने एक दूर के नाते की विधवा को तुम्हारा पालन करने के लिए रखा, और बाद में उसी से मालती का जन्म हुआ । मरने के पहले अपने एक मित्र को तुम दोनों को सौंप गये । तुम्हारी मा उन्हें भैया कहती थी, इसी लिए वे तुम्हारे मामा के नाम से मशहूर थे ।”

केशव ने थोड़ा उत्तेजित होकर कहा, “तो कृपाशंकर ने क्या कहा कि हम इसी लिए शादी न करेंगे ?”

“हाँ, और रास्ता ही क्या था । समाज में रहना है, तो समाज को मानकर चलना पड़ेगा ।”

“और समाज को मानने के लिए वह मालती से विवाह न करेगा ।”

“तो और क्या ! समाज में अब मालती का स्थान कहाँ ?”

अनन्त की बात सुनकर केशव कुर्सी से उठ पड़ा । उसकी आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगी । उसने कहा, “तो इसका अर्थ यह हुआ कि तुम्हारे घर में भी मालती को स्थान नहीं । लेकिन भैया, यह आसान नहीं । घर के बीच में दीवाल खिच जायगी । एक तरफ़ तुम रहना समाज की नाक बनकर, और एक तरफ़ मैं रहूँगा मालती को लेकर ।”

अनन्त ने दुःखित होकर कहा, “केशव क्या मेरे कहने का यह अर्थ है । तुम्हारा नाराज होना बेजा है ।”

केशव ने विरक्त होकर कहा, “मैं नाराज भी नहीं होता, और तुम्हारे सड़े समाज के विज्ञान पर लेक्चर भी सुनना नहीं चाहता। मुझे जो जी में आयेगा वही करूँगा। मैं तो चला।”

“लेकिन देवर”, रामकली ने सजल नेत्र होकर कहा, “इसमें तो नाराज होने की बात नहीं। समाज में जो चलता आया है, वही तो होगा। यह तो अपना अपना भाग्य है। मालती के भाग्य को तुम क्या करोगे। क्या मुझे मालती की कलक नहीं?”

“भाभी, समाज में जो चलता आया है, उसे छोड़ो। भला बताओ जैसा तुम कहती थीं, और भैया भी कहते थे, यदि मालती से मेरा विवाह हो गया होता, और आज यह बात मालूम होती तो?”

“लेकिन जानकर तो माछी नहीं खाई जाती देवर!”

“तो तुम अपनी नाक पर माछी न बैठाना, लेकिन मैं तो मालती से विवाह करूँगा।” इसके आगे थोड़ा रुककर केशव ने फिर कहा, “और तुम चाहना भाभी तो घर में रहने देना, न चाहना तो दुनिया पड़ी है।”

“देवर, ज्यादा क्रोध न करो। यह ऐसी बात नहीं कि गरम होने से काम चले। थोड़ा ठण्डे हो, दो दिन बीतने दो, फिर तुम खुद सोचोगे।” इसके बाद एक ठण्डी साँस लेकर रामकली ने कहा, “हम तो आज किसी के आगे मुँह दिखाने लायक न रहे। आँगन भर औरतें बैठी हैं। कौन-सा मुँह लेकर उनके पास जाऊँ। कैसे कहूँ बारात न आयेगी।” इतना कहते-कहते उसकी आँखों पर बादलों से मँडराते आँसू भर, भरकर गिरने लगे।

केशव का हृदय भी इस आसन्न संकट को सोचकर विकल हो उठा। वह धीरे-धीरे कमरे से बाहर चला गया।

अनन्त ने रामकली की ओर शून्य दृष्टि डालते हुए कहा, “तुम जाकर कह दो बारात न आयेगी।” रामकली यह सुनकर विचलित हो उठी। उसे कोई रास्ता ही न सूझता था। चढ़े भाँड़े उतारने थे। वह धीरे-धीरे कमरे से बाहर हुई लेकिन उसे पता न था कि वह कहाँ जा रही है, वह स्वयं भी कुछ है, या कोई चलती-फिरती प्रतिमा है, जो

किसी डोर के सहारे चली जा रही है। और अनन्त उसी कमरे में नीरव, निस्तब्ध बैठा रहा। उसे ऐसा जान पड़ा मानो वह किसी अन्ध-कार गर्त में गिरता जा रहा है, और तल का अब तक पता नहीं। एक महाशून्य में मानो विलीन हुआ जा रहा है।

(३०)

केशव को जब से रात में अनन्त ने बतलाया कि मालती की मा विधवा अब भी चकले में है, तब से उसका मन सारी रात विकल रहा। उसकी आँखों में नींद नहीं। वह करवटें बदलता, और कुछ अजीब उधेड़बुन में रहा। “विधवा अब भी चकले में है, लेकिन इससे क्या! इससे मालती कुछ अपवित्र थोड़े ही हो जाती है। और उस विधवा का ही क्या क्रूसूर। हमारा समाज जिस तरह बना है, और जिस तरह चल रहा है, वहाँ अनाथ विधवाओं के लिए और कौन-सा द्वार खुला है। पुरुष पहले तो खुद उन्हें गिरायेँ, फिर इतना साहस नहीं कि उन्हें झुलकर अपना सकें। यह चकले आखिर आबाद करता कौन है? हमारा समाज ही तो।” फिर सोचा, “लेकिन यही क्या पता कि वह औरत जो चकले में है, वह मालती की मा है। दुनिया है, तिल को ताड़ बनाती है। और यह हमारा कान्यकुब्ज-समाज छिप-छिप के होटलों में अण्डे तोड़ना, प्याले ढालना, लेकिन सबके सामने बनना बीसों विस्वा। बिलकुल शुद्ध धर्मात्मा। दूसरे की फूली को देखना, लेकिन अपना ‘टेंट’ न निहारना। और अच्छा मान लिया वह औरत मालती की मा ही है, तो इससे क्या?” लेकिन इतने में विचारों ने पलटा खाय़ा, “अगर वह सच में मालती की मा हुई, और मैंने मालती से विवाह किया, तो यह समाज के पंडे, ये धर्मध्वजी, क्या चुप बैठे रहेंगे? यदि ये उसे यही घर में मेरी ही आँखों के सामने लाकर खड़ी करें? मैं तो संसार में मुँह दिखाने लायक न रहूँगा। अपने ही मुँह बिचकायेंगे। भैया और भाभी तो पहले ही से विरुद्ध हैं, फिर तो कृष्णा और दूसरे मित्र भी किनारा खींच लेंगे।” लेकिन इतने में केशव के विचार फिर बदले, उसने अपनी कमजोरी को धिक्कारते हुए कहा, “ये हैं पुरातन संस्कार, जो

छोड़ने से भी नहीं छूटते, चुपके चोर की तरह घुस आते हैं। माना कि वह मालती की माँ है, और वेश्यावृत्ति करती है। समाजवाले उसे लाकर मेरे सामने खड़ी करेंगे, मेरी बेइज्जती कराने के लिए, दुनिया की नज़रों में गिराने के लिए, लेकिन आखिर यह नीति-शास्त्र कि वेश्या की पुत्री से विवाह न करो, विधवा की पुत्री से विवाह न करो, बनाया किसने, इसी पाखण्डी समाज ने तो ? यदि इनके साथ विवाह न हो, तो इनकी गति क्या होगी ? यही न कि पीढ़ी पर पीढ़ी वेश्यावृत्ति होती जायेंगी, चकले बढ़ेंगे, पापाचार बढ़ेगा।” आखिर केशव के विचारों की सारी अस्पष्टता दूर हो गई, और उसने अपने अन्दर एक प्रकाशमात्र दृढ़ता का अनुभव किया। लेकिन साथ ही यह भी तय किया कि कम से कम इतना तो पता लगाना ही चाहिए कि इसमें सच्चाई कहाँ तक है, और सवेरे ही इसके लिए जाने का उसने निश्चय किया। धीरे-धीरे उसे नींद आगई और जब जागा, तो देखा, कुछ दिन चढ़ आया है। वह जल्दी-जल्दी चारपाई से उठा, हाथ-मुँह धोकर जाने को तैयार हुआ।

घर से निकलकर केशव अपने एक मित्र विपिन की खोज में चला। विपिन स्कूल में बराबर और कालेज में दो साल तक केशव का सह-पाठी था, और कुछ अन्तरंग मित्र भी था। इसके बाद अचानक उसने कालेज छोड़ दिया और आर्ट स्कूल में चित्रकला सीखने लगा। लेकिन चित्रकला के उत्कर्ष के लिए आर्ट स्कूल के निर्जीव माडलों से तृप्त न होकर जब वह सजीव माडलों के फेर में पड़ा, तो केशव के साथ उसकी आमदरपत्त बहुत कुछ कम हो गई, लेकिन बिल्कुल टूट गई ही, यह बात वहीं। विपिन लज्जा और संकोच से केशव की आँख बचाकर चलता, लेकिन केशव अपने इस सौन्दर्य-पिपासु पथभ्रष्ट मित्र की सौन्दर्य-लालसा कुछ कम करने के उद्देश्य से बीच-बीच में काफ़ी गड़बड़ मचाता। लेकिन अन्त में जब देखा गया कि विपिन ने आर्ट स्कूल का शिक्षा-मन्दिर बिल्कुल छोड़कर माडल-मन्दिर में ही आश्रय ग्रहण किया है, तो केशव ने निराश होकर उसका पल्ला छोड़ दिया।

रास्ते में जाते-जाते केशव को अपना मन बहुत कुछ हलका मालूम

हुआ। उसे ऐसा लगा जैसे पाप समाप्त हो गया हो, और अब प्रायश्चित्त हो रहा हो और अदूर भविष्यत् में जिस दिन वेदमंत्रों के बीच उसका यह प्रायश्चित्त पूर्ण होगा, उस दिन का पूर्व कल्पना-चित्र बनाते बनाते उसका मन जैसे हवा में उड़ने लगा। बहुत दिनों का एक स्नेह-मंडित, अश्रु-सजल, अव्यक्त कातर मुख उसकी अधर्मुंदी आँखों की काली पुतलियों पर मानो सलज्ज तृप्त प्रिया के मधुर हास्य के रूप में झलकने लगा। वर्षा के बाद धूप की भाँति, आँसुओं के बाद हँसी की भाँति यह मधुर तथा करुण कल्पना उसके व्यथित चित्त को धीरे-धीरे मुग्ध करने लगी।

विपिन के दरवाजे पर पहुँचकर केशव ने भीतर समाचार भेजवाया। विपिन अभी सोकर उठा था, हाथ-मुँह धोकर बाल काढ़ रहा था, इतने में समाचार मिला कि कोई बाहर बुला रहा है, वह जल्दी-जल्दी बाहर आया। वहाँ केशव को देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

“रास्ता भूल गये न क्या?”

केशव ने मुसकराते हुए कहा, “रास्ता भूला नहीं, बल्कि भूले रास्ते पर हूँ। मुझे इस वक्त चौक के एक मकान में जाना है। तुम उस रास्ते के राही हो, इसलिए तुम्हें साथी बनाने के लिए आया हूँ। चलो, और देरी मत करो।”

यह बात सोलहो आने मजाक है, इसमें विपिन को थोड़ा भी सन्देह न रहा। उसने हँसते हुए कहा, “क्यों सवेरे-सवेरे चौक को उद्धार करोगे न क्या? यह भी तुम्हारे आश्रम का एक उद्देश्य है क्या? लेकिन जगह तो ठीक नहीं। तसवीर लेने के लिए जाने लायक भी नहीं, और नीति-प्रचार करने के लिए जाने लायक भी नहीं।

लेकिन परिहास की भंगी त्यागकर केशव ने जब आग्रहपूर्वक दुबारा कहा, तो विपिन विस्फारित नेत्रों से ताकता रह गया।

केशव ने व्यस्त होकर कहा, ‘चलो, चलो, देर करने के लिए मेरे पास वक्त नहीं।’

“चौक में किसके यहाँ?”

पाकेट से एक कागज़ का टुकड़ा निकालकर केशव ने कहा, “जावत्री उर्फ़ छोटी रानी के यहाँ।”

“नम्बर क्या ?”

“मालूम नहीं। यह मालूम होने पर तुम्हारे पास क्यों आता ?”

थोड़ा अड़ते हुए विपिन ने पूछा, “क्या जरूरत है ?”

“यह न बताऊँगा। मुझसे थोड़ा जान सकोगे, उसके आगे मत पूछो।”

केशव की बातचीत का ढंग देखकर विपिन को और कुछ पूछने का साहस न हुआ। उसने कहा, “चलो, खोजे देता हूँ।”

चौक पहुँचकर एक पानवाले की दुकान के सामने गाड़ी खड़ी कराकर विपिन ने पानवाले से कहा, “नीलू को तो ज़रा बुला दे।”

तुरन्त नीलू यानी नीलरतन आकर उपस्थित हुआ। वह जाति का है कहार, और पेशा है दलाली। विपिन को देखकर आदर के साथ प्रणाम करके कहा, “क्या बाबू, क्या हुकुम है ?”

विपिन ने कहा, “हाँ रे नीलू, यहाँ जावत्री कहाँ रहती है, जानता है ?”

“कौन छोटी रानी बीबी ?”

“हाँ !”

“चलिए, ले चलूँ।” इसके बाद केशव की ओर देखकर धीरे से कहा, “मेरी फ़ीस ?”

विपिन ने धमकाकर कहा, “चल गधे, अभी सब होगा।”

बात समझकर केशव ने पाकेट से एक रुपया निकालकर विपिन को दिया।

एक दोतल्ला मकान के सामने गाड़ी रोकवाकर नीलू ने कहा, “आइए।”

विपिन ने कहा, “तू जाकर देख आ, और अगर कोई आदमी हो, तो बता आ।”

नीलू लौटकर आया, और कहा—“छोटी रानी आप लोगों को बुलाती हैं। कोठे पर कोई नहीं है।”

केशव गाड़ी से उतरा, उसके पीछे विपिन भी उतर रहा था। केशव ने रोककर कहा, “नहीं, तुम गाड़ी में ही बैठे रहो। मैं अकेला

जाऊँगा।” कहकर नीलू के साथ घर के भीतर घुसा, और सीढ़ियों से होकर ऊपर गया। एक जगमगाते कमरे के दरवाजे पर पहुँचकर नीलू ने कहा, “बीबी, बाबू आये हैं।”

मुसज्जिता जावत्री ने दरवाजे के पास आकर बुलाया, “तशरीफ़ लाइए।”

जावत्री को देखकर केशव काँप उठा। उसका मुँह पीला पड़ गया। मुँह से एक शब्द भी न निकला। यह मालती की पन्द्रह वर्ष बाद की तसवीर, या मालती इसकी पन्द्रह वर्ष पहले की तसवीर! केशव प्रमाण प्राप्त करने आया था, और प्रमाण सशरीर सामने खड़ा था। इसकी चितवन में मालती, हँसी में मालती, गठन में मालती, भाव-भंगी में मालती! और कोई बात न पूछने से भी हानि न थी—सिर्फ़ एक बात यही जानने की थी कि मालती के पिता के साथ इसका वास्तविक सम्बन्ध क्या था, और किस प्रकार का था, जावत्री उसकी विवाहिता पत्नी थी, या रखेली।

केशव को विस्मय-विमूढ़ देखकर जावत्री ने हँसकर कहा, “दरवाजे पर क्यों खड़े हैं। भीतर आकर तशरीफ़ रखिए।”

जावत्री की बात पर संयत होकर केशव ने कमरे में प्रवेश किया और कहा, “मैं आपसे दो-चार बातें पूछने आया हूँ—शायद आधा घण्टे से अधिक समय न लगेगा, इसके लिए आप क्या लेंगी?”

जावत्री ने थोड़ी देर तक सोचकर हँसकर कहा, “इससे पहले बात करने के लिए मैंने कभी पैसा नहीं लिया। गाना सुनाकर पैसा लेती हूँ। आप गाना सुनना चाहते, तो मैं अन्दाज़ बता सकती थी। आप जो पूछना चाहते हैं, पूछिए, पैसा देना नहीं होगा।”

“समय का मूल्य सबका है। मैं इस समय यह देता हूँ। बाद में यदि जरूरत हुई, तो और दूँगा”, कहकर केशव ने पाकेट से दस-दस के दो नोट निकालकर जावत्री के सामने रख दिये।

रुपयों के खेल जावत्री के लिए नया न था। पान मँगवाने के लिए एक सौ का नोट भी उसके हाथ में पड़ा है, लेकिन बात पूछने के लिए इस तरह किसी ने रुपये नहीं दाखिल किये। इसलिए उसे विशेष रूप

से कुतूहल हुआ, और उसने पूछा, “कहिए, आप क्या पूछना चाहते हैं।”

भूमिका न बाँधकर केशव ने पाकेट से एक फ़ोटो निकाला, और जावत्री के सामने रखकर पूछा, “इसे आप पहचानती हैं?”

जावत्री ने थोड़ी देर तक फ़ोटो को मनोयोगपूर्वक देखा, इसके बाद कुछ अस्फुट शब्द कहे। इसके बाद बहुत ही अधिक व्यग्र होकर कहने लगी, “यह तो मेरी बेटाई मालती है। आप इसे कैसे जानते हैं? वह कहाँ है? कैसी है? बतलाइए, सब बतलाइए?”

फ़ोटो को पाकेट में रखकर केशव ने कहा, “उसके सम्बन्ध में मुझे कुछ बातें जाननी हैं। जब तक वे बातें नहीं जान जाता, तब तक और कुछ आपको न बताऊँगा। मैं खबर लेने आया हूँ, देने नहीं।”

जावत्री ने प्रार्थना करते हुए कहा, “तो आप क्या पूछना चाहते हैं, पूछिए। लेकिन आपके हाथ जोड़ती हूँ, उसकी सारी बात मुझे बतायें बिना जाइएगा नहीं। क्या वह आपके ही पास रहती है?”

जावत्री के प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर केशव ने पूछा, “मालती की किसी बहन को आप जानती हैं?”

व्यग्र होकर जावत्री ने कहा, “हाँ, उसका नाम था रामकली। लेकिन वह मेरी लड़की नहीं है।”

“तो वह किसकी लड़की है?”

थोड़ा हिचकिचाते हुए जावत्री ने कहा, “रामकली है पंडित रामरतन की स्त्री की लड़की! मैंने उसे पाला-पोसा, और पेटजायी लड़की की ही तरह उसे प्यार करती थी। क्या उसका भी हाल आप जानते हैं? बतलाइए, दया करके बतलाइए! अब और धीरज नहीं धर पाती!”

जावत्री की इस अधीरता पर कुछ भी ध्यान न देकर केशव ने पूछा, “रामकली के पिता पंडित रामरतन ही क्या मालती के भी पिता थे?”

“हाँ!”

थोड़ा सोचकर केशव ने कहा, “मैं सिर्फ एक बात आपसे और पूछूंगा। पंडित रामरतन के साथ आपका क्या सम्बन्ध था?”

जावत्री का मुँह लाल हो गया—केशव के प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर वह चुप बैठी रही।

दृढ़ स्वर में केशव ने कहा, “यही बात मुझे खासतौर से जानने की है। बतलाइए, उनके साथ आपका क्या सम्बन्ध था?”

उसी प्रकार आँखें भुकाये कम्पित स्वर में जावत्री ने कहा, “मैं उनकी स्त्री न थी।”

केशव ने कहा, “अब मुझे और कुछ नहीं पूछना। अब मैं चला। आपको और कुछ देना होगा क्या?”

जावत्री केशव का रास्ता रोककर खड़ी हो गई, और कातर स्वर में कहा, “मुझसे सब बातें जानकर मुझे कुछ भी न बताकर चले जाने से आपका भला न होगा। मालती का हाल जानने की आशा से ही मैंने सब कुछ बतलाया है—यह न होने से कभी न कहती। मैं कितनी ही पापिनी क्यों न हूँ—मालती है तो मेरे पेट की सन्तान!”

थोड़ा सोचकर केशव ने कहा, “मालती की बात आप क्या जानना चाहती हैं? मालती मझे में है, पढ़ना-लिखना सीखा है। उसके लिए आपको चिन्ता न करनी चाहिए।”

जावत्री ने व्यग्र-भाव से पूछा, “वह रहती कहाँ है? भले घर में?”

“हाँ।”

रुकी हुई साँस को धीरे-धीरे छोड़कर जावत्री ने पूछा, “आपके ही घर में रहती है क्या?”

केशव ने कहा, “हाँ, हमारे ही घर में है।”

हठात् जावत्री के मन में न जाने कैसी उत्सुकता पैदा हुई, उसने जल्दी-जल्दी पूछा, “मालती का तो जरूर विवाह हो गया होगा—आप उसके कौन हैं?”

जावत्री के इस प्रश्न का क्या उत्तर दे, समझ न पाकर केशव चुप हो गया। मालती का विवाह होना जिस तरह एक अनिश्चित बात

ह, उसी तरह मालती के साथ उसका सम्बन्ध भी अनिर्दिष्ट ! इनमें से किसी का भी सहसा उत्तर नहीं दिया जा सकता था ।

केशव को विमूढ़ देखकर जावत्री अचानक पीली पड़ गई । जल्दी-जल्दी कन्धे पर पड़े वस्त्र को मस्तक पर उठाते-उठाते लजाते हुए लड़-खड़ाते शब्दों में कहा, “क्या आप—क्या तुम उसके स्वामी हो ? तो क्या तुम मेरे—” वाक्य को समाप्त करने के पहले ही जावत्री काँप गई, और रुक गई । अपनी घृणित-हीनता को यादकर केशव से अपना नाता जोड़ने का उसे साहस न हुआ ।

इस बार केशव ने कहा—“नहीं, मैं अब भी आपका उस प्रकार कोई नहीं । लेकिन जिस दिन हूँगा, उस दिन मैं आऊँगा तुमको यहाँ से ले जाने के लिए । अब मैं चला । इस वक्त मेरे पास और समय नहीं ।”

जावत्री की आँखों से आँसू बहकर कपोलों पर टुलक रहे थे । केशव की ओर सजल कातर दृष्टि गड़ाकर उसने कहा—“जाओ, तुम्हारे आने की प्रतीक्षा मैं यहाँ मैं और कई दिन रहूँगी, लेकिन ले मुझे कहीं न जाना । जहाँ जाना है, यदि भगवान् ने दया की तो मैं खुद जाऊँगी; लेकिन जाने के पहले बड़ी इच्छा है कि मालती को एकबार देख लूँ । अगर दया करके दिखा दो !”

केशव ने कहा—“अच्छा, आपको दिखा दूँगा ।”

जावत्री ने व्यग्र होकर कहा—“लेकिन वह मुझे न देख सके, काशी जी में विश्वनाथ जी के मन्दिर के पास मुझको बैठाकर तुम दोनों प्रदक्षिणा करो, और मैं आँख भरकर देखूँ । वह जिससे जान न सके कि उसकी पापिनी मा अब भी बची है । उसको छोड़ने में पहले बहुत कष्ट हुआ था । लेकिन अब देखती हूँ, बड़ा अच्छा भाग्य था जो छोड़ आई, नहीं तो गले में बाँधे रखने पर उसको भी तो पाप में डुबाये रखती !”

पाकेट से घड़ी निकालकर केशव ने देखी और व्यस्त होकर कहा—“और देर मैं नहीं कर सकता । अब चला ।”

जावत्री ने दस-दस के दोनों नोटों की ओर अँगुली से निर्देश करते हुए कहा,—“इनको तुम लेते जाओ ।”

केशव ने थोड़ी देर तक सोचकर नोटों को उठाकर पाकेट में रख लिया, और कुछ बात न कहकर चुपचाप चल दिया।

अपने माथे को दीवाल के सहारे टेककर आँखें बन्द किये जावत्री कुछ देर तक काठ की तरह खड़ी रही। इसके बाद कमरे का दरवाजा बन्द करके बिछौने पर आकर लेट गई। आषाढ़ के महीने में सूखी नदी में भी जिस प्रकार जल बहने लगता है, उसी प्रकार आज एक युग के बाद उसके सूखे नारीहृदय में मातृत्व चारों ओर से प्लावित होने लगा।

वहाँ से आकर केशव ने विपिन को उसके घर में छोड़ा और अपने घर आते समय सोचा जरा कृपाशंकर से भी मिल लें। कृपाशंकर के दरवाजे पर आकर गाड़ी रुकी। एक नौकर को देखकर केशव ने पूछा—“बाबू हैं?”

नौकर ने कहा—“बाबू भीतर हैं हुजूर!”

“जरा कहो, एक आदमी मिलने के लिए आया है।”

नौकर भीतर गया, और कुछ ही क्षणों में कृपाशंकर बाहर आया। केशव को सामने देखकर कृपाशंकर पहले तो ठिठक गया। उसके मन में एक ही क्षण में कई आशंकायें आईं। केशव इस वक्त न जाने क्या कहे। शायद भगड़ा करे। आगे बढ़कर केशव को नमस्कार किया, और बैठकखाने में ले गया।

दो कुर्सियों पर आमने-सामने दोनों बैठ गये, लेकिन किसी ने एक-दूसरे से कुछ भी न पूछा। कृपाशंकर ने यह तक न पूछा कि कैसे आये।

आखिर केशव ने खुद ही मौन भंग किया। उसने कहा—“कृपा, मैं आज तुम्हारे पास आया, तुम्हारी समाज-निष्ठा पर तुम्हारी प्रशंसा करने के लिए।”

कृपाशंकर केशव के व्यंग्य को समझ गया। उसने भेंपते हुए कहा—“केशव, तुम मेरे हो, और तुम्हें सब कुछ कहने का अधिकार है। मैं तुम्हारी बात पर चूँ तक न करूँगा, और न इस काण्ड से तुम्हारे प्रति मेरे स्नेह में ही कोई अन्तर पड़ा है, लेकिन तुम जरा सोचो आखिर करता भी तो क्या? समाज है मनुष्य का वस्त्र, कोई बिना वस्त्र के रह नहीं सकता।”

केशव को जहाँ कृपाशंकर के तर्क पर उत्तेजित होना चाहिए था, वहाँ उसने मुसकराते हुए कहा—“हाँ, लेकिन जले वह सोना जिससे कान फटे। गर्मी में कोई जाड़े का लबादा ओढ़कर नहीं चलता। अगर हम नौजवान ही समाज की इस अनीति के खिलाफ़ न उठ सके, तो आखिर कुछ अनुमान है कब तक यह चलती रहेगी। भला मालती का इसमें क्या दोष, और उस विधवा बेचारी का भी कितना दोष था, कहा नहीं जा सकता।”

“केशव तुम्हारे तर्क से मैं सहमत हूँ, लेकिन समाज ने जो लीक बना दी है—” आगे कृपाशंकर कुछ कहने न पाया था कि केशव ने बीच में ही उत्तेजित होकर कहा—“तो बस उसी लीक पर चलते जाओ, समाज रसातल को भले चला जाय लेकिन लीक न टूटने पाये। कृपा, यही तो पूछता हूँ कि आखिर ये लीक तोड़नेवाले क्या कहीं स्वर्ग के देवता आयेंगे। आज हमारा समाज जिन रुढ़ियों के नागपाश में जकड़ा है, उससे मुक्ति का एक ही उपाय है कि युवक-समुदाय उठे, तड़ातड़ शृंखलायें तोड़े, और जर्जर समाज के धूरे से उठाकर मानव देव की प्रतिष्ठा स्वस्थ आदर्श के मन्दिर में करे।”

“लेकिन तब भी मन्दिर तो बनाना ही होगा, और जहाँ मन्दिर बनेगा, वहाँ उसकी रूप-रेखा होगी, सीमा होगी।”

“इसमें शक नहीं,” केशव ने कहा—“मैं यह तो कहता नहीं कि मानव सारे बन्धनों को तोड़कर बनैले पशु की भाँति घूमे। मेरा कहना है मानव उस वस्त्र को उतार फेंके जो चारों ओर से उसके शरीर को जकड़े है, गला घुट रहा है, और उसकी जगह नया वस्त्र धारण करे।”

“और इसकी क्या गारण्टी कि जो नया वस्त्र पहना जा रहा है, वह फ़िट ही होगा?” कृपाशंकर ने किंचित् मुसकराते हुए कहा।

“इसकी गारण्टी करेगा वह मानव जो कपड़े को पहनेगा। एक वस्त्र चिरकाल तक पहना नहीं जा सकता। समाज प्रवाह की भाँति है, उसमें सदैव नई-नई हिलोरें उठेंगी, और जब उसके प्रवाह को रोक दिया जायगा, तभी सड़ायँद पैदा होगी।”

कृपाशंकर चुप था। केशव ने कहा—“लेकिन इन शृंखलाओं को

तुम जैसे कमजोर, समाज की आँखें देखनेवाले नहीं तोड़ सकते। इनको तोड़ेंगे वे जिनका डेढ़ हाथ का कलेजा हो, जिनमें नव-निर्माण की अभिलाषा हो, जो नीड़ से बाहर मुक्त आकाश में उड़ने का साहस रखते हों।”

कृपाशंकर केशव की इन बातों को विमूढ़-सा चुपचाप सुन रहा था। उसे समझ में न आता था कि आखिर वह उत्तर क्या दे।

केशव ने फिर कहा—“और कृपा, मैंने निश्चय कर लिया है कि मालती के साथ मैं विवाह करूँगा, चाहे इसके लिए मुझे सारे संसार को छोड़ना पड़े।”

“और अनन्त भैया?”

“भैया को पहले तो राज़ी करने की कोशिश करूँगा, लेकिन अगर राज़ी न हुए, तो भी मैं करूँगा।” केशव ने दृढ़तापूर्वक कहा, और हँसते हुए कहा—“भला बताओ, भात खाने आओगे। भात न सही, पक्की में आओगे?”

कृपाशंकर के मर्म में जैसे आघात हुआ हो। वह सोच रहा था कि क्या उत्तर दे, इतने में नौकर ने आकर पान दिये। कृपा ने पानों की तश्तरी केशव की तरफ़ बढ़ाते हुए कहा—“लो पान खाओ।” इसके बाद खिसियाना-सा मुँह बनाकर एक सूखी हँसी के साथ कहा—“जब भात खाने का मौका आयेगा, तब तक हो सकता है, मैं भी कुछ साहस बटोर लूँ।”

केशव ने मुसकराते हुए एक ओर व्यंग्य कसा—“चुपके से खा जाना।”

कृपाशंकर भी हँसने लगा। केशव उठ खड़ा हुआ—“अच्छा अब चला। बहुत काम है।”

(३१)

बारात न आने और मालती का विवाह रुक जाने से पास-पड़ोस में खासकर कान्यकुब्जों में नाना प्रकार की बातें होने लगीं। जिस घर में चार स्त्रियाँ एकत्र होतीं, किसी न किसी तरह का अनुमान लगातीं। कोई कहती “दायज को लेकर भगड़ा हो गया है। वह कहते थे दो हजार नक़द पहले दे जाओ, और यह देने को राज़ी

नहीं हुए।” कोई कहती, “लड़की के मा-बाप नहीं। गोत का पता नहीं। इसी से लड़के के सम्बन्धी भात खाने को राजी नहीं हुए।” लेकिन धीरे-धीरे यह सब आई-गई बातें हो गईं। इधर केशव के घर में सबको चिन्ता थी कि मालती सिर पीटेगी। सारा घर क्रन्दन से भरा रहेगा। लेकिन ऐसा कुछ भी न हुआ। मालती दूसरे ही दिन से सबसे हंसकर बोलती। उसके व्यवहार में किसी प्रकार का परिवर्तन दिखलाई न पड़ता था।

केशव ने इस बीच एकबार मालती को समझाया। उसे अपना मन सुस्थ करने को कहा, और साथ ही यह भी जाहिर किया कि मालती उसके साथ विवाह करने को राजी हो जाय। लेकिन मालती का एक ही उत्तर रहा—“केशव भैया, हिन्दू नारी का दो बार भी विवाह कहीं हुआ है?” केशव ने बहुतेरा समझाया, —“जब तक कन्यादान न हो, भाँवरें न पड़ें, तब तक विवाह कैसा!” लेकिन मालती ने एक न मुनी।

इधर केशव प्रायः चार दिन से घर पर न था। बिना कहे कहीं चला गया था, इससे सबको बहुत चिन्ता थी। रामकली तो दोनों पहर ठाकुर-द्वारे में घंटों प्रार्थना करती, तैत्तिरीय कोटि देवता मनाती थी। आज केशव के आ जाने से सबके जी में जी हुआ।

रात में अपने कमरे में बिस्तरे पर बैठी मालती सोच रही थी ‘केशव आया है, जाने चार दिन कहाँ रहा। फिर वही प्रसंग छिड़ेगा।’ वह कुछ तय न कर पा रही थी कि आखिर क्या उत्तर देगी। लेकिन केशव की बात को स्वीकार तो कभी न करेगी, इतना निश्चित था। जब मालती इन विचारों की हिलोरी में तिर रही थी, केशव की आवाज़ दरवाज़े पर सुनाई पड़ी। क्षण में केशव कमरे में दाखिल हुआ।

जल्दी-जल्दी बिछौने से उठकर मालती ने एक कुर्सी सामने लाकर रखी, और कहा—“इतने दिन कहाँ थे केशव भैया?”

केशव ने कहा—“काशी गया था।”

मालती ने उस बात को वही समाप्त करके प्रसंग बदलकर कहा—“जहाँ भी जाते—कहकर जाने से घर के लोग तो इस तरह दुःखी ब होते।”

“कौन दुःखी हुआ है मालती ? तुम ?”

दूसरी ओर आँखें फेरकर मालती ने कहा—“दीदी ने तो रो-रोकर घर भर दिया।”

केशव ने भट्ट कहा—“और तुम सारा घर हँसी से गुंजा रही थीं। दीदी की बात तो दीदी से सुन आया, अब तुम अपनी तो बताओ ?”

मालती ने और कुछ भी न कहा। वह बातचीत को किसी भी तरह साधारण रीति से बाहर न ले जाना चाहती थी।

मालती को चुप देखकर केशव ने कहा—“यह कहने में भी तुम्हारी निष्ठा को बाधा पहुँचती है मालती ?”

मालती का मुँह पीला पड़ गया। काँपती हुई बाणी में कहा—“निष्ठा की बात कहके दिल्लगी न करो भैया !”

केशव ने कहा—“तुम कहती क्या हो मालती। यह सब भूल है ! तुम जानती हो इन सब बातों को सुनकर मुझे कैसी व्यथा होती है, और फिर भी तुम ऐसी ही बातें कहती हो। तुम्हारी प्रकृति भी कितनी निष्ठुर है मालती !” इसके बाद ही कीलित साँप की भाँति नम्र होकर कहा—“मैंने बहुत बड़ा अपराध किया है मालती—लेकिन क्या इसी लिए इतना कड़ा दण्ड दोगी ? इतने दुःख पर भी पाप का प्रायश्चित्त न हुआ ?”

मालती ने दँधे हुए गले से कहा—“तुम भी ठीक जानते हो भैया कि यह दण्ड और पाप की बातें कहने से मुझे कष्ट होता है, इसी से कहते हो। जिस तरह यह गलत है कि तुमने अपराध किया है, उसी प्रकार यह समझना भूल है कि मैं दण्ड देती हूँ।”

केशव ने कहा—“अच्छा पाप-पुण्य की बातें छोड़ो मालती, तुमने यह क्यों नहीं पूछा कि मैं काशी क्यों गया था।”

“जरूरत रही होगी, तब तो गये हो।”

केशव ने कहा—“जरूरत तो थी ही, और वह जरूरत पूरी हो गई मालती।” यह कहते-कहते केशव ने जेब से कुछ कागज़ निकाले—“देखो, यह काशी के पंडितों की व्यवस्था है कि कन्यादान के पहले विवाह नहीं माना जाता। फलदान, तेल चढ़ना इनका कुछ मूल्य नहीं। इसलि

तुम्हारा विवाह होने में किसी तरह की बाधा नहीं। अब मेरी प्रार्थना मंजूर तो है ?”

केशव की बात सुनकर मालती ने अपना मुँह दूसरी ओर को फेर लिया। उसके मन में जो आशंका हो रही थी, वही सच निकली।

मालती को चुप देखकर केशव ने व्यग्र होकर कहा—‘तो मंजूर तो है ? मालती एक बार तो कह दो, और विश्वास न हो, तो यह सब खुद ही पढ़ो।’

इस बार मालती ने कहा—“मैं यह सब एक भी पढ़ना नहीं चाहती। इनका कुछ भी मूल्य नहीं, क्योंकि मेरे जन्म का हाल बतलाकर तुम इनमें से एक भी न पाते। इसके सिवा पैसों से खरीदी इस व्यवस्थाओं से अधिक आदर में करती हूँ तुम्हारे मत का। तुम यदि कहो मेरा विवाह हो सकता है, तो वही बहुत है। लेकिन—”

अधीर होकर केशव ने पूछा—“अब लेकिन क्या ?”

मालती ने अपनी शान्त करुण-दृष्टि केशव की ओर डालकर आँखें नीची करके कहा—“कोई काम किया जा सकता है, इसी लिए तो नहीं किया जाता।”

“क्यों नहीं किया जा सकता ? इसका अर्थ यह हुआ कि एक आदमी को दुःखसागर से निकालना है, इसी लिए ऐसा नहीं हो सकता। इतनी निर्दयता।”

मालती ने निष्प्रभ मुख केशव की ओर किसी प्रकार उठाकर कहा—“निर्दयता नहीं केशव भैया ! इधर दो-तीन महीने से जैसा कष्ट मैंने सहा है, उसे ध्यान में रख यह है मेरी आजीवन की प्रतिज्ञा। तुम मुझ पर जैसा स्नेह, और दया करते हो, वैसी ही करते रहो। मैं तुम्हारी दया चाहती हूँ, इससे अधिक नहीं।”

“और मेरा प्रेम कुछ नहीं। उसे इसी तरह पद-दलित करोगी ?”

यह बात सुनकर मालती ने आँखें मूँद लीं, कहा—“जो मन में आये, वही मत कहो भैया। सुनने से भी पाप। तुम प्रेम कहके जो देना चाहते हो, वह है तुम्हारी दया, तुम्हारा आत्मोत्सर्ग। तुम्हारी मुझ पर दया है, फिर भी मैं निर्दय—”

केशव ने रोककर कहा—“एक मालती एक। मैं जानता हूँ, बातें करना तू खूब जानती है। लेकिन दया तुझमें थोड़ी भी नहीं। तू तो है पत्थर। तेरे क्या हृदय है? कैसे बतलाऊँ कि मैं प्रेम में पागल हूँ। प्रेम का पता पहले-पहल मुझे लगा जिस दिन तेरी शादी तय हुई। तू विश्वास न करेगी, लेकिन तेरे विवाह के दिन मैं जैसे निकट आते थे, मैं विकल हो रहा था। और जिस दिन सुना कृपा विवाह न करेगा, क्रोध के साथ ही आशा की एक धुंधली किरण भी फूटी थी।”

केशव की बात सुनकर मालती सिहर उठी। उसमें बोलने की शक्ति न रही, फिर भी उसने कहा—“यह अच्छा नहीं भैया! इस तरह लुभाना ठीक नहीं। मैं साधारण लड़की कब तक सँभलूँगी।”

केशव हँस पड़ा—“तुम साधारण लड़की! तुमसे कठोर लड़की और नहीं। तुममें ममता नहीं, दया नहीं, क्षमा नहीं, फिर भी साधारण लड़की!”

मालती ने सजल होकर कहा—“यह भी कम नहीं केशव भैया, यह भी कम नहीं।” थोड़ी देर रुककर—“जन्म की बात मालूम हो गई नहीं दो—” मालती का गला रुँध गया।

“नहीं तो क्या?”

“हटाओ, कहने से क्या?” मन ही मन कहा—“द्विचारिणी होना पड़ता।”

“केशव भैया?”

“क्या?”

“तुम दुलारी की बात पर भी कभी विचार करते हो?”

केशव का मुँह पीला पड़ गया, कहा—“दुलारी की कौन-सी बात?”

“तुमने दुलारी से विवाह करने की प्रतिज्ञा की है, और दुलारी पति माने घर में निश्चिन्त बैठी है।”

दुलारी को लेकर जो जटिलता पैदा हो गई है, उससे केशव परेशान है। उसने कहा—“दुलारी से विवाह करने की बात तो मैंने कही नहीं। मैंने तो सिर्फ यह कहा था कि उसका भार लिया।”

विस्मित होकर मालती ने कहा—“क्या कहते हो केशव भैया तुमने प्रतिज्ञा नहीं की? और जो मैं वहीं थी। मैंने सुना।”

केशव के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। लेकिन उसने संभलकर कहा—“तुमने गलत समझा मालती, मैंने तो कहा था उसका भार लिया। इसका यह अर्थ नहीं कि मैं उसके साथ विवाह करूँगा।”

मालती ने कहा—“बात तो याद नहीं लेकिन तुमने जो कहा है, सबने समझा है।”

“सबने गलत समझा है। सब गलत समझें तो उसके लिए मैं जिम्मेदार नहीं।”

“तुम्ही हो जिम्मेदार भैया। दुलारी आज तक यही समझती है कि तुम्हारे साथ उसका विवाह होगा। उस बेचारी पर दया करो।”

केशव थोड़ी देर मालती की ओर देखता रहा, फिर दृढ़ किन्तु कातर होकर कहा—“मेरा जीवन कुछ नहीं। मैं सिर्फ हूँ दूसरों के लिए। मैं हूँ गाजर-मूली, रक्त-मांस तो मेरे हैं नहीं।”

केशव की कातरोकि मुनकर इस दुःख में भी मालती के ओठों पर हँसी की हलकी रेखा खिंच गई, उसने कहा—“केशव भैया, तुम लोग हो कठोर, शक्तिशाली, तुम यदि हमारी रक्षा न करोगे, तो हम दुर्बल बचेगी कैसे?”

“तुम दुर्बल? तुम वज्र से भी अधिक कठोर। तुममे माया-ममता कुछ नहीं।” कहते-कहते केशव कमरे से बाहर चला गया।

मालती के ओठों पर अब भी हँसी की वह क्षीण रेखा खिंची थी, लेकिन वर्षा में जैसे देखते सूर्य का धुंधला प्रकाश भी बादलों के आवरण में ढक जाता है, और भर-भरकर वर्षा होने लगती है, उसी प्रकार एक क्षण में हँसी विलीन हो गई, और आँखों से आँसू भरने लगे।

(३२)

मालती के कमरे से निकलकर केशव दुलारी की खोज में उसके कमरे की तरफ गया। केशव ने दरवाजे से पुकारा—“दुलारी?”

दुलारी बिछौने से उठ पड़ी। तब तक केशव ने अन्दर प्रवेश किया। एक कुर्सी पर बैठते हुए केशव ने कहा—“दुलारी आज तुमसे एक बहुत जरूरी बात करनी थी।”

“क्या ? बतलाइए।”

“तुम बैठ जाओ, तो कहूँ। बात लम्बी है, और तुम खड़ी कब तक रहोगी।”

दुलारी पहले हिचकिचाई, लेकिन फिर अपने बिस्तरे पर बैठ गई। केशव ने कहा—“मालती के सम्बन्ध में तुमसे कुछ सलाह करनी है। वह बेचारी इस तरह कब तक कुढ़ती रहेगी। उसके लिए कुछ करना तो चाहिए ?”

निःश्वास लेकर दुलारी ने कहा—“करना तो जरूरी है, लेकिन क्या किया जाय ?”

केशव ने कहा—“मालती का कन्यादान नहीं हुआ था। भाँवरें नहीं पड़ी थीं। ऐसी हालत में सिर्फ़ फलदान से तो विवाह हो न गया।”

दुलारी ने कहा—“कभी नहीं। चढ़े फलदान लौट आते हैं, दरवाजे से बारातें लौट जाती हैं। हाँ—” आगे जैसे दुलारी कुछ सोचने लगी हो।

“हाँ क्या दुलारी।”

“इस तरह बारातें लौट जाने पर समाज सोचने लगता है, क्यों ऐसा हुआ। कुछ खोट होगी।”

“हाँ, यही मैं भी सोचता हूँ। मालती का विवाह ठीक हो गया। बारात आने को थी, लेकिन न आई। क्यों नहीं आई। यह सब बातें हमारा खूँसट समाज जरूर सोचेगा। इसी लिए इनके जानते विवाह होना मुश्किल है, और यदि इन्हें छिपाया जाय, और विवाह कर दिया जाय, तब भी बाद में जाहिर होने पर अनर्थ हो सकता है।”

चिन्तित होकर दुलारी ने पूछा—“तो क्या करना होगा ?”

“मालती के लिए हमें कुछ त्याग करना पड़े, तो क्या यह उचित नहीं है दुलारी ?”

दुलारी का मुँह थोड़ा फीका पड़ गया। मृदु स्वर से कहा—
“उचित है।”

“यदि मैं मालती से विवाह करूँ, तो कैसा हो ? तब तो कुछ गड़बड़ न मचेगी ?”

यह बात सुनकर दुलारी का सिर चकराने लगा। उसकी आँखों के आगे अँधेरा-सा छा गया। वह संज्ञा-शून्य-सी होने लगी। उसके मुँह से एक शब्द भी न निकला।”

केशव ने स्नेहपूर्वक पूछा—“तुम्हारी सम्मति नहीं है क्या दुलारी ?”

इसका उत्तर न देकर दुलारी ने पूछा—“क्या मालती की सम्मति है ?”

केशव ने कहा—“ज़रा भी नहीं। लेकिन तुम उसे राजी नही करोगी दुलारी ?”

हँसे हुए स्वर में दुलारी ने कहा—“कहाँगी।”

“यदि तुम यह काम कर सको, तो तुमको बड़ा पुण्य होगा, दुलारी।”

दुलारी ने कहा—“मैं पुण्य के लिए नहीं, आप कहते हैं, इसलिए करूँगी।”

“सो क्या मैं जानता नहीं। मेरे कहने का मतलब यह कि यदि ऐसा कर सको, तो यह कितने बड़े पुण्य का काम होगा, दुलारी ! तुम जानती नहीं दुलारी, मालती मुझे कितना प्यार करती थी। मैंने उसके प्यार की उपेक्षा करके उसे कृपा के गले मढ़ना चाहा। आज यदि उस पाप का प्रायश्चित्त कर सकूँ, और तुमसे कुछ छिपाऊँगा नहीं दुलारी, मालती न मिलने से मुझे जीवन में सुख न मिलेगा।”

जिस तरह आपरेशन के समय रोगी का मुँह सफ़ेद पड़ जाता है, उसी तरह दुलारी का मुँह भी केशव की बातें सुनते-सुनते पीला पड़ गया। ऐसा लगता था मानो उसके हृदय की धड़कन बन्द होने को है, किसी तरह छाती थामकर उसने कहा—“आप जो कुछ कहेंगे, करूँगी।”

प्रसन्न होकर केशव ने कहा—“तुम्हें क्या आशीर्वाद दूँ, भगवान् तुम्हारा मंगल करें। लेकिन उसे राजी करना आसान नहीं—वह कहती क्या है कि तुम्हें बचित करके मुझसे विवाह न करेगी। यह क्या बात दुलारी ?”

थोड़ी देर चुप रहकर दुलारी ने कहा—“यह सब व्यर्थ की बात। मैं मालती को राजी करूँगी।”

दुलारी ने खुलकर कुछ न कहा, लेकिन केशव समझ गया, उसने कहा—“तुम्हारा क्या खयाल है दुलारी। क्या हम तुम किमी प्रकार वचन-बद्ध हैं?”

इस बार दुलारी ने निगाह नीची कर ली, और दूसरी ओर को देखने लगी। उसने कुछ भी उत्तर न दिया।

केशव ने कहा—“किसी किसी का खयाल है कि काका की मृत्यु-शय्या पर मैंने तुमसे विवाह करने की प्रतिज्ञा की थी। क्या तुम भी ऐसा ही सोचती हो दुलारी? यदि ऐसा हो, तो मैं तुमसे दो बातें कहना चाहता हूँ, पहले तो मैंने कहा था कि मैंने तुम्हारा सब भार लिया। दूसरे, उस प्रकार की प्रतिज्ञा करना मेरे लिए सम्भव ही न था। यदि ऐसी बात होती, तो मालती से विवाह क्यों न करता। इसके अलावा कृष्णचन्द्र तुमको बहुत प्यार करता है। मन ही मन ठीक किया था उसके साथ तुम्हारा विवाह ठीक करूँगा। काका की यदि ऐसी हालत होती कि सब बातें कही जा सकती, तो मैं उनसे कहता। इससे तुम समझ सकती हो कि तुम किसी बन्धन में नहीं हो। लोक-रीति और धर्म दोनों से कृष्णा के साथ तुम विवाह कर सकती हो। बल्कि मैं तो निस्संकोच यह कह सकता हूँ कि यदि तुम पर किसी तरह का बन्धन है, तो वह कृष्णा के साथ। प्रेम का यदि कोई बन्धन नहीं, तो संसार का बन्धन तो कोई चीज नहीं। और मुझे कुछ नहीं कहना। अब रात ज्यादा गई, तुम सोओ।”

केशव के चले जाने पर दुलारी कुछ क्षणों तक निश्चल खड़ी रही। इसके बाद पहले तो कुर्सी की तरफ लड़खड़ाने-सी लगी, फिर सिर थामकर बिछौने पर बैठ गई।

दूसरे दिन दोपहर के वक्त केशव रामकली के पास हाज़िर हुआ। कहा, “भाभी, तुम पर एक बड़े काम का भार दे रहा हूँ।”

यह काम मालती को विवाह के लिए राजी कराना, या कुछ इसी प्रकार का होगा, सोचकर रामकली चिन्तित हो गई, लेकिन केशव को हँसता देखकर उसे पूछने का साहस हुआ। “क्या काम है देवर?”

“इसी बैसाख में एक नहीं, एक जोड़ा विवाह का एक ही मुहूर्त में बन्दोबस्त करना होगा। कृष्णा और दुलारी का, और मालती का और मेरा।”

केशव की बात सुनकर रामकली ने कहा, “यदि ऐसा हो, तो इसमें ज्यादा प्रसन्नता किसमें है, लेकिन यह होगा कैसे? मालती राजी हुई है क्या?”

केशव ने प्रसन्न होकर कहा—“यह भार मुझ पर। उसकी तुम चिन्ता मत करो।

थोड़ी देर सोचकर रामकली ने कहा, “तुम कुछ भी क्यों न कहो केशव, इसमें अब भी गड़बड़ है। दुलारी भी राजी न होगी, और मालती भी। मालती तुमको पहले की ही तरह प्यार करती है, लेकिन दुलारी को दुःखित करके वह कभी सुखी न होगी। मेरी राय है कि इस पर भी सोचना चाहिए, सिर्फ मालती की ही बात सोचना ठीक नहीं। मालती दुःखित रहेगी, तो क्या करोगे। इस तरह कितने अपने अपने भाग्य से कष्ट पा रहे हैं!”

थोड़ी देर तक रामकली की ओर देखते रहकर केशव ने कहा, “मालती नीच, धृष्ट, उसके साथ विवाह करने से मैं नीचे चला जाऊँगा। यह बात तुम भी कहती हो भाभी?”

रामकली ने व्यथित होकर कहा, “ऊँच-नीच का विचार मैं नहीं करती भाई, लेकिन हमारा समाज—”

बीच ही में केशव ने कहा, “समाज की बात भैया के ही लिए रहने दो। उस सम्बन्ध में उनसे निबट लूँगा।”

“लेकिन उनकी बात तो सुननी होगी। उनके खिलाफ मैं कैसे जाऊँगी?”

केशव ने कहा, “वे यदि राजी न हुए, तो उनको छोड़ दूँगा, और उनके साथ यदि तुम्हारी शरण भी छोड़नी पड़े, तो कष्ट तो होगा, लेकिन छोड़ दूँगा भाभी!”

इतने में अनन्त भी वही आगये। रामकली ने कातर होकर कहा, “केशव, मालती से विवाह करने की कह रहे हैं।”

अनन्त इस तरह चुप रहा, जैसे उसने कुछ समझा ही न हो।

केशव ने कहा, “काशी के पंडित तक कहते हैं कि इस प्रकार विवाह हो सकता है। उन्होंने सम्मतियाँ दी हैं।”

अनन्त ने कहा—“केशव, पंडितों की बात छोड़ो, यह जो समाज की मूर्ख-मंडली है, इसको यह कौन समझायेगा कि विवाह क्यों न हुआ ?

केशव ने विरक्त होकर कहा, “तो तुम समाज की मूर्ख-मंडली की पूँछ पकड़े चले जाओ, मुझे इन सबमें माथापच्ची पसन्द नहीं।” यह कहकर केशव चलने को उठ खड़ा हुआ।

अनन्त ने उसे रोककर कहा, “केशव, सुनो समाज इतने तिरस्कार की चीज़ नहीं। मालती के लिए कोई कन्या-पाठशाला खुलवा देंगे, वह समाज-सेवा में जीवन बितायेगी। ज़रा ठंडे दिल से सोचो, क्रोध करने से काम न बनेगा।”

थोड़ी देर तक मौन रहने के बाद दृढ़ स्वर में केशव ने कहा, “तो ऐसा ही हो। समाज के क़साईखाने में उसके गले पर छुरी फेर दो। वह नीच, धृणित, अस्पृश्य, फिर भी उसे घर में क्यों रखे हो? उसे घर से निकाल बाहर करो। हम बड़े, हम पवित्र, वह कैसे हमारे साथ इस मकान में रह सकती है? लेकिन भैया, तुमको मैं आज यह बताये देता हूँ कि यह तुम्हारा ऊँच-नीच, जाति-अभिमान, यह छूत-छात, यह समाज के नाम पर क़साईपन ज़्यादा दिन न टिकेंगे। ये सब एक दिन धूल में मिल जायेंगे, और इनको रौंदनेवाले होंगे वे जिन्हें नीच कहकर धिन करते हो। वह दिन अब दूर नहीं।” इतना कहकर केशव कमरे से बाहर चला गया।

अनन्त चुप बैठे रहे और रामकली भी मौन खड़ी रही। अनन्त ने थोड़ी देर के बाद कहा, “अब घर गया। घर में आग लग गई है। अब वचना मुश्किल है।”

रामकली ने उनके कंधे पर हाथ धरकर कहा, “इतने अधीर क्यों होते हो, मर्द होकर!” इतना कहते-कहते उसकी आँखों से दो बूंद आँसू अनन्त के हाथ पर चू पड़े।

(३३)

शीत जाने जाने को था। आज सवेरे से लखनऊ में भी वसन्त के आगमन की सूचना वायु की मस्ती दे रही थी। शाम से पहले से मालती अपने सामने एक डाक से आई चिट्ठी रखे उदास, अन्यमनस्क दृष्टि से बाहर आकाश की ओर देख रही थी। उसने आज रास्ते की तरफ की खिड़कियाँ भी बन्द न की थी। सभी से चाँदनी और किसी किसी से रास्ते की गैस की रोशनी आ रही थी।

चाँदनी से आलोकित आकाश की छाती पर एक छोटी-सी मुसकरानी हुई तारिका को देखते देखते मालती के कपोलों पर अचानक कुछ आँसू ढुलक पड़े। आज सवेरे से जब से यह चिट्ठी मिली, उसका मन, उसके प्राण विह्वल हो गये थे। संकल्प के कठोर बन्धन जैसे अपने आप ही ढीले पड़ रहे थे ! इस चिरपरिचित, चिरप्रिय, शरीर की नस-नस में व्याप्त आश्रय-स्थल से समस्त वासना—कामना की माँकलों को तोड़कर जाना होगा—किसी अज्ञात किसी अनिर्दिष्ट मार्ग पर ! किसी दूर स्थान में बन्धुहीन, स्वजनहीन परदेश में अपरिचित मानव-समाज के बीच जीवन का नया अध्याय आरम्भ करना होगा—कितने दिनों के लिए ? उसका अन्त कहाँ होगा ? उसकी सार्थकता क्या ?

इस कमरे का अणु-परमाणु तक उससे परिचित था। आँखें बन्द करके प्रवेश करने पर भी इस कमरे की हवा सूँघकर वह समझ सकती है; अँधेरे में लेटकर वह अपने पलंग के मृदु सुख-स्पर्श को जान सकती है। कमरे की सारी चीजें उसके काम के लिए तैयार, कुर्सी पर उसके लिए गद्दी लगी है, सोफा उसी के खयाल से नीचे करके बँधा है। इसी कमरे में वह सुख में हँसी है, दुःख में रोई है, रोग में यही पड़ी रही है, आराम में यही विनोद किया है; इस कमरे को उसने प्यार किया है, और इसी कमरे में उसने प्यार करना सीखा है।

आज सहसा इस समस्त को छोड़कर किमी अस्पष्ट, अज्ञात की ओर जाने का आह्वान आया है ! जाना ही होगा, लेकिन कान में जाने कौन कहता है रहो, रहो, प्राणों में जाने कौन कह रहा है मत जाओ, मत जाओ। इस व्यर्थ व्यथित जीवन में आज भी जो एकमात्र कामना की वस्तु होकर रहा

है, वह अपनी व्याकुल भुजाओं को फैलाकर हृदय के बीच बुला रहा है आओ, आओ। तब भी जाना होगा। न जाने से काम न चलेगा। यह कैसा निष्ठुर निर्यातन, कैसी कठोर परीक्षा !

मालती अपने मन में इस रहने और जाने, इस भोग और त्याग के तत्त्व की परीक्षा करने लगी। इस चिर-परिचित और चिर-वंचित को छोड़कर जाने में मन में हाहाकार उठता है, इसको छोड़कर जाना ही तो उसका यथार्थ मूल्य है ! इस त्याग के दुःख से रंजित होकर ही भोग की वस्तु आज इतनी रमणीय हो गई है। विरह की सजल रेखा ही ने मिलन के चित्र को इतना सुन्दर बना दिया है। इसलिए त्याग ही भोग का, विरह ही मिलन का मूल्य है। मालती ने संकल्प किया चाहे कुछ हो वह यह मूल्य चुकायेगी।

इसी बीच दुलारी ने घर में प्रवेश किया। पैरों की आहट सुनकर मालती ने फिरकर देखा, कहा, “आओ भाई, इधर आकर बैठो। कहो अब सिर-दर्द कैसा है ?”

मालती के पास कुर्सी पर बैठते हुए दुलारी ने कहा, “सिर-दर्द अच्छा है। तुम अकेली चुप क्यों बैठी हो मालती ?”

मालती ने जग हँसकर कहा, “तुम आगई, इसलिए अब अकेली नहीं, और अब चुप भी न रहूँगी।

दुलारी ने ज़रा गर्दन टेढ़ी करके कहा, “एक बात पूछनी है, अगर सच बताओ ?”

“क्या बात ?”

“तुमने अपने जीवन की सबसे बड़ी बात मुझसे छिपा रखी थी क्यों ?”

थोड़ी देर चुप रहकर मालती ने कहा, “तुमसे जब परिचय हुआ, तो वह जीवन की सबसे बड़ी बात भयंकर हो गई थी।”

दुलारी ने कहा, “तब भी तुमने वह दुःख की बात मुझसे कही क्यों नहीं ? यही समझा मेरे हृदय नहीं कि तुम्हारे दुःख का अनुभव करूँ।”

मालती ने ज़रा उत्तेजित होकर कहा, “यह बात नहीं दुलारी। दुःख का तो आज असल से सूद बहुत बढ़ गया है, और इसमें से तुमको

कुछ दूँगी, लेकिन आज नहीं। आज तो तुम केशव भैया की दूती बनकर आई हो।”

मन में विस्मित होकर दुलारी ने कहा, “चाहे स्वेच्छा से आई हूँ, या दूती बनकर, लेकिन तुम मेरे प्रेम पर सन्देह तो न करो मालती, आज—”

मालती ने बात पूरी होने के पहले ही कहा, “इसमें सन्देह की क्या बात ! मैं तुम्हें पहचानती हूँ दुलारी। मैं सब समझती हूँ।”

“मालती !”

“क्या बोलो ?”

“मेरी एक बात मानोगी ?”

“नहीं।”

विस्मित होकर दुलारी ने कहा, “बिना सुने ही नहीं ?”

“सुनी नहीं, लेकिन समझती हूँ। लड़कपन मत करो दुलारी ? तुम्हारी जैसी पगली तो मैंने देखी नहीं !”

“देखा हो या नहीं, लेकिन यह बात तुम्हें माननी ही होगी, नहीं मैं बहुत दुःखित हूँगी।”

मालती ने मुसकराकर कहा, “और मानने पर बहुत सुखी होगी ? बता सच बता ?”

दुलारी ने थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद कहा, “मालूम होता है हूँगी। तुम्हारे प्रसन्न होने से हूँगी।”

मालती ने हँसकर कहा, “और तुम्हारे सुखी होने पर मुझे सुखी होने का अधिकार नहीं है ?”

थोड़ा सोचकर दुलारी ने कहा, “है क्यों नहीं। लेकिन हमें अपने सुख को नहीं देखना होगा मालती ! हमें देखना होगा कि वे किस तरह सुखी होंगे !”

“वे कैसे सुखी होंगे, यह किस तरह मालूम हुआ दुलारी ?”

मालती के इस प्रश्न से दुलारी संकट में पड़ गई—अब तो वह पकड़ गई। और उपाय न देखकर उसने कहा—“वह मैं जानती हूँ। वे कैसे सुखी होंगे, स्वयं उन्होंने बतलाया।”

“उन्होंने बताया? ओह ! कैसी निष्ठुरता!” मालती ऐसा नटना न नाट रही थी, लेकिन अकस्मात् बात के जोर में मुँह से निकल गया।

मालती की बात सुनकर दुलारी ने क्षुब्ध होकर कहा, “ऐसी बात मत कहो मालती। वे निष्ठुर नहीं। कितने कोमल हृदय हैं। तुम्हारे लिए वे कितना कष्ट पा रहे हैं—देखकर आँखों में आँसू आ जाते हैं!”

“और तुमको जिस तरह दुःख देते हैं, उससे कड़ी बात मुँह से निकल पड़ती है।”

“वे मुझे क्यों कष्ट दे रहे हैं। मेरे लिए उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता। वे तो मुझे—” आगे दुलारी का गला रुँध गया।

थोड़ी देर रुककर मालती ने कहा, “अच्छा माना वे तुम्हें कभी प्यार न करते थे। लेकिन तुम दुलारी?”

“मुझे यदि तुम्हारी बात मालूम होती मालती, तो—” फिर उसका गला रुँध गया।

“तो तुम केशव भैया को प्यार न करतीं। लेकिन जब प्यार कर चुकी हो तो?” अचानक एक सन्देह हुआ, और मालती ने पुकारा, “दुलारी?”

उत्तर न पाकर मालती ने बिजली जला दी। देखा दुलारी रो रही थी।

“तुम रो रही हो दुलारी?”

“तुम रुलाओगी, तो रोऊँगी नहीं।”

मालती ने मुसकराकर कहा, “यह खूब, जिसके लिए चोरी करें, वही कहे चोर!”

दुलारी ने कहा, “यह बात नहीं। तुम सहानुभूति दिखाती हो, उससे मुझे रुआस लगती है। यदि तुम सच में मुझे प्यार करती हो, तो वही करो जिससे मैं सुखी हूँ।”

“इतना मैं समझती हूँ कि तुम किस तरह सुखी होगी।”

दुलारी ने जल्दी से कुर्सी से उठकर मालती के दोनों हाथ पकड़ लिये, “मैं सुखी हूँगी, विश्वास करो हूँगी। तुम केशव भैया से विवाह करो, तो मैं सुखी हूँगी, नहीं तो नहीं। और सुनो मैं रोती थी यह उनसे न

कहना। मैंने बहुत बेजा किया। अच्छा मैं अब जाती हूँ। सिर में बहुत दर्द हो रहा है।”

चलने को तैयार दुलारी को अपनी भुजाओं में लपेटकर मालती ने कहा, “एक बात सुन लो दुलारी। केशव भैया के साथ तुम्हारा विवाह न होने पर तुम कृष्णचन्द्र के साथ विवाह करोगी या नहीं?”

मालती की ओर करुण-दृष्टि से निहार, कर छुड़ाने की चेष्टा करते हुए दुलारी ने कहा, “बाद की बात बाद में।”

और जोर से पकड़कर मालती ने कहा—“ना, वह पहले की बात है। बिना बोले मैं छोड़ूँगी नहीं।”

दुलारी ने मालती के मुँह पर दृष्टि गड़ाकर ज़रा ठिठकते हुए कहा, “देखो मालती, मुझे जीवन और विवाह दोनों से घृणा हो गई है। मैंने तो संकल्प किया है जीवन भर ऐसे ही रहूँगी। मेरे और कौन है।”

फिर दुलारी की आँखों से आँसू भरने लगे, और बड़ी देर तक दोनों भुजपाश में बँधी रोती रहीं।

उसी रात कुछ देर के बाद मालती ने केशव के कमरे के दरवाजे पर दस्तक दिया, “केशव भैया!”

दरवाज़ा खोलकर केशव ने मालती को देखकर कहा—“भीतर आओगी?”

मालती कुछ उत्तर न देकर भीतर चली गई, और दरवाज़ा बन्द कर दिया। केशव के कातर मुख की ओर देखकर मालती ने कहा, “भैया तुम्हारे पास दो प्रार्थनायें करने आई हूँ, और ये दोनों मेरी अन्तिम प्रार्थनायें होंगी।”

केशव के ओठों पर हँसी आगई। उसने कहा, “तो उन्हें मेरे अन्तिम दिन के लिए रख दो। अभी तो कुछ दिन और जीना है।”

केशव की बात सुनकर दुःखित होकर मालती ने कहा, “लड़कियों को ये बातें सुनकर दुःख होता है, इसी से ऐसी बातें कहते हो? आज तुम्हें मेरी बातें माननी होंगी!”

“क्या बातें हैं? ज़रा सुनूँ?”

मालती ने थोड़ा ठिठकते हुए कहा—“पहली बात यह कि तुमको

दुलारी से विवाह करना होगा। दूसरी बात, कल सवेरे मुझे विदा करना होगा।”

थोड़ी देर के लिए, केशव का मुँह सूख गया। लेकिन फिर संयत होकर कहा, “विवाह की बात तो फिर से। लेकिन यह विदा कैसी? क्या सदा के लिए?”

मालती की आँखें सजल हो गईं। कहा, “हो सकता है।”

केशव अधीर हो उठा, कहा, “जरा साफ़ साफ़ कहो। समझ नहीं पा रहा!”

मालती ने कुछ न कहकर चिट्ठी केशव के हाथ में दे दी। केशव ने चिट्ठी पढ़कर उसे इधर-उधर उलट-पलट कर देखा। फिर सूखे स्वर में कहा, “राधाकान्त दीक्षित कौन? कृष्णचन्द्र के बहनोई?”

मालती ने कहा—“हाँ।”

थोड़ी देर तक चुप रहकर फिर मालती को सिर से पैर तक देखकर कहा, “तो अब मैं खड़ा हूँ बम्बई की कन्या-पाठशाला की मुख्य अध्यापिका के साथ, जिसका एक सौ रुपया वेतन, स्वाधीन, स्वतंत्र, बन्धन-मुक्त!”

मालती चुप थी। आज तक जो केशव अपने प्रेम को संयम से बाँधकर रखता था, वह आज विद्रोही हो उठा। केशव ने उत्तेजित होकर कहा—“खूब मालती, खूब! उस दिन चक्रवर्द्धि-सहित ऋण की बात कही थी, सो आज पूरा चुका दिया! बिलकुल कौड़ी-गण्डा करके!”

मजल नयन मालती ने कातर होकर कहा, “उस दिन बड़ी भूल हुई थी भैया! तुम्हारा ऋण तो जीवन में न चुकेगा।

केशव ने तीव्र कटाक्ष के साथ कहा, “वह तो देख रहा हूँ। इसी से दीवालिया होकर महाजन के भय से देश छोड़ देने की तैयारी है!”

इस दुःख में भी मालती के ओठों पर हँसी आ गई। उसने कहा, “महाजन जो सदा गिरफ्तारी का भय दिखाता है।”

केशव के मुख पर विद्रूप हँसी दिखलाई पड़ी। कहा, “तो इसी से दूसरे महाजन के हाथ अपने को समर्पित करती हो। वह भी साथ ही जायगा?”

“कौन?” विस्मित होकर मालती ने पूछा।

“तुम्हारा कुटिल परामर्शदाता धोखेबाज़ कृष्णचन्द्र।”

मालती का मुँह कठोर और लाल हो गया। दृढ़ स्वर में कहा, “ना, ना, केशव भैया ! कृष्णा मेरे गुप्त परामर्शदाता भी नहीं, विश्वास-घातक भी नहीं। वे तो मुझे समझाते थे, लेकिन मैंने ही अखबार में विज्ञापन पढ़कर अर्जी दी, लाचार होकर उन्होंने अपने बहनोई को एक परिचय-पत्र लिख दिया, मैंने मना किया था इसी से तुमसे उन्होंने बताया नहीं।”

केशव की आँखों से अंगारे निकलने लगे। उसने कहा, “लेकिन कृष्णचन्द्र तुम्हारा परिचय क्या जाने। मुझसे लिखाना था, लिख देता, एक पाषाणी, इसे ज़रूर अपनी पाठशाला में रखिए, तुम्हारी लड़कियाँ पढ़कर कृतार्थ हो जायँगी !”

केशव की इन स्नेहभरी झिड़कियों और उलाहनों से मालती की दृढ़ता की भित्ति गिरने गिरने हो रही थी, फिर भी उसने ज़रा संभलकर कहा, “भैया, मैं पाषाणी हूँ, लेकिन तुम निर्दय होकर इस पाषाण को पिघलाओ ना। मेरा रास्ता न रोको भैया !”

केशव का सारा शरीर काँपने लगा। जाने कहाँ का पागलपन उसके सिर पर सवार हो गया। उसने आलमारी से कपड़े में लपेटे एक फ़ोटो को निकालकर मालती के सामने लाकर रक्खा, और कहा, “मालती, मैं रास्ता रोकता नहीं। मुझे तुम्हारी ज़रूरत नहीं। तुम जा सकती हो। मेरे लिए—मेरे लिए यही बहुत है।” और इतना कहकर उसने फ़ोटो को ओठों से लगा लिया। मालती ने सिर्फ़ इतना देखा कि फ़ोटो उसका था। इसके आगे वह संज्ञाशून्य-सी हो गई। उसे मूर्च्छा-सी आई, और वह बिछौने पर लुढ़क गई।

अचानक केशव की मुद्रा भंग हुई। मालती को इस तरह लुढ़कती देखकर उसने उसे अपनी भुजाओं में भर कर ठीक से लिटा दिया, और पानी लेकर उसके मुँह पर छीटे देने लगा। इतने में बाहर किसी के पैरों की आहट पाकर उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया। और बत्ती बुझा दी कि कोई मालती को इस दशा में न देख ले। लेकिन एक क्षण बाद “केशव है क्या ?” कहता अनन्त कमरे में दाखिल हुआ। उसके पीछे थी एक स्त्री भाभी रामकली।

केशव ने जल्दी जल्दी आकर दरवाजे के सामने खड़े होकर उनका रास्ता रोकने की चेष्टा की, लेकिन तब तक दोनों कमरे के भीतर आ चुके थे।

उद्विग्न होकर अनन्त ने कहा, "केशव, मालती का पता नहीं। उसका कमरा खुला है। सन्दूक खुली पड़ी है। लेकिन वह नहीं है।"

भय से काँपते स्वर में रामकली ने कहा, "क्या होगा, देवर?"

थोड़ी देर सोचकर केशव ने कहा, "कुछ चिन्ता नहीं। वह इसी मकान में है। तुम आगे चलो। मैं आता हूँ।"

कमरे में प्रकाश न था, फिर भी खिड़की के रास्ते बाहर से प्रकाश आता था, और चीजें साफ़ न दिखने पर भी उनका अस्पष्ट आकार दिखाई पड़ता था।

रामकली ने व्याकुल होकर कहा, "लेकिन केशव, वह कहीं नहीं है। मैं सारा घर देख चुकी।"

केशव के कुछ कहने के पहले ही एक लम्बी सांस छोड़कर मालती चारपाई पर उठ बैठी। स्पष्ट न दिखने पर भी इतना जान पड़ता था कि कोई आदमी है।

"चारपाई पर कौन है?" कहकर अनन्त ने आगे बढ़कर बत्ती जला दी।

सारे कमरे में प्रकाश फैल गया। सभय नेत्रों को फाड़कर रामकली ने देखा, केशव की चारपाई पर मालती! अनन्त, केशव और रामकली झुप खड़े रह गये। मालती ने पहले सबकी ओर आश्चर्य से देखा, फिर केशव की चारपाई की ओर देखा, और कपड़े सँभालकर ज़मीन पर खड़ी हो गई।

यह सब देखकर घृणा और क्रोध के स्वर में अनन्त ने कहा, "अब तो निश्चित हो गई रामकली? अब चल! मैंने तो कहा था भाग लग गई है घर में, अब बचना मुश्किल है!"

रामकली में बोलने की शक्ति न थी। वह अशक्त-सी एक कुर्सी पर बैठ गई।

इस बार केशव बोला । तेज स्वर में कहा, “कैसी आग लगी है भैया ? किसने आग लगाई है ?”

अनन्त धीरज धारण करने की बहुत चेष्टा कर रहा था, लेकिन केशव की बात सुनकर धीरज छूट गया । उसने कहा, “तुम्हारे पाप से आग लगी है, और किससे ! मैं तुमको अब तक पहचान न सका !” इसके बाद मालती की ओर मुंह फेरकर कहा, “मालती, मुझे बहुत दुःख हुआ । और क्या कहूँ ।”

केशव ने पत्थर की तरह खड़ी मालती की ओर देखकर कहा, “अगर इस घर में और रहने की इच्छा हो, तो सफाई दे, माफ़ी माँग । और नहीं तो हज़रतगंजवाला मकान है तेरे लिए । वहीं चल । अब इस घर में एक क्षण भी रहना पाप है !”

मालती का मानो किसी ने सहसा मुंह खोल दिया, उसने कहा, “अभी चलो !”

प्रसन्न होकर केशव ने कहा, “तो जल्दी से अपनी चीजें ठीक कर लो । मैं भी दो-चार चीजें ले लूँ ।”

अनन्त ने मालती से कहा, “मालती, तुम्हें यदि कुछ कहना हो, तो कहो । मैं सुनने को तैयार हूँ ।”

मालती ने कहा—“मैं सिर्फ़ यही कहना चाहती हूँ कि इतने दिनों तक आपने मुझ पर जितना उपकार किया है, मैं उतना ही अपकार करके इस घर से जा रही हूँ । यदि सम्भव हो, तो क्षमा कर दीजिएगा । लेकिन मैं जो जा रही हूँ यह आज की घटना से दुःखित होकर नहीं । यह आप बाद में जान जायेंगे ।”

छलछलाती आँखों के आँसू किसी तरह रोककर मालती ने रामकली से भेंट की ।

(३४)

दूसरे दिन सवेरे रामकली अपने कमरे में चारपाई पर बैठी थी । वह खिड़की के बाहर शान्त सड़क की ओर निहार रही थी, परन्तु उसका मन केशव और मालती पर अटका था । मालती के साथ इतने दिन

बीते, और आज मालती चली गई, और वह भी इस तरह ! केशव भी साथ छोड़ गया। मालती के मन में जहाँ कल रात की घटना को याद कर घृणा पैदा होती थी, वही उसे सन्देह भी होता था, अनुमान शायद गलत था। अनन्त, केशव मालती के चले जाने पर इस प्रकार का सन्देह प्रकट कर चुका था।

जब रामकली इस प्रकार विचारमग्न थी, एक टैक्सी आकर दरवाज पर लगी। रामकली ने उत्सुकतापूर्वक देखा। टैक्सी से कृष्णचन्द्र उतरा और जल्दी जल्दी घर में प्रवेश किया। कृष्णचन्द्र से केशव और मालती का हाल मालूम होगा, यह सोचकर रामकली व्यग्र हो उठी। जल्दी जल्दी कमरे से निकलकर सीढ़ियों पर आ खड़ी हुई।

कृष्णचन्द्र ने आकर पूछा, “भाभी, दुलारी अभी जागी, या नहीं। उससे कुछ जरूरी बातें करनी थीं। तुम जरा देखो !”

रामकली दुलारी के कमरे में गई, दुलारी अभी जगी थी, और अपने कमरे की खिड़की के पास अलसाई-सी खड़ी थी। रामकली ने हाथ के इशारे से कृष्णचन्द्र को बुलाया।

कृष्णचन्द्र ने दुलारी के घर में आकर रामकली से कहा—“भाभी, तुम जरा देर के लिए बाहर चली जाओ। मुझे एकान्त में कुछ बातें करनी हैं।” रामकली कमरे से बाहर चली गई। कृष्णचन्द्र ने एक लिफाफा निकालकर दिया, और कहा, “इसको आप पढ़ें।”

दुलारी ने लिफाफा फाड़कर देखा मालती का पत्र। लिखा था, “प्रिय दुलारी, तुम जब यह पत्र पाओगी, तब तक मैं बम्बई को रवाना हो जाऊँगी। भगवान् ने इस अभागिन को बिलकुल भुला नहीं दिया। कुछ व्यवस्था की है। बम्बई में कन्या-पाठशाला की प्रधान अध्यापिका का काम मिला है।

जाने के पहले तुमको जल्दी जल्दी चिट्ठी लिखी है, दो कारणों से, एक तो कल जाते समय तुमसे मिल न सकी, तुम सो गई थीं। दूसरे, तुमसे एक बिनती करनी है।

कल रात में तुमसे बातचीत करने के बाद गई केशव भैया से बिदा लेने। वहाँ बातचीत करते करते मेरी तबीयत न जाने कैसे खराब हो गई।

में बेहोश हो गई। और जब होश आया, तो देखती हूँ जीजा जी, दीदी और केशव ! केशव भैया ने बत्ती इसलिए बुझा दी थी कि मुझे इस अवस्था में कोई देख न ले। यह उनकी भूल थी। और मुझे इस प्रकार देखकर जीजा जी ने जाने क्या समझा। मालूम नहीं। दीदी ने भी वैसा ही समझा या और कुछ। केशव का स्वभाव तो तुम भी बहुत कुछ जानती हो। उनसे यह कहाँ हो सकता था कि वे सफ़ाई देते। और मेरे कुछ न कहने के दो कारण थे। ज़रा सोचो दुलारी, जब परोसी थाली को मैंने पास से हटा दिया, तो मैं उसी के लिए केशव भैया के घर चोरी करने जाऊँगी। दूसरे, मुझे बम्बई जाना था, और केशव भैया से मिलने के बाद दीदी और जीजा जी से बिदा माँगती। दीदी किसी भी हालत में राज़ी न होतीं। इसलिए मैंने इसे अच्छा अवसर सोचा। मानो भगवान् ने यह मौका दिया।

अब तुमसे एक प्रार्थना है। मैं जो आग लगाकर चल रही हूँ, तुम उसे बुझाने की चेष्टा करो। मैंने केशव से कहा है कि यदि वे तुमसे विवाह करें, तो मैं बम्बई से लौट आ सकती हूँ, और उस दशा में तुम लोगों के साथ रहूँगी। अब तुम अगर मुझे चाहती हो, अगर चाहती हो दुलारी बहन कि मैं फिर लखनऊ आकर तुम्हारे साथ रहूँ, तो यह अनुरोध मानो। केशव भैया मुझे भेजने बम्बई जाने को कहते हैं। लेकिन मैं कम से कम इस गाड़ी से उन्हें नहीं ले जाऊँगी। और तुम ऐसी व्यवस्था करो कि फिर वे न आयें, और मैं भी वापस आऊँ।

बहन, तुम्हें यह चिट्ठी केशव भैया से मिलेगी, तुम चिट्ठी को पढ़कर काड़ डालना, जिससे दीदी या जीजा जी को न मिले। वे नाहक दुःखित होंगे। प्यार, आशीष। तुम्हारी मालती।”

पत्र पढ़ने के बाद दुलारी ने पूछा, “और यह पत्र आपको कैसे मिला ?”

“पत्र मुझे केशव ने दिया। उसने कहा दुलारी से मालती के नाम एक चिट्ठी लिखा लाओ कि वह मुझसे विवाह करने को राज़ी है, तो मैं मालती को वापस ले आऊँगा। जल्दी से लिख दीजिए। आठ बजे गाड़ी छूटती है, साढ़े छः बजे बजे हैं।”

दुलारी ने कुछ भी उत्तर न दिया। केशव के साथ उसके विवाह की व्यवस्था रास्ते में बैठकर पैसा माँगने के समान थी। उसे इससे थोड़ी भी प्रसन्नता न हुई।

दुलारी को चुप देखकर कृष्णचन्द्र ने कहा, “तो चिट्ठी लिख दीजिए न।”

“मैं ऐसा हर्गिज न लिखूंगी।”

दुलारी की यह बात सुनकर कृष्णचन्द्र पहले तो चुप रहा, फिर कहा, “लिख देना तो अच्छा होता!”

आज दुलारी के मन में विद्रोह जग उठा था, इसलिए शब्दों की कमी न थी। कहा, “किसके लिए अच्छा होता?”

उत्तर देने ही वाला था कि कृष्णचन्द्र को एक बात सूझ पड़ी। उसने कहा, “देखिए इस हिसाब-किताब से मेरा कुछ भी सरोकार नहीं। मेरी चिन्ता न करें।”

दुलारी ने तुरन्त कहा, “आपका तो कुछ सरोकार नहीं, लेकिन मेरा अपना तो है। मेरी भी तो इच्छा-अनिच्छा, विचार-विवेक है।”

यह बात सुनकर कृष्णचन्द्र का सन्देह और बढ़ गया। उसने कहा, “ऐसे समय में बात ज़रा साफ़ कहना ठीक होता है। मैंने केशव से यह बात सुनी है कि आपने मालती से कहा है कि आप अविवाहित रहेंगी। आखिर ऐसा क्यों? मैं यदि इसके लिए किसी भी तरह ज़िम्मेदार हूँ, तो सच में मुझे बहुत दुःख होगा। मैंने तो उस दिन कहा था हम पुरुष, हमारा काम है ऐसा काम करें जिससे तुम सब प्रसन्न रहो। और मेरी चिन्ता न करो। पड़ोस में एक पाँड़े हैं। उनकी लड़की कुतरी है, इसलिए कोई विवाह नहीं करता। मैं उससे विवाह कर लूँगा। एक ब्राह्मण का भला होगा।”

खिड़की और खोल देने के वहाने दुलारी उठी, और आँसुओं को चुपके से पोछकर आई। कहा, “आप तो पाँड़े की लड़की से विवाह कर लेंगे, और मालती का क्या होगा?”

“मालती तुम लोगों के साथ रहेगी। या, एक बात हो सकती है, मैं यदि मालती से विवाह करूँ?”

दुलारी के ओठों पर बहुत हलकी हँसी झलक पड़ी। उसने कहा, “मालती राजी होगी?”

“तुम राजी करो। जिस तरह वह तुम्हें केशव से विवाह करने को कहती है, तुम भी कहो।”

“मालती अनुचित करती है, लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सकती।”

कृष्णचन्द्र ने घड़ी की ओर देखकर कहा, “तो क्या और कोई रास्ता नहीं? देखिए सात बज गये।”

दुलारी ने कहा—“अच्छा मुझे स्टेशन ले चलिए। मैं मालती को केशव के साथ विवाह करने को राजी करूँगी।”

“कर सकोगी?”

“कर सकूँगी।”

“और आप क्या करेगी?”

इस बार दुलारी के मुख पर रक्तिमा आगई। वह आँखें नीची किये चुप खड़ी रही।

कृष्णचन्द्र ने व्यग्र होकर पूछा, “बताइए, बताइए। आप क्या करेगी?”

“दुलारी ने गर्दन झुकाये हुए कम्पित स्वर में कहा, “आप जो कहेंगे।”

“मान लीजिए मैं कहूँ, मान लीजिए मैं अनुरोध करूँ—”

कृष्णचन्द्र की बात पूरी न होने पाई। दुलारी ने कहा, “मैं राजी हूँगी।”

“सुखी होंगी?”

“हूँगी।”

“सिर्फ इसलिए कि केशव और मालती सुखी होंगे?”

“नहीं सिर्फ इसलिए नहीं।”

“मैं सुखी हूँगा, इसलिए?”

मतशिर दुलारी ने कहा, “सिर्फ इसलिए भी नहीं।”

“दुलारी!”

दुलारी ने झुकी गर्दन कृष्णचन्द्र की ओर उठाई।

“मुझे तो विश्वास नहीं होता।”

“इसमें ज़रा भी असत्य नहीं।” फिर घड़ी की ओर देखकर कहा, “सवा सात बज रहे हैं। आप बैठिए, मैं भाभी से मिल लूँ।” कहकर दुलारी जल्दी जल्दी रामकली के कमरे की ओर गई।

(३५)

कृष्णचन्द्र अकेला बैठा सोच रहा था, क्या करने आया था, और क्या हो गया। उस दिन जिस तरह कृष्णचन्द्र दुःख-विह्वल था, आज उसी तरह सुख से विभोर। जब कृष्णचन्द्र इस प्रकार सोच-विचार रहा था, दुलारी ने रामकली के साथ प्रवेश किया।

“आशीर्वाद कृष्णा। तुम और दुलारी सुखी हो। यह बेचारी, मैं तो इसके सोच में रात-दिन मरी जा रही थी।”

कृष्णचन्द्र ने चरणस्पर्श करते हुए कहा, “भाभी बाकी दुःख भी दूर हो जायेंगे। भैया ने क्या सब सुना है?”

“हाँ, सब सुना है। वे आते हैं। लेकिन कृष्णा दोनों हैं बने बड़ी सख्त धात के !”

कृष्णचन्द्र ने उत्साह से सिर हिलाते हुए कहा, “सब ठीक हो जायगा, भाभी। हमारे साथ भी तो सख्त धात की कम से कम एक है !”

रामकली ने मुसकराते हुए कहा “अब सख्त कहाँ। अब तो बिलकुल नरम।”

कृष्णचन्द्र ने कहा, “लेकिन कितने कष्ट के बाद !”

इतने में अनन्त भी आगया। सब स्टेशन को चल पड़े। सीढ़ियों पर उतरते हुए अनन्त ने कहा, “कल रात जो अनर्थ हो गया, वह इतनी आसानी से मिट जायगा, ऐसा खयाल न था कृष्णा। रात जो भूल हुई, उससे भी मंगल ही हुआ, नहीं यह भंभटों का जाल न जाने कितने दिन और यों ही तना रहता। बहुत कष्ट सहकर मैंने समझा समाज और शास्त्र सबसे ऊपर है मानव !”

बाहर निकलकर टैंक्सी में सब बैठे और स्टेशन को चल पड़े। बैठे तो थे सब एक पास, लेकिन मन सबके अलग-अलग। अनन्त और रामकली सोच रहे थे किस तरह केशव और मालती को घर लौट चलने को कहेंगे।

रात में जो भ्रम हुआ, उस पर किस प्रकार दुःख प्रकट करेंगे। और दुलारी तथा कृष्णचन्द्र सोच रहे थे अपने इस नये जीवन के सम्बन्ध में। दुलारी सोच रही थी किस प्रकार वह दो पुरुषों से तिरस्कृत हुई। लेकिन आज वह दीन नहीं, उपेक्षित नहीं। आज है वह धन्य ! और कृष्णचन्द्र आनन्द-विभोर था अपनी प्रिय वस्तु के मिल जाने से। गाड़ी तेजी से सन सन करती जा रही थी। रास्ते में एक तांगेवाले को हार्न देकर डाइवर ने हटाया। गाड़ी आगे बढ़ी, और स्टेशन के भीतर आकर लगी।

सब लोग उतर पड़े। अनन्त ने कहा, “मैं चलता हूँ। तुम इन सबको लेकर आओ।” आगे रेलवे क्लाक पर नज़र पड़ी, घड़ी में आठ बजने में दो मिनट। अनन्त का सिर चक्कर करने लगा। जल्दी जल्दी पुल की तरफ़ लपका। बेतहाशा दौड़कर अनन्त जल्दी जल्दी दा नम्बर क प्लेटफार्म पर आया। अभी उसने अपनी घबराई-सी दृष्टि इधर-उधर दौड़ाई ही थी कि गाड़ी ने सीटी दी। अनन्त तेजी से गाड़ी के एक सिरे से “केशव, केशव” चिल्लाता दौड़ने लगा। गाड़ी ने भुक् भुक् की आवाज़ की, और पहिए घूमने लगे। ज्यों ज्यों पहिए घूमते थे, अनन्त के पैर और तेज़ पड़ते जाते थे। उसने थोड़ी दूर के दूसरे दर्जों के डिब्बे में केशव को खिड़की के पास खड़े देखा। जोर से चिल्लाया, “केशव, जंजीर खींच लो। उतर आओ। केशव।”

केशव और मालती की दृष्टि दौड़ते हुए व्यक्ति पर पड़ी, और ऐसा जान पड़ा, जैसे दोनों ने हाथ उठाकर प्रणाम किया। गाड़ी की रफ़ताह और तेज़ हो गई, और देखते देखते गाड़ी स्टेशन से बाहर हो गई। चमकती रह गई खाली पटरियाँ। अनन्त शून्य-सा खड़ा रह गया। तब तक कृष्णचन्द्र भी सबको लेकर आगया। अपनी घड़ी में देखकर कहा, “अभी तो दो मिनट बाक़ी हैं। घड़ी स्लो है जान पड़ता है।”

रामकली की आँखों से आँसू बह रहे थे। मुँह से एक भी शब्द न निकला।

